देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642
Sept. 2025
Vol.-22, Issue-3

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

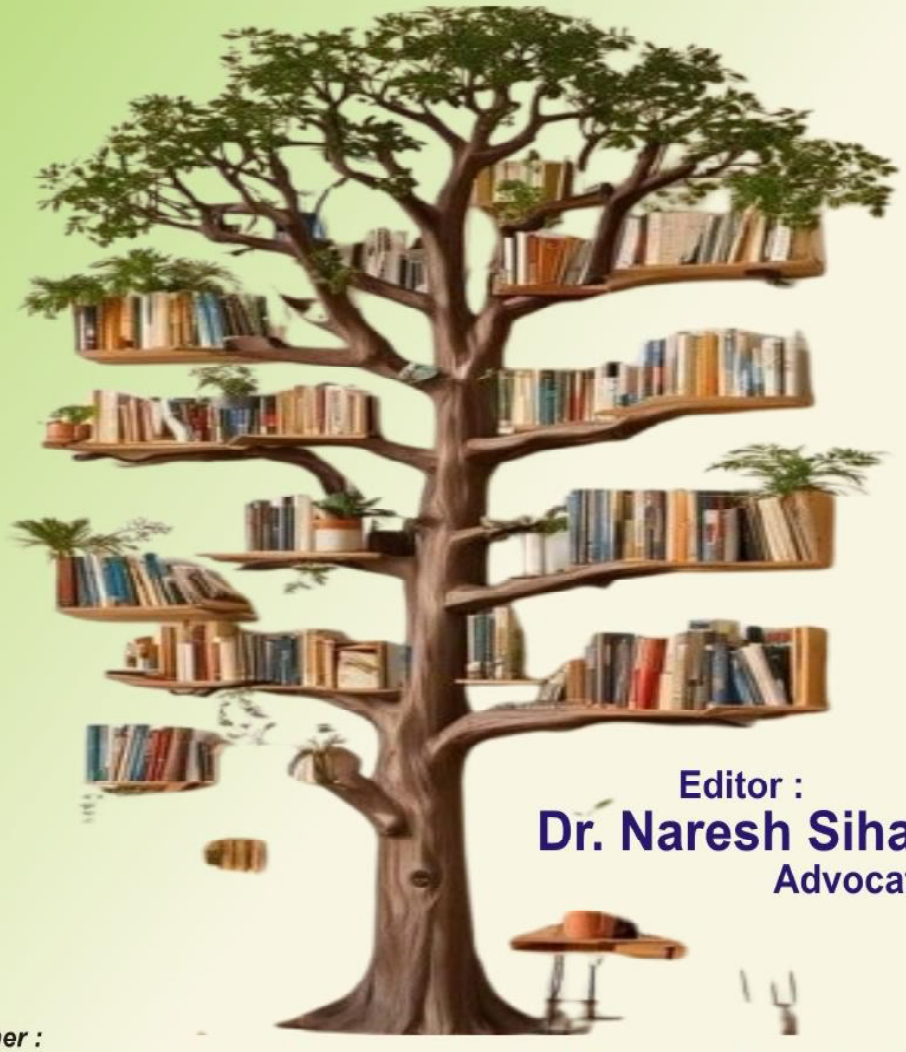

Editor :
Dr. Naresh Sihag
Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 22 **ISSUE-3(1)** **(सितम्बर 2025)** **ISSN : 2395-7115**

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

प्रो. राधेमोहन राय
पूर्व उप प्राचार्य,
राजकीय स्नातकोत्तर महा.,
अलवर, राजस्थान।

डॉ. राजेन्द्र गोदारा
परीक्षा नियंत्रक,
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

माई मनीषा महंत
किन्नर अधिकार ट्रस्ट
भूना, जिला कैथल, हरियाणा

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि. रोहतक

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. विनोद कुमार
हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल
यूनिवर्सिटी, पंजाब

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. राजकुमारी शर्मा
नेपाल

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. पायल लिल्हारे
अमरशहीद चंद्रेशेखर आजाद
शा.स्ना.महा. निवाड़ी, मध्यप्रदेश

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. शबाना हबीब
त्रिवन्तपुरम, केरल

डॉ. शिवकरण निमल
राजस्थान

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
वाराणसी

डॉ. मानसिंह दहिया
हरियाणा

डॉ. नीलम आर्या
उत्तर प्रदेश

डॉ. रवि सुण्डयाल
जम्मू कश्मीर

प्रो. नरेन्द्र सोनी
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. रोहतास
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

डॉ. इस्पाक अली
प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

प्रो. रेखा रानी
गवर्नमेंट कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

डॉ. संजीव कुमार विश्वकर्मा
शासकीय महाविद्यालय,
लवकुश नगर, मध्य प्रदेश

डॉ. परमानन्द त्रिपाठी
एचओडी एजुकेशन, एल.एन.डी.
कालेज, मोतिहारी, बिहार

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

अनुक्रमाणिका – सितम्बर 2025

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. नरेश सिहाग	09–09
2.	अस्तित्ववाद और आधुनिक मानव जीवन की चुनौतियां	डॉ. झंवर राम	10–12
3.	ग्रामीण समाज में सामाजिक परिवर्तन : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन	संदीप पारीक	13–18
4.	भोजपुरी लोकगीतों में भारतीय जीवन	प्रकाश कुमार त्रिपाठी	19–24
5.	वर्तमान संदर्भ में स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दृष्टिकोण की सार्थकता	ममता सुशील, डॉ. एकता भारद्वाज	25–31
6.	Feminist perspectives in the works of Alice Walker	Priya, Dr. Farah Naz Farrukh	32-34
7.	मोहन राकेश का व्यक्तित्व	हेमन्त कुमार, डॉ. रचना शर्मा	35–40
8.	दक्षिण भारत की कोरागा जनजाति : एक अंतदृष्टि अध्ययन	नयना जैन, डॉ० सुमन कौशिक	41–45
9.	जनवादी प्रगतिवादी चेतना	तपन कुमार घासी	46–47
10.	Application of Geographic Information System (GIS) in Disaster Management and Emergency Response	Nagendra Kumar Mahto	48-52
11.	किशोरावस्था में व्यक्तित्व विकास : एक अध्ययन	Sandeep Kumar Bharti	53-57
12.	किशोरावस्था में माता-पिता के संबंध और संवेगात्मक बुद्धि का अध्ययन	Sandeep Kumar Bharti	58-61
13.	Effect of Technology Integrated Module on Technological Pedagogical Content Knowledge of Pre-Service Teachers	Amita Kumari, Dr. Sunita Sarswat	62-69
14.	उपमा मुक्तिबोधस्य	डॉ. दीपक त्रिपाठी	70–77
15.	कृष्णा सोबती के उपन्यासों में संस्कृति	चन्दन कुमार	78–80
16.	The Digital Scaffolding : A Psycho-Educational and Technical Analysis of Early-Age AI/ML Pedagogy and its Impact on Holistic Child Development	Dr. Anuradha Aggarwal	81-92
17.	प्रकृति के तीन गुणों की वैज्ञानिकता	दिलीप कुमार बागरे, डॉ. मुन्ना लाल चौधरी	93–97
18.	पञ्चतत्वों की साधना-मानव के व्यावहारिक जीवन में	दिलीप कुमार बागरे, डॉ. मुन्ना लाल चौधरी	98–105
19.	माध्यमिक स्तर के बच्चों में भावात्मक बुद्धि का प्रभाव	डॉ. हेमा तिवारी	106–117
20.	सरगरा समाज के लोकगीतों में संस्कृति और समाज	भारती पंवार, डॉ. मरजीना	118–122

21.	गीतांजलि श्री का कथा साहित्य : 'बेलपत्र' कहानी के विशेष संदर्भ में	कुमारी बबिता यादव, डॉ0 पुष्पा कुमारी	123–127
22.	मंजूर एहतेशाम के कथा साहित्य में धार्मिकता और पिछड़ापन : मध्य वर्ग के विशेष संदर्भ में	शमीम. पी	128–134
23.	स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण व जीवनशैली का तुलनात्मक अध्ययन	रवि वर्मा, डॉ. संगीता अग्रवाल	135–139
24.	विनय कुमार के जीवनवृत्तात्मक उपन्यासों का साहित्यिक उत्कृष्टता की दृष्टि से मूल्यांकन	डॉ. राजकुमार	140–145
25.	**The Significance of India's Income Tax Act, 2025 : An In-Depth Examination**	**Dr. Anish Yadav**	**146-150**
26.	बाल पत्रिकाओं के प्रति भागलपुर जिले के प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षकों की रूचि का अध्ययन	डॉ. भावना बरनवाल	151–155
27.	उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या प्रवृत्ति के कारण एवं निरोधक रणनीतियाँ	डॉ. चन्द्रशेखर सिंह	156–161
28.	ई-कॉमर्स में सोशल मीडिया की वर्तमान स्थिति : एक संक्षिप्त अध्ययन	जगदीश कुमार धुर्वे, डॉ. राखी सक्सेना	162–166
29.	'जुनूनिज्म' एक वैश्विक दार्शनिक सिद्धांत की मौलिक शब्द-संरचना और विश्लेषण	डॉ० मौ० मुजफ्फर अंसारी	167–176
30.	**FOOD AND NUTRITION SECURITY IN JHARKHAND : A SOCIO –ECONOMIC PERSPECTIVE DURING THE COVID-19 PANDEMIC**	**RAJESH KUMAR**	**177-185**
31.	**Pathways to Inclusive Green Prosperity : Sustainable Development of India**	**Dr. Satyawan Jatain**	**186-192**
32.	आधुनिक जीवन-शैली में प्राकृतिक चिकित्सा की प्रासंगिकता का अध्ययन	पूजा नागपाल, डॉ. बी.के. चौधरी	193–195
33.	कहानियों में तृतीय लिंग	Krishna Priya G	196–198
34.	शिक्षा, महिला सशक्तिकरण और राजाराममोहन राय	डॉ. राजेंद्र शर्मा	199–202
35.	पंचायतीराज व्यवस्था में महिला जनप्रतिनिधियों का प्रभाव : एक सामाजिक विश्लेषण	पूनम सुरेखा गोपाल, डॉ. अश्विनी महाजन	203–212
36.	भारत में सीमांतीकरण के विभिन्न आयाम	डॉ. देवेन्द्र प्रसाद राम	213–218
37.	उपनिषदों में वर्णित नैतिक मूल्य	पुष्पेन्द्र कुमार तोमर, प्रोफेसर डॉ. कुमरपाल	219–222
38.	आधुनिक समाज के सन्दर्भ में मानवाधिकार में शिक्षा की भूमिका	डॉ. सूर्यप्रकाश, डॉ. पुनीत श्रीवास्तव	223–227

संपादकीय...

प्रिय पाठकवृंद, नमस्कार।

सितम्बर 2025 अंक आपके हाथों में सौंपते हुए हमें विशेष संतोष और प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। यह अंक शोध और सृजन के उस निरंतर प्रयास का प्रतीक है, जिसे बोहल शोध मंजूषा जर्नल ने अपनी स्थापना के समय से ही अपना आदर्श बनाया है। हमारा उद्देश्य केवल लेखन और प्रकाशन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि विचारों का आदान–प्रदान, नई दृष्टियों का उद्घाटन और शैक्षणिक विमर्श की गहराई तक पहुँचना हमारी प्राथमिकता रही है। यही कारण है कि यह पत्रिका धीरे–धीरे एक गंभीर शैक्षणिक मंच के रूप में प्रतिष्ठित हो रही है। इस अंक की विशेषता यह है कि इसमें हमने तीन महत्त्वपूर्ण आयामों को एक सूत्र में पिरोने का प्रयास किया है – 'नई शिक्षा नीति 2020, ''भारतीय ज्ञान परंपरा, और ''समकालीन हिंदी साहित्य'। ये तीनों ही विषय अपने–अपने स्तर पर आज के भारत की बौद्धिक और सांस्कृतिक यात्रा को दिशा दे रहे हैं।

नई शिक्षा नीति 2020 और उसका प्रभाव :–

नई शिक्षा नीति 2020 को स्वतंत्र भारत की शिक्षा व्यवस्था का एक ऐतिहासिक मोड़ माना जा रहा है। इसमें न केवल संरचना और पद्धति में बदलाव की बात की गई है, बल्कि शिक्षा को मूल्यों, कौशलों और रचनात्मकता से जोड़ने का स्पष्ट आग्रह भी किया गया है। इस नीति का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें भारतीय भाषाओं, विशेष रूप से मातृभाषा हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में प्रारंभिक शिक्षा पर बल दिया गया है। इससे भाषा और संस्कृति दोनों के संरक्षण और संवर्धन का मार्ग प्रशस्त होगा। इस अंक में सम्मिलित शोध–लेखों में इस नीति के सामाजिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक आयामों की गहन पड़ताल की गई है।

भारतीय ज्ञान परंपरा : आधुनिक संदर्भों में :–

भारतीय ज्ञान परंपरा की चर्चा करते समय हम केवल प्राचीन ग्रंथों या दार्शनिक विचारधाराओं तक सीमित नहीं रहते, बल्कि उस दीर्घ सांस्कृतिक विरासत की बात करते हैं, जिसने हमारी सभ्यता को निरंतर जीवित और गतिशील बनाए रखा है। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, बौद्ध–जैन ग्रंथ, मध्यकालीन संत साहित्य और आधुनिक युग के सुधार आंदोलनों ने इस परंपरा को समृद्ध किया। आज जब वैश्वीकरण और तकनीकी युग में मूल्य संकट उत्पन्न हो रहे हैं, भारतीय ज्ञान परंपरा हमें संतुलन और नैतिक दिशा प्रदान कर सकती है। इस अंक में प्रकाशित आलेख इसी बात पर बल देते हैं कि शिक्षा नीति के साथ–साथ हमें अपनी प्राचीन परंपरा और आधुनिक आवश्यकताओं के बीच एक सेतु का निर्माण करना होगा।

समकालीन हिंदी साहित्य और सामाजिक सरोकार :–

हिंदी साहित्य की पहचान सदैव समाज के प्रश्नों और समय की चुनौतियों से जुड़ी रही है। समकालीन हिंदी साहित्य भी इस परंपरा को आगे बढ़ाते हुए नई सृजनात्मक संभावनाओं का उद्घाटन कर रहा है। चाहे स्त्री विमर्श हो, पर्यावरणीय संकट, दलित चेतना या तकनीकी समाज में मनुष्य की स्थिति इन सभी मुद्दों को हिंदी साहित्य ने गहराई से उठाया है। इस अंक में शामिल कविताएँ और लघुकथाएँ न केवल साहित्यिक संवेदनशीलता का परिचय देती हैं, बल्कि समाज की नब्ज को भी टटोलती हैं।

अंत में, हम अपने सभी लेखकों, शोधार्थियों, समीक्षकों और पाठकों का हृदय से आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग और विश्वास ने इस अंक को आकार दिया है। आपकी प्रतिक्रियाएँ और सुझाव ही हमें निरंतर बेहतर बनने की प्रेरणा देते हैं। हमें विश्वास है कि यह अंक भी आपके चिंतन को समृद्ध करेगा और शोध एवं सृजन की नयी दिशाएँ खोलेगा।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 10-12

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अस्तित्ववाद और आधुनिक मानव जीवन की चुनौतियां

डॉ. झंवर राम

सहायक आचार्य दर्शनशास्त्र, राजकीय कन्या महाविद्यालय पोकरण (जैसलमेर)

अस्तित्ववाद (Existentialism)

20वीं शताब्दी का एक प्रमुख दार्शनिक आंदोलन है, जिसने मानव जीवन की मूल समस्याओं अकेलापन, स्वतंत्रता, उत्तरदायित्व और निरर्थकता को गहराई से समझने का प्रयास किया। यह दर्शन व्यक्ति को उसकी स्वतंत्र सत्ता के रूप में स्वीकार करता है और जीवन की अर्थहीनता के बीच स्वयं अर्थ निर्माण की चुनौती प्रस्तुत करता है। आधुनिक युग में जहाँ विज्ञान, तकनीकी प्रगति और उपभोक्तावाद ने जीवन को सुविधा–प्रधान बनाया है, वहीं उसने मूल्य संकट, आत्मविस्मृति, मानसिक तनाव और अस्तित्वगत शून्यता भी बढ़ाई है। ऐसे समय में अस्तित्ववाद व्यक्ति को चेतावनी भी देता है और प्रेरणा भी, कि वह अपने अस्तित्व को प्रामाणिक रूप से जिए, निर्णय लेने का साहस रखे और जीवन की जिम्मेदारी स्वयं उठाए। यह शोध–पत्र अस्तित्ववाद के दार्शनिक आधार, उसके प्रमुख चिंतकों, तथा आधुनिक मानव जीवन की चुनौतियों के संदर्भ में उसकी प्रासंगिकता का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

प्रस्तावना :–

मानव जीवन अनादिकाल से ही प्रश्नों से भरा रहा है। 'मैं कौन हूँ?', 'जीवन का उद्देश्य क्या है?', 'क्या ईश्वर है?', 'मृत्यु के बाद क्या?' जैसे प्रश्न प्रत्येक युग में उठते रहे हैं। पारंपरिक दर्शनशास्त्र प्रायः इन प्रश्नों के शाश्वत उत्तर देने का प्रयास करता रहा, किंतु 19वीं और 20वीं शताब्दी में आए अस्तित्ववाद ने इन प्रश्नों को एक नयी दृष्टि से देखने का प्रयास किया। अस्तित्ववाद का मूल यह है कि 'मनुष्य पहले अस्तित्व में आता है, फिर वह स्वयं को परिभाषित करता है।' यह विचार पारंपरिक 'स्वभाववादी' धारणा से बिल्कुल अलग है। परंपरा यह मानती थी कि मनुष्य का कोई पूर्वनिर्धारित स्वरूप है, किंतु अस्तित्ववाद कहता है कि मनुष्य स्वतंत्र है और उसे अपने चुनावों से स्वयं अपना स्वरूप गढ़ना पड़ता है। आधुनिक समाज में वैज्ञानिक प्रगति, तकनीकी संस्कृति और उपभोक्तावादी जीवनशैली ने जहाँ सुविधाएँ दी हैं, वहीं उसने गहरे मूल्य संकट को जन्म दिया है। व्यक्ति भीड़ में खोता जा रहा है, मशीन बनता जा रहा है, और भीतर से खाली होता जा रहा है। इस संदर्भ में अस्तित्ववाद का दर्शन आज और भी अधिक प्रासंगिक हो उठता है।

अस्तित्ववाद का उद्भव और विकास अस्तित्ववाद कोई एक व्यवस्थित दार्शनिक पंथ नहीं है, बल्कि यह एक चिंतनधारा है। इसका बीज 19वीं शताब्दी में डेनमार्क के दार्शनिक कीर्केगार्द (Søren Kierkegaard) और जर्मनी के फ्रेडरिक नीत्शे (Friedrich Nietzsche) के चिंतन में मिलता है। कीर्केगार्द ने ईसाई धर्म की

औपचारिकता की आलोचना करते हुए व्यक्तिगत धार्मिक अनुभव और आस्था को महत्व दिया। उन्होंने कहा कि व्यक्ति को अपने जीवन का अर्थ स्वयं खोजना चाहिए और 'निराशा' से जूझना चाहिए। नीत्शे ने 'ईश्वर मर चुका है' का उद्घोष करते हुए पश्चिमी नैतिकता और परंपराओं को चुनौती दी। उन्होंने 'अधिमानव' (Obermensch) की संकल्पना दी, जो स्वयं अपने मूल्यों का निर्माण करता है।

20वीं शताब्दी में अस्तित्ववाद को व्यापक रूप हाइडेगर (Martin Heidegger), ज्यां पॉल सार्त्र (Jean-Paul Sartre), अल्बेयर कामू (Albert Camus) और कार्ल जैस्पर्स (Karl Jaspers) जैसे चिंतकों ने दिया। सार्त्र ने कहा : 'अस्तित्व सार से पूर्व है' (Existence precedes essence)।

अस्तित्ववाद के प्रमुख दार्शनिक :–

1. **कीर्केगार्द :** आस्था, निराशा और व्यक्तिगत निर्णय पर जोर।
2. **नीत्शे :** ईश्वर की मृत्यु, शक्ति की इच्छा और अधिमानव का विचार।
3. **हाइडेगर :** 'अस्तित्व' (Being) का विश्लेषण, मृत्यु की चेतना।
4. **सार्त्र :** स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व का दर्शन।
5. **कामू :** जीवन की निरर्थकता (Absurd) और 'विद्रोह' का विचार।

अस्तित्ववाद के दार्शनिक आधार :–

1. **स्वतंत्रता (Freedom) :** मनुष्य को पूर्ण स्वतंत्र माना गया है। वह अपने निर्णयों का मालिक है।
2. **उत्तरदायित्व (Responsibility) :** हर चुनाव की जिम्मेदारी व्यक्ति को स्वयं उठानी पड़ती है।
3. **निरर्थकता (Absurdity) :** जीवन का कोई पूर्वनिर्धारित अर्थ नहीं है। अर्थ हमें स्वयं बनाना पड़ता है।
4. **प्रामाणिकता (Authenticity) :** मनुष्य को 'भीड़' की नकल न करके, स्वयं अपने सत्य को जीना चाहिए।

अस्तित्ववाद और नैतिकता अस्तित्ववाद पारंपरिक नैतिकता को नकारते हुए भी व्यक्ति को जिम्मेदारी का बोध कराता है। सार्त्र कहते हैं कि जब हम कोई निर्णय लेते हैं, तो वह केवल हमारे लिए नहीं, बल्कि पूरे मानव जाति के लिए एक मानक बन सकता है। इस दृष्टि से अस्तित्ववाद का नैतिक दर्शन गहरा और व्यावहारिक है।

आधुनिक मानव जीवन की प्रमुख चुनौतियाँ :–

1. **अकेलापन और अलगाव :** तकनीकी प्रगति ने संचार बढ़ाया, परंतु आत्मीय संबंध कम हुए। व्यक्ति भीतर से अकेला है।
2. **उपभोक्तावाद और भौतिकता :** आधुनिक समाज में सुख का पैमाना उपभोग बन गया है। इससे व्यक्ति की आत्मा तृप्त नहीं हो पा रही।
3. **मूल्य संकट :** धार्मिक और नैतिक आधार कमजोर हुए हैं। लोग 'कैसे जिएँ?' इस प्रश्न से जूझ रहे हैं।
4. **मानसिक तनाव और अस्तित्वगत शून्यता :** भौतिक उपलब्धियों के बावजूद जीवन का गहरा खालीपन बढ़ा है।

अस्तित्ववाद की प्रासंगिकता : समाधान या नई उलझन?

अस्तित्ववाद हमें जीवन की कठोर सच्चाई दिखाता है कि जीवन में कोई पूर्वनिर्धारित अर्थ नहीं है। परंतु

यह निराशा नहीं, बल्कि चुनौती है। यह दर्शन हमें प्रोत्साहित करता है कि हम अपने चुनावों से अर्थ गढ़ें, प्रामाणिक जीवन जिएँ और स्वतंत्रता का दायित्व उठाएँ। हालाँकि आलोचक कहते हैं कि यह दर्शन अत्यधिक व्यक्तिवादी है और सामाजिक–राजनीतिक संरचनाओं की उपेक्षा करता है। फिर भी आधुनिक युग में इसका महत्व असंदिग्ध है।

भारतीय संदर्भ में अस्तित्ववाद का मूल्यांकन भारतीय दर्शन, विशेषकर वेदांत और बौद्ध चिंतन, अस्तित्ववाद से भिन्न होते हुए भी उससे संवाद करता है। अद्वैत वेदांत कहता है कि आत्मा शाश्वत है और मुक्ति ही अंतिम लक्ष्य है, जबकि अस्तित्ववाद कहता है कि मनुष्य को यहीं और अभी अपने जीवन का अर्थ गढ़ना है। फिर भी भारतीय युवाओं में बढ़ते मानसिक तनाव, आत्महत्या और मूल्य संकट की समस्या में अस्तित्ववाद का संदेश उपयोगी हो सकता है 'तुम्हें अपने जीवन का अर्थ स्वयं बनाना है'।

निष्कर्ष :–

अस्तित्ववाद आधुनिक दर्शन का एक मील का पत्थर है। इसने यह स्पष्ट किया कि मनुष्य कोई पूर्वनिर्धारित सत्ता नहीं, बल्कि स्वतंत्र प्राणी है, जो अपने चुनावों से स्वयं को परिभाषित करता है। आधुनिक युग की चुनौतियों अकेलापन, मूल्य संकट, उपभोक्तावाद, तकनीकी जीवन और मानसिक तनाव के बीच अस्तित्ववाद व्यक्ति को चेतावनी देता है और प्रेरणा भी कि वह अपनी स्वतंत्रता और जिम्मेदारी को पहचाने।

संदर्भ सूची :–

1. Kierkegaard, S. Fear and Trembling.
2. Nietzsche, F. Thus Spoke Zarathustra.
3. Heidegger, M. Being and Time.
4. Sartre, J.P. Being and Nothingness.
5. Camus, A. The Myth of Sisyphus.
6. Jaspers, K. Philosophy of Existence.
7. याज्ञवल्क्य स्मृति और उपनिषदों में आत्मा–विचार।
8. आधुनिक समाजशास्त्रीय शोध–पत्र : मूल्य संकट और उपभोक्तावाद।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 13-18

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ग्रामीण समाज में सामाजिक परिवर्तन : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

संदीप पारीक

सहायक आचार्य समाजशास्त्र, राजकीय कन्या महाविद्यालय, पोकरण।

भारतीय समाज की आत्मा उसके गाँवों में बसती है। ग्रामीण समाज न केवल आर्थिक दृष्टि से कृषि और परंपरागत आजीविका का केंद्र रहा है, बल्कि सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक परंपराओं का भी जीवंत स्वरूप है। किंतु आधुनिकता, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, शिक्षा, वैश्वीकरण और सूचना–प्रौद्योगिकी ने ग्रामीण समाज में गहरे परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। इस शोध–पत्र में ग्रामीण जीवन के विभिन्न पक्षों परिवार, जाति व्यवस्था, पंचायत प्रणाली, शिक्षा, महिला स्थिति, आर्थिक गतिविधियाँ तथा सांस्कृतिक जीवन पर पड़ने वाले परिवर्तनों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि ग्रामीण समाज में परिवर्तन किस प्रकार पारंपरिक संरचनाओं को चुनौती देता है और किस हद तक उन्हें नए रूप में ढालता है। यह शोध–पत्र साहित्य समीक्षा एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। अध्ययन से यह निष्कर्ष सामने आता है कि ग्रामीण समाज में परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन की प्रक्रिया निरंतर जारी है।

प्रमुख शब्द :– ग्रामीण समाज, सामाजिक परिवर्तन, आधुनिकीकरण, परंपरा, शिक्षा, जाति व्यवस्था, औद्योगिकीकरण।

भूमिका :–

भारत की लगभग 65–70 प्रतिशत जनसंख्या अब भी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। महात्मा गांधी ने कहा था – "भारत की आत्मा उसके गाँवों में बसती है।" यह कथन केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि समाजशास्त्रीय दृष्टि से भी अत्यंत प्रासंगिक है। ग्रामीण समाज की संरचना सदियों से परंपरा, रीति–रिवाज, जातिगत व्यवस्था और धार्मिक मान्यताओं पर आधारित रही है। परंतु बीसवीं शताब्दी के मध्य से ही ग्रामीण समाज गहन परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजर रहा है। हरित क्रांति ने कृषि व्यवस्था को बदला, औद्योगिकीकरण और शहरीकरण ने ग्रामीण जीवन पर असर डाला, शिक्षा और संचार माध्यमों ने नई चेतना का संचार किया। आज गाँव केवल कृषि पर आश्रित नहीं हैं, बल्कि उनमें बाजार, परिवहन, सूचना–तकनीक और राजनीतिक भागीदारी का भी प्रभाव दिखाई देता है। सामाजिक परिवर्तन समाजशास्त्र की दृष्टि से वह प्रक्रिया है जिसमें सामाजिक संरचनाएँ, मूल्य, संस्थाएँ और परंपराएँ समय के साथ बदलती रहती हैं।

ग्रामीण समाज में यह परिवर्तन कई स्तरों पर देखा जा सकता है :–

1. परिवार की संरचना (संयुक्त से एकल)

2. जाति व्यवस्था में ढीलापन।
3. महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक भागीदारी।
4. आर्थिक जीवन में विविधता।
5. सांस्कृतिक मान्यताओं में परिवर्तन।

इस अध्ययन का महत्त्व इसलिए भी है क्योंकि ग्रामीण समाज केवल आर्थिक इकाई नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति का मूलभूत आधार है। यदि गाँव बदलते हैं, तो संपूर्ण समाज की दिशा भी परिवर्तित होती है।

साहित्य समीक्षा (Review of Literature) :–

ग्रामीण समाज और उसमें होने वाले परिवर्तनों पर अनेक भारतीय एवं विदेशी समाजशास्त्रियों ने गहन अध्ययन किया है।

1. **रॉबर्ट रेडफील्ड (Robert Redfield)** ने 'फोक–समाज' और 'शहरी–समाज' की अवधारणा प्रस्तुत की। उनका मत था कि ग्रामीण समाज अपेक्षाकृत सरल, परंपरागत और सामुदायिक जीवन पर आधारित होता है, जबकि शहरी समाज जटिल और व्यक्तिवादी होता है।

2. **ए. आर. देसाई (A. R. Desai)** ने अपनी कृति Rural Sociology पद India में स्पष्ट किया कि भारतीय गाँवों की सामाजिक संरचना औद्योगिकीकरण और पूँजीवादी विकास से गहरे प्रभावित हुई है। उनके अनुसार भूमि सुधार, हरित क्रांति और सहकारी संस्थाओं ने ग्रामीण समाज की शक्ति–संरचना को बदला है।

3. **एम. एन. श्रीनिवास (M. N. Srinivas)** ने 'संस्कृतिकरण' (Sanskritization) और 'पश्चिमीकरण' (Westernization) की अवधारणा दी। उनका कहना था कि ग्रामीण जातियाँ उच्च वर्ण की परंपराओं को अपनाकर अपनी सामाजिक स्थिति बदलने की कोशिश करती हैं। साथ ही, आधुनिक शिक्षा और अंग्रेजी प्रभाव ने ग्रामीण समाज को पश्चिमी मूल्यों से प्रभावित किया।

4. **के. एल. शर्मा** ने अपने शोध में ग्रामीण सामाजिक परिवर्तन को "परंपरा और आधुनिकता के संघर्ष" के रूप में देखा। उनका मानना है कि ग्रामीण भारत अब दो ध्रुवों के बीच खड़ा हैकृएक ओर परंपरा है और दूसरी ओर आधुनिकता।

5. **गैलिन (Mayer & Galin)** ने राजस्थान और उत्तर भारत के गाँवों पर अध्ययन करते हुए बताया कि किस प्रकार भूमि–संबंध, जाति और पंचायतें ग्रामीण समाज को नियंत्रित करती हैं, लेकिन शिक्षा और रोजगार के अवसर नए वर्गों का निर्माण कर रहे हैं।

6. **राम आहुजा** ने भारतीय समाजशास्त्र में स्पष्ट किया कि ग्रामीण क्षेत्र में परिवर्तन केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और राजनीतिक स्तर पर भी दिखाई देता है।

इन सभी अध्ययनों से स्पष्ट है कि ग्रामीण समाज स्थिर नहीं है, बल्कि निरंतर बदलता हुआ एक गतिशील समाज है। परंपरागत मान्यताओं और आधुनिक मूल्यों के बीच यह टकराव और समायोजन समाजशास्त्रियों के लिए अध्ययन का प्रमुख विषय है। कार्यप्रणाली इस शोध–पत्र को तैयार करने में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। यह अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों (Secondary Sources) पर आधारित है।

1. **स्रोत सामग्री :–**

समाजशास्त्र और ग्रामीण अध्ययन से संबंधित पुस्तकों, शोध लेखों, सरकारी रिपोर्टों (जैसे जनगणना

2011, ग्रामीण विकास मंत्रालय की रिपोर्ट), एनजीओ द्वारा किए गए सर्वेक्षण, और राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (NSSO) के आँकड़ों का उपयोग किया गया है।

2. अध्ययन का क्षेत्र :–

यद्यपि शोध का दायरा संपूर्ण भारत के ग्रामीण समाज तक विस्तृत है, परंतु विशेष ध्यान राजस्थान, उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे राज्यों पर केंद्रित किया गया है, जहाँ ग्रामीण आबादी का बड़ा हिस्सा निवास करता है।

3. उद्देश्य :–

- ग्रामीण समाज में परिवर्तन के प्रमुख कारकों की पहचान करना।
- परिवार, जाति, महिला स्थिति, शिक्षा, अर्थव्यवस्था और संस्कृति पर इन परिवर्तनों का विश्लेषण करना।
- परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन की प्रक्रिया को समझना।

4. सीमाएँ :–

यह अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, अतः प्रत्यक्ष क्षेत्रीय सर्वेक्षण की सीमाएँ इसमें हैं। तथापि, प्रयुक्त साहित्य और आँकड़े विश्वसनीय व प्रमाणिक हैं।

मुख्य चर्चा (Main Discussion) :–

ग्रामीण समाज में सामाजिक परिवर्तन को विभिन्न स्तरों पर देखा जा सकता है। यहाँ हम प्रमुख पहलुओं का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं :–

1. परिवार संरचना में परिवर्तन :–

भारत का पारंपरिक गाँव संयुक्त परिवार का प्रतीक रहा है। एक ही घर में दादा–दादी, माता–पिता, भाई–बहन और उनके परिवार एक साथ रहते थे। इससे सामाजिक सुरक्षा, आर्थिक सहयोग और सांस्कृतिक निरंतरता बनी रहती थी। किन्तु अब आर्थिक दबाव, शहरी प्रवास, नौकरी की खोज और व्यक्तिवाद की बढ़ती भावना ने संयुक्त परिवार को कमजोर किया है।

आज गाँवों में भी एकल परिवार (Nuclear Family) तेजी से बढ़ रहे हैं। इससे महिलाएँ अपेक्षाकृत स्वतंत्र हुई हैं, किंतु बुजुर्गों की स्थिति कमजोर हुई है।

2. जाति व्यवस्था पर प्रभाव :–

ग्रामीण समाज की सबसे बड़ी विशेषता जाति व्यवस्था रही है। गाँवों में परंपरागत रूप से प्रत्येक जाति का निश्चित व्यवसाय और सामाजिक दर्जा तय था। लेकिन शिक्षा, राजनीतिक अधिकार, आरक्षण नीति और आर्थिक अवसरों ने जाति–व्यवस्था को चुनौती दी है।

अब जातियाँ अपने पारंपरिक पेशों से हटकर अन्य क्षेत्रों में काम कर रही हैं। अंतर्जातीय विवाह (Inter-Caste Marriage) भी धीरे–धीरे बढ़ रहा है, विशेषकर शिक्षित युवाओं में। पंचायत चुनावों और राजनीतिक भागीदारी ने भी निम्न जातियों को शक्ति और सम्मान दिया है। हालाँकि, सामाजिक जीवन में जाति का प्रभाव पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है। गाँवों में अभी भी भोजन, विवाह और सामाजिक मेल–जोल में जातिगत दूरी देखने को मिलती है।

3. महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन :-

परंपरागत ग्रामीण समाज में महिला की भूमिका केवल घरेलू कार्यों और कृषि–श्रम तक सीमित थी। लेकिन आज शिक्षा ने महिलाओं को सशक्त बनाया है। स्वरोजगार योजनाएँ (जैसे स्वयं सहायता समूह) महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता दे रही हैं। पंचायतों में 33% आरक्षण ने महिलाओं को राजनीतिक नेतृत्व का अवसर दिया है। स्वास्थ्य सुविधाओं और सरकारी योजनाओं (जैसे जननी सुरक्षा योजना) ने उनकी सामाजिक स्थिति में सुधार किया है। फिर भी, पितृसत्तात्मक सोच, घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा और अशिक्षा जैसी चुनौतियाँ अब भी मौजूद हैं।

4. आर्थिक जीवन में परिवर्तन :-

गाँव की अर्थव्यवस्था सदियों तक कृषि पर आधारित रही। परंतु आज ग्रामीण अर्थव्यवस्था विविध रूप हो चुकी है। हरित क्रांति ने कृषि उत्पादन को बढ़ाया। ग्रामीण उद्योग व मनरेगा जैसे कार्यक्रमों ने आजीविका के नए अवसर दिए। युवाओं का बड़ा वर्ग प्रवासी श्रमिक के रूप में शहरों में काम कर रहा है। मोबाइल और डिजिटल लेन–देन ने ग्रामीण बाजार को शहरी बाजार से जोड़ा है। परिणामस्वरूप, ग्रामीण समाज में अब केवल किसान ही नहीं, बल्कि मजदूर, व्यापारी, सरकारी कर्मचारी और निजी क्षेत्र में कार्यरत लोग भी हैं।

5. शिक्षा और जागरूकता :-

शिक्षा ग्रामीण परिवर्तन का सबसे बड़ा आधार बनी है। सरकारी विद्यालयों और मध्याह्न भोजन योजना से शिक्षा का प्रसार हुआ। उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा के लिए गाँव के छात्र शहरों की ओर जा रहे हैं। साक्षरता दर में वृद्धि से स्वास्थ्य, स्वच्छता, परिवार नियोजन और लोकतांत्रिक चेतना फैली है। परंतु, शिक्षा की गुणवत्ता, अधूरी बुनियादी सुविधाएँ और डिजिटल गैप अब भी बड़ी समस्या है।

6. सांस्कृतिक जीवन और परंपराएँ :-

ग्रामीण जीवन की सांस्कृतिक धारा – मेलों, त्यौहारों, लोकगीतों, नृत्यों और धार्मिक अनुष्ठानों से बनी है। टीवी, मोबाइल, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने नई सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ उत्पन्न की हैं। पारंपरिक लोकगीतों व नृत्यों की जगह फिल्मी और पॉप संस्कृति ने ले ली है। विवाह और सामाजिक अनुष्ठानों में आधुनिकता और दिखावा बढ़ा है। फिर भी, ग्रामीण समाज अभी भी अपनी धार्मिक आस्थाओं और सामुदायिक परंपराओं को मजबूत बनाए हुए है।

7. राजनीतिक जीवन में परिवर्तन :-

पंचायती राज व्यवस्था (73वाँ संविधान संशोधन, 1992) ने ग्रामीण राजनीति को नया आयाम दिया है। ग्राम पंचायतों में महिलाओं, दलितों और पिछड़ों को आरक्षण मिला। ग्रामीण जनता अब अपने अधिकारों और योजनाओं के प्रति अधिक जागरूक हुई है। लोकतांत्रिक भागीदारी ने गाँव को शक्ति और आत्मनिर्भरता दी है। किंतु जातिवाद, गुटबाजी और भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ भी सामने आई हैं।

निष्कर्ष :-

ग्रामीण समाज भारतीय सभ्यता और संस्कृति की मूलधारा है। यह सदियों से परंपरा, धर्म, जाति और कृषि आधारित जीवन पर टिका रहा है। परंतु बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और इक्कीसवीं सदी में इसमें गहरे परिवर्तन आए हैं।

इस शोध–पत्र के अध्ययन से निम्न निष्कर्ष सामने आते है :–

1. **परिवार संरचना :** संयुक्त परिवार का स्थान धीरे–धीरे एकल परिवार ले रहा है। बुजुर्गों की सामाजिक भूमिका घट रही है, किंतु महिलाएँ अपेक्षाकृत स्वतंत्र हो रही हैं।
2. **जाति व्यवस्था :** जातिगत पेशों की परंपरा कमजोर पड़ी है। शिक्षा, रोजगार और राजनीति ने निम्न जातियों को शक्ति दी है। यद्यपि सामाजिक संबंधों में जाति का प्रभाव अब भी विद्यमान है।
3. **महिला स्थिति :** ग्रामीण महिलाओं ने शिक्षा, राजनीति और स्वरोजगार के माध्यम से नई पहचान बनाई है। किंतु लैंगिक असमानता और पितृसत्तात्मक सोच अब भी बड़ी बाधा हैं।
4. **आर्थिक जीवन :** कृषि अब भी मुख्य आधार है, लेकिन उद्योग, सेवाक्षेत्र और प्रवासी श्रम ने आजीविका को विविध बनाया है। डिजिटल तकनीक ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को शहरों से जोड़ा है।
5. **शिक्षा और जागरूकता :** साक्षरता दर बढ़ी है और लोकतांत्रिक चेतना आई है। परंतु शिक्षा की गुणवत्ता, डिजिटल अंतराल और अधूरी बुनियादी सुविधाएँ बड़ी समस्या हैं।
6. **सांस्कृतिक जीवन :** पारंपरिक मेलों, गीतों और लोककला पर आधुनिकता और बाजारवाद का प्रभाव पड़ा है। फिर भी धार्मिक आस्था और लोकसंस्कृति ग्रामीण पहचान का हिस्सा बनी हुई है।
7. **राजनीतिक जीवन :** पंचायत राज ने सत्ता विकेंद्रीकरण को मजबूत किया है। महिलाएँ और पिछड़े वर्ग राजनीति में आए हैं। लेकिन जातिवाद और भ्रष्टाचार जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

सार रूप में कहा जा सकता है कि ग्रामीण समाज में परिवर्तन "परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन" का प्रतीक है। न तो परंपराएँ पूरी तरह नष्ट हुई हैं, न ही आधुनिकता ने सब पर विजय पा ली है। दोनों का मिश्रण एक नए ग्रामीण समाज का निर्माण कर रहा है।

सुझाव :–

ग्रामीण समाज के समग्र विकास और स्वस्थ परिवर्तन के लिए निम्न सुझाव दिए जा सकते हैं :

1. **शिक्षा का सशक्तिकरण :** गुणवत्तापूर्ण प्राथमिक और उच्च शिक्षा ग्रामीण युवाओं के लिए उपलब्ध कराई जाए। डिजिटल शिक्षा की सुविधाएँ गाँव–गाँव तक पहुँचे।
2. **महिला सशक्तिकरण :** स्वयं सहायता समूहों, स्वरोजगार योजनाओं और शिक्षा के माध्यम से महिलाओं की भागीदारी और बढ़ाई जाए।
3. **कृषि सुधार :** खेती को टिकाऊ और लाभकारी बनाने के लिए सिंचाई, तकनीक, मूल्य समर्थन और बाजार की सुविधाएँ बढ़ाई जाएँ।
4. **रोजगार सृजन :** गाँवों में ही उद्योग, हस्तशिल्प और सेवा क्षेत्र को बढ़ावा देकर प्रवास पर निर्भरता कम की जाए।
5. **सामाजिक समरसता :** जातिगत भेदभाव और लैंगिक असमानता को शिक्षा और सामाजिक आंदोलनों के माध्यम से कम किया जाए।
6. **संस्कृति संरक्षण :** लोकगीत, लोकनृत्य और पारंपरिक मेलों का संरक्षण एवं प्रोत्साहन किया जाए ताकि ग्रामीण संस्कृति अपनी मौलिक पहचान बनाए रख सके।

7. **राजनीतिक सुधार :** पंचायतों में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित हो। जातिवाद और गुटबाजी को कम करने के लिए नागरिक शिक्षा का प्रसार हो।

संदर्भ सूची :-

1. देसाई, ए. आर. (2012). भारतीय समाजशास्त्र का परिचय. पॉपुलर प्रकाशन।
2. श्रीनिवास, एम. एन. (2003). सोशल चेंज इन मॉडर्न इंडिया. ओरिएंट लॉन्गमैन।
3. शर्मा, के. एल. (2015). भारतीय समाज : संरचना और परिवर्तन. रावत पब्लिकेशन।
4. आहुजा, राम. (2010). भारतीय समाजशास्त्र. रावत प्रकाशन।
5. रेडफील्ड, रॉबर्ट. (1956). Peasant Society and Culture. यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।
6. कास्टेल्स, मैनुअल. (2000). The Rise of the Network Society. ब्लैकवेल।
7. Census of India, 2011. Registrar General of India.
8. Ministry of Rural Development Reports (2018–2022). Government of India.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 19-24

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भोजपुरी लोकगीतों में भारतीय जीवन

प्रकाश कुमार त्रिपाठी
रिसर्च स्कॉलर,
अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

शोध सार :-

भोजपुरी लोकगीत भारतीय सांस्कृतिक धरोहर का ऐसे स्वरूप है जिसमें समाज की सामूहिक स्मृति, जीवन दृष्टि और मूल्यबोध सजीव रूप में विद्यमान हैं। लोकगीत मात्र मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि वे पीढ़ियों से संचरित जीवन–तत्वों और नैतिक आदर्शों के संरक्षक भी हैं। इन गीतों में प्रेम, करुणा, सहानुभूति, सह–अस्तित्व, श्रम, नारी–सम्मान, पारिवारिक बंधन और धार्मिक आस्था जैसे भारतीय जीवन मूल्यों का निरंतर प्रतिपादन हुआ है। भोजपुरी समाज का जीवन चाहे वह ग्रामीण कृषक का हो या प्रवासी मजदूर का, गीतों में व्यक्त होता है। इन गीतों से हमें उस सामाजिक चेतना का परिचय मिलता है जो भारतीय संस्कृति की आत्मा है। भोजपुरी लोकगीतों में श्रम के प्रति सम्मान स्पष्ट दिखता है। यह गीत केवल कृषि–क्रिया का नहीं बल्कि जीवन के सामूहिक मूल्य का भी उद्घोष है। भारतीय जीवन मूल्यों का संरक्षण और संवर्धन लोकगीतों की अनिवार्य प्रक्रिया है। यही कारण है कि आज भी ये गीत सामाजिक जीवन में प्रासंगिक हैं एवं भारतीयता को मजबूत करते हैं।

मुख्य शब्द :- भोजपुरी लोकगीत, भारतीय जीवन मूल्य, संस्कृति, श्रम, नारी–सम्मान, प्रवासी, धार्मिक आस्था, सह–अस्तित्व।

भूमिका :-

भारतीय समाज बहुसांस्कृतिक, बहुभाषी और बहुरंगी जीवन–धारा का वाहक है। इस जीवन–धारा की मूल आत्मा भारतीय जीवन मूल्य हैं, जिनका आधार धर्म, दर्शन और सांस्कृतिक परंपराएँ हैं। भारतीय जीवन मूल्य केवल दार्शनिक ग्रंथों या शास्त्रों में ही नहीं, बल्कि लोकजीवन की रोजमर्रा की गतिविधियों में भी निहित है। भारत का प्रत्येक क्षेत्र अपनी विशिष्ट लोकसंस्कृति के लिए प्रसिद्ध है। भोजपुरी अंचल, जिसमें उत्तर प्रदेश का पूर्वी भाग, बिहार का पश्चिमी अंचल और झारखंड का कुछ हिस्सा सम्मिलित है, लोकगीतों की परंपरा के लिए विख्यात है। यहां का जनजीवन, कृषि प्रधान समाज और पारिवारिक बंधन गीतों के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ते रहे हैं। भोजपुरी लोकगीतों की परंपरा इतनी प्राचीन है कि यह आरंभ से ही भारतीय जीवन मूल्यों का संवाहक रही है। भारत का जीवन मूल्य केवल दार्शनिक या धार्मिक ग्रंथों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह लोकजीवन में भी समान रूप से व्याप्त है। प्रेम, सत्य, अहिंसा, परोपकार, सेवा, करुणा, नारी–सम्मान, मातृभूमि के प्रति प्रेम और

सामूहिक श्रम आदि भारतीयता के वे मूल्य हैं जिन्हें लोकगीत सहज ढंग से समाज तक पहुँचाते हैं। भोजपुरी समाज में जन्म से मृत्यु तक हर अवसर पर गीत गाए जाते हैं। सोहर में नए जीवन का उत्सव है, विवाह गीतों में वैवाहिक संस्कारों की पवित्रता और सामाजिक अनुशासन है, कृषि गीतों में श्रम और प्रकृति के प्रति सम्मान है, वहीं प्रवासी गीतों में मातृभूमि और परिवार की पीड़ा है। इन गीतों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि भोजपुरी लोकगीत भारतीय जीवन मूल्यों को लोक–भाषा और सहज अभिव्यक्ति के माध्यम से आमजन तक पहुँचाते हैं। यह केवल संगीतात्मक आनंद नहीं बल्कि सामाजिक शिक्षा भी है। वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि भोजपुरी लोकगीत भारतीय जीवन मूल्यों के जीवंत भंडार हैं। इनके अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज केवल परंपराओं का वाहक ही नहीं बल्कि जीवन मूल्यों को कलात्मक और सहज रूप में अभिव्यक्त करने वाला भी है।

आलेख :–

भोजपुरी लोकगीतों का सबसे बड़ा योगदान यह है कि वे समाज की बुनियादी संरचना और उसमें व्याप्त जीवन मूल्यों का चित्रण करते हैं। भारतीय समाज की आत्मा गाँवों में बसती है, और गाँव की सामूहिक चेतना लोकगीतों के रूप में प्रकट होती है। लोकगीतों में समाज का दुख–सुख, रीति–नीति, आचार–विचार और लोकधर्म की अभिव्यक्ति मिलती है। भारतीय सामाजिक जीवन मूल्यों में प्रमुख हैं – सामूहिकता, सहयोग, भाईचारा, सहिष्णुता, परस्पर सम्मान और नैतिकता। भोजपुरी लोकगीतों में यह सामाजिक चेतना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। खेत–खलिहान में गाए जाने वाले गीत, पर्व–त्योहार के अवसर पर गाए जाने वाले गीत तथा जीवन के विभिन्न संस्कारों से जुड़े गीत यह दर्शाते हैं कि समाज किस प्रकार मानवीय संबंधों को महत्व देता है। उदाहरण स्वरुप होली गीतों में सामाजिक समानता और भाईचारे का स्वर मुखरित होता है –

"होरी खेलीं सब संग, जात-पात भुला के,
रंगवा में रंगाईला, दीन-दुखिया गला लगाई के।"

यह सामूहिकता भारतीय समाज की सबसे बड़ी विशेषता है। इसी तरह चौता और कजरी गीतों में समाज का सहयोगात्मक जीवन झलकता है। जब कोई घर–परिवार संकट में होता है तो पूरा गाँव उसके साथ खड़ा होता है। यह भारतीय सामाजिक जीवन की जड़ है, जिसे लोकगीतों ने पीढ़ी–दर–पीढ़ी जीवित रखा है। भोजपुरी लोकगीतों में सामाजिक व्यवस्था और नैतिक अनुशासन भी झलकते हैं। समाज में धर्म, नीति और मर्यादा का पालन आवश्यक माना गया है। इस उद्धरण से यह स्पष्ट होता है कि समाज की स्थिरता नैतिकता और मर्यादा पर टिकी है। भारतीय समाज सहिष्णुता और परस्पर सम्मान की भावना से ओत–प्रोत रहा है। चाहे किसी भी वर्ग, जाति या समुदाय का व्यक्ति क्यों न हो, लोकगीतों में उसे मानवीय दृष्टि से देखा गया है। यही कारण है कि भोजपुरी लोकगीत भारतीय समाज की गहरी मानवीय संवेदना को उजागर करते हैं।

भारतीय जीवन मूल्यों की नींव परिवार पर आधारित है। परिवार केवल खून के रिश्तों का समूह नहीं बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों का केन्द्र है। भोजपुरी लोकगीतों में पारिवारिक जीवन का अत्यंत मार्मिक चित्रण मिलता है। इनमें माता–पिता के प्रति सम्मान, भाई–बहन का स्नेह, पति–पत्नी का संबंध, सास–बहू का संवाद, पुत्री का ममत्व और बिछोह – सब कुछ बड़ी सहजता और आत्मीयता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। सोहर गीतों में पुत्र जन्म के समय परिवार की खुशी और उम्मीदों का उल्लास गाया जाता है। एक सोहर

की पंक्ति देखें :–

"ललना के जनमवा भइल सुखदाई,

घर–आंगन उज्जर भइल, कुल में आयी लखमी माई।"

यहाँ पुत्री के जन्म को भी लक्ष्मी का आगमन बताया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि परिवार में पुत्री और पुत्र दोनों को समान सम्मान देने की परंपरा रही है। विवाह गीतों में पारिवारिक मूल्यों का सबसे सशक्त चित्रण मिलता है। बेटी की विदाई का गीत परिवार की भावनाओं को गहराई से व्यक्त करता है :

"कोठवा ऊपर बाबा मोरवा बोले हे,

मोरवा बोलिया सुहावन लागु हे।"

यह गीत केवल बेटी की पीड़ा ही नहीं बल्कि परिवार के बंधन और आत्मीयता की भी अभिव्यक्ति है। परिवार के रिश्ते में बिछोह के बावजूद आदर्श और मर्यादा का भाव निहित है। सास–बहू संबंधों को लेकर भी लोकगीतों में रोचक अभिव्यक्ति मिलती है। कभी–कभी इन गीतों में हंसी–मजाक के साथ टकराव के स्वर भी आते हैं, परंतु अंततः परिवार की एकता और सामंजस्य की भावना प्रकट होती है :–

"सासु कहें काम करीं, बहू कहें थकाइल बानी,

दू गोरी हंसीं–खेली, आपन–आपन कहनी।"

भारतीय समाज का सबसे गहरा आधार उसकी धार्मिक आस्था और सांस्कृतिक परंपरा रही है। यही कारण है कि भारतीय जीवन मूल्यों में धर्म, अध्यात्म और सांस्कृतिक विविधता को विशेष महत्व प्राप्त है। भोजपुरी लोकगीतों में इन धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों की व्यापक अभिव्यक्ति मिलती है। पर्व–त्योहार पर गाए जाने वाले गीतों में सामूहिकता और धार्मिक आस्था का अद्‌भुत संगम देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए, छठ पर्व पर गाया जाने वाला एक लोकगीत देखें :

"कांच ही बांस के बहंगीया,

बहंगी घाटे पहुचाई।"

यह गीत केवल धार्मिक अनुष्ठान का वर्णन नहीं है बल्कि इसमें विश्वास है कि सूर्योपासना से परिवार की समृद्धि और स्वास्थ्य सुरक्षित रहेगा। इससे स्पष्ट होता है कि धार्मिकता भारतीय जीवन मूल्यों का अभिन्न अंग है। इसी तरह सावन और कजरी गीतों में भी धार्मिकता और सांस्कृतिकता का गहरा संबंध दिखाई देता है। सावन के महीने में स्त्रियाँ झूला झूलते हुए भगवान शिव और पार्वती का स्मरण करती हैं :

"फगुनवा में फाग खेलीं, सावनवा में हरिहर गुन गाई,

भादव में गवनवा होई, कजरी गावत जाई।"

भोजपुरी लोकगीतों में देवी–देवताओं की स्तुति का विशेष स्थान है। दुर्गा पूजा, कृष्ण जन्माष्टमी, रामनवमी और शिवरात्रि पर गाए जाने वाले गीत भारतीय संस्कृति के आध्यात्मिक स्वरूप को सामने लाते हैं। जैसे कृष्ण जन्मोत्सव का एक गीत :

"नंद घर आनंद भयो, जय कन्हैया लाल की,

हाथी–घोड़ा पालकी, जय कन्हैया लाल की।"

धार्मिक आस्थाओं के साथ–साथ भोजपुरी लोकगीत सांस्कृतिक एकता और विविधता को भी प्रतिबिंबित

करते हैं। यहाँ हिंदू–मुसलमान दोनों समुदायों की लोकपरंपराएँ मिलकर एक साझा सांस्कृतिक धारा का निर्माण करती हैं। अर्थात 'विविधता में एकता' ही भारतीय संस्कृति का सार है। भोजपुरी लोकगीतों में ये मूल्य सहजता और आत्मीयता के साथ अभिव्यक्त हुए हैं। लोकगीत केवल सामाजिक और धार्मिक अवसरों का चित्रण नहीं करते, बल्कि वे मनुष्य को मनुष्य के प्रति मानवीय संवेदनाओं से जोड़ते हैं। भोजपुरी समाज श्रम और संघर्ष को सम्मान की दृष्टि से देखता है। यही नैतिकता गीतों में झलकती है :

"मजूर के पसीना से सींचल धान,
ओही से भराला अन्न के भंडार।"

यह पंक्ति स्पष्ट करती है कि परिश्रम और ईमानदारी ही समाज का आधार हैं। श्रम को सर्वोच्च मान्यता देना भारतीय नैतिक जीवन मूल्यों का महत्वपूर्ण हिस्सा है। भोजपुरी लोकगीतों में दया और करुणा की भावना भी गहराई से व्यक्त होती है। विशेष रूप से विरहा और बिदाई गीतों में मानव की संवेदनाएँ करुणा से भर जाती हैं। बेटी की विदाई पर गाया जाने वाला गीत देखें :

"ना रो बेटी, सबेरे ससुरारी पहुंचबू,
माई-बाबूजी तोहरे बिना जीयहीं, ई सोच ल।"

यह गीत करुणा और सहानुभूति से ओतप्रोत है, जो भारतीय समाज की मानवीय संवेदना का प्रतीक है। सत्य और न्याय की भावना भी लोकगीतों में व्यक्त होती है। जब किसी अन्याय या शोषण के खिलाफ समाज की पीड़ा गीतों में झलकती है, तब वह लोक की नैतिक चेतना को प्रकट करती है। बिरहा गीतों में गरीब और मजलूम वर्ग का आक्रोश सुनाई देता है :

"देसवा में धनवा के राज, गरीबन के ना आवाज,
कब मिली सबके समान अधिकार।"

भोजपुरी लोकगीत केवल आदर्शवादी उपदेश नहीं देते, बल्कि वे जीवन की वास्तविकताओं में नैतिकता की खोज करते हैं। गाँव की सरल जीवन–शैली में ईमानदारी, सच्चाई और मानवीयता सर्वोच्च मानी जाती है। यही कारण है कि लोकगीत लोगों को जीवन के कठिन क्षणों में भी नैतिक बल प्रदान करते हैं। इस प्रकार नैतिक एवं मानवीय जीवन मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में भोजपुरी लोकगीत भारतीय समाज को मानवीय संवेदनाओं से जोड़ते हैं। भारतीय जीवन मूल्यों की सबसे महत्त्वपूर्ण कड़ी स्त्री–पुरुष संबंधों में दिखाई देती है। विवाह, प्रेम, दांपत्य जीवन, बिछोह और पुनर्मिलन – इन सबका विस्तृत चित्रण भोजपुरी लोकगीतों में मिलता है। इन गीतों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज स्त्री–पुरुष संबंध को केवल दैहिक स्तर पर नहीं, बल्कि भावनात्मक, मानसिक और आध्यात्मिक स्तर पर भी मान्यता देता है। विवाह गीतों में पति–पत्नी के रिश्ते की कोमलता और गहराई अभिव्यक्त होती है। विदाई के समय दुल्हन अपने पति से विनती करती है :

"बिदेसवा ना भेजा सजनवा,
तोहरी बिन बिछुरि जइब मर जइब।"

इस पंक्ति में स्त्री का अपने पति से गहरा भावनात्मक जुड़ाव और साथ रहने की आकांक्षा झलकती है। यह भारतीय परिवार व्यवस्था की उस अवधारणा को रेखांकित करता है जिसमें दांपत्य संबंध जीवन की धुरी माने जाते हैं। भोजपुरी लोकगीतों में स्त्री–पुरुष के बीच परस्पर सम्मान और समझ का भी चित्रण मिलता है। पति

जब बाहर कमाने जाता है तो पत्नी की व्याकुलता लोकगीतों में व्यक्त होती है :

"फेंक दिहले थरिया, बलम गइले झरिया।
पहुँचले कीना, उठे हिया लहरिया पहुँचले की ना।"

यह गीत केवल स्त्री की पीड़ा ही नहीं, बल्कि इस तथ्य को भी प्रकट करता है कि भारतीय समाज में स्त्री–पुरुष एक–दूसरे के पूरक हैं। पति की अनुपस्थिति में पत्नी अकेली पड़ जाती है और परिवार की जिम्मेदारी उसके कंधों पर आ जाती है। भोजपुरी लोकगीतों में स्त्री की गरिमा और सम्मान को भी महत्त्व दिया गया है। भारतीय समाज के जीवन–मूल्यों में श्रम और संघर्ष का विशेष महत्व है। गाँवों का जीवन पूरी तरह श्रम और उत्पादन पर आधारित है। खेतों में हल जोतने वाले किसान से लेकर माटी ढोने वाली मजदूरिन तक, हर व्यक्ति समाज की रीढ़ है। भोजपुरी लोकगीतों में श्रम की गरिमा और संघर्ष की महत्ता को बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। खेती–बारी से जुड़े गीतों में किसान के श्रम को ईश्वरतुल्य बताया गया है। जैसे एक लोकगीत कहता है :

"हल जोते किसान, पसीना बहाए,
ओहि पसीना से धरती हरियाए।"

किसान के श्रम से ही धरती हरी–भरी होती है और अन्न की प्राप्ति होती है। भोजपुरी लोकगीतों में मजदूर वर्ग के संघर्ष और पीड़ा का भी चित्रण मिलता है। ईंट–भट्ठे, कारखानों और निर्माण स्थलों पर काम करने वालों की व्यथा लोकगीतों में बार–बार झलकती है। एक बिरहा की पंक्ति देखें :

"दिनवा भरि काम करीं, राति भरि जागीं,
पसीना के दाम ना मिलल, भूखिया लागीं।"

यहाँ मेहनतकश वर्ग के संघर्ष और शोषण का यथार्थ उभरकर सामने आता है। यह गीत सामाजिक न्याय की मांग और श्रमिक सम्मान के मूल्य को रेखांकित करता है। सिर्फ पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ भी श्रम और संघर्ष में बराबर की भागीदार रही हैं। खेत–खलिहान, घर–आँगन, चरखा–कताई, बुनाई और ढुलाई हर जगह स्त्रियों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। कजरी गीतों में स्त्री का यह श्रम और संघर्ष गाया गया है :

"सावनवा में हरियर खेतिया,
हम बइठलि छानी में चरखा चलइला।"

भोजपुरी लोकगीतों में संघर्ष का मूल्य केवल आर्थिक या सामाजिक स्तर पर नहीं, बल्कि जीवन की कठिनाइयों को सहने और उनसे जूझने की क्षमता में भी दिखाई देता है। बिरहा और आल्हा गीतों में वीरता, साहस और संघर्ष का स्वर मुखरित होता है, जो यह संदेश देता है कि संघर्ष के बिना जीवन अधूरा है। इस प्रकार भोजपुरी लोकगीत श्रम और संघर्ष के महत्व को रेखांकित करते हैं। ये गीत बताते हैं कि श्रम ही जीवन का आधार है और संघर्ष ही मनुष्य को मजबूत बनाता है। भारतीय जीवन मूल्यों में प्रकृति को विशेष आदर और स्थान दिया गया है। हमारी संस्कृति ने हमेशा प्रकृति को माता के समान माना है और उसके संरक्षण पर बल दिया है। यही भाव भोजपुरी लोकगीतों में गहराई से दिखाई देता है। खेत–खलिहान, नदी–तालाब, पेड़–पौधे, चाँद–सूरज, ऋतुएँ और मौसम : सबको इन गीतों में आत्मीयता से स्मरण किया गया है। सावन और कजरी गीतों में प्रकृति के प्रति स्त्रियों का विशेष आकर्षण दिखाई देता है। हरियाली के बीच झूला झूलते हुए जब वे गीत गाती हैं तो

उसमें प्रकृति से जुड़ाव की अनूठी अनुभूति होती है :

"सावनवा में झूला पड़ल, अमवा के डार,
हरी-भरी डारिया गावे कजरी अपार।"

यह गीत न केवल मौसम का चित्रण करता है बल्कि प्रकृति के साथ आत्मीय संबंध को भी प्रकट करता है। भोजपुरी लोकगीतों में पर्यावरणीय चेतना भी झलकती है। पेड़ों को काटने से रोकने वाले गीत, जल के महत्व को बताने वाले गीत और भूमि की उपजाऊ शक्ति की प्रशंसा करने वाले गीत यह सिद्ध करते हैं कि भारतीय समाज प्रकृति को केवल संसाधन नहीं, बल्कि जीवनदाता मानता है। उदाहरण देखें :

"नदिया ना सुखे, बनवा ना उजाड़,
धरती माई के इसे करब बंटवारा।"

यह पंक्ति स्पष्ट करती है कि समाज ने हमेशा प्रकृति की रक्षा और उसके संतुलन की चिंता की है।

निष्कर्ष :-

भोजपुरी लोकगीत भारतीय जीवन मूल्यों का दर्पण हैं। इन गीतों में जीवन की सरलता, श्रम की महत्ता, परिवार की पवित्रता, स्त्री के सम्मान, प्रेम की पवित्रता और भक्ति की गहराई अंकित है। यह गीत केवल लोक–संस्कृति की अभिव्यक्ति नहीं बल्कि सामाजिक शिक्षा और नैतिक आदर्शों के संवाहक भी हैं। भोजपुरी समाज का जीवन, जो मुख्यतः ग्रामीण और कृषि–प्रधान है, गीतों में रचा–बसा है। यही कारण है कि गीत केवल मनोरंजन नहीं बल्कि जीवन–दर्शन बन जाते हैं। इन गीतों से हमें यह समझ में आता है कि भारतीय समाज ने अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को कैसे संरक्षित किया। आज भी जब प्रवासी मजदूर विदेशों में या अन्य राज्यों में जाते हैं, तो भोजपुरी गीत ही उन्हें मातृभूमि से जोड़े रखते हैं। भारतीय जीवन मूल्य जैसे– सह–अस्तित्व, सामूहिकता, करुणा, नारी–सम्मान, आस्था और सत्यनिष्ठा–भोजपुरी गीतों में स्वाभाविक रूप से प्रकट होते हैं। ये मूल्य भारतीयता की आत्मा हैं। इस प्रकार भोजपुरी लोकगीत भारतीय संस्कृति के जीवंत प्रतीक हैं।

संदर्भ सूची :-

1. मिश्र, रामनाथ, भोजपुरी लोकगीत और समाज, भारती प्रकाशन वाराणसी, 2012, पृ. 45–46
2. पांडेय, जगदीश, भारतीय जीवन मूल्य और लोकसाहित्य, साहित्य भवन नई दिल्ली, 2015, पृ. 108
3. तिवारी, हरिनारायण, भोजपुरी संस्कृति के आयाम, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद पटना, 2018, पृ. 66
4. सिंह, अरुणेश, लोकगीत और भारतीय परंपरा, साहित्य गंगा प्रकाशन गोरखपुर, 2016, पृ. 48
5. चौबे, लक्ष्मण, भोजपुरी लोक धरोहर, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 2011, पृ. 54
6. शुक्ल, रमाकांत, भारतीय संस्कृति में लोकगीतों की भूमिका, ज्ञानपीठ, दिल्ली, 2014, पृ. 89
7. सिंह, गोपाल, भोजपुरी लोकगीत : एक अध्ययन, लोकभारती वाराणसी, 2020, पृ. 73

Email : prakashkrtripathi@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 25-31

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वर्तमान संदर्भ में स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दृष्टिकोण की सार्थकता

ममता सुशील, शोधार्थी, (शिक्षा शास्त्र)
डॉ. एकता भारद्वाज, शोध निर्देशिका
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय गजरौला, उ0 प्र0

वर्तमान संदर्भ में स्वामी विवेकानंद के 'शैक्षिक दृष्टिकोण की सार्थकता' एक महत्वपूर्ण और विचारणीय विषय है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन न केवल भारतीय समाज के लिए अपितु वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी अत्यंत सार्थक है। उनका शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण वर्तमान में कई मायनों में अत्यधिक उपयुक्त और प्रेरणादायक है। स्वामी विवेकानंद जी को एक महान शिक्षाशास्त्री के रूप में माना जाता है। उनके अनुसार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बालकों के व्यक्तित्व का संतुलित विकास करते हुए उन्हें संघर्षमय जीवन की बाधाओं का सफलतापूर्वक समाधान करना सिखा सके। उनके अनुसार वह शिक्षा पूर्णतः बेकार है, जो छात्रों की सजृन व चिन्तन क्षमता का विकास नहीं करती, मस्तिष्क की शक्ति नहीं बढ़ाती व चरित्र का निर्माण नहीं करती।

स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दृष्टिकोण की सार्थकता :-

आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास के अंतर्गत स्वामी विवेकानंद का मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी व्यक्ति तैयार करना है। आज के प्रतियोगिता प्रधान समाज में जहां आत्मविश्वास की आवश्यकता अधिक महसूस हो रही है, उनका यह विचार विद्यार्थियों को आत्म–संवर्धन के लिए प्रेरित करता है।

सकारात्मक दृष्टिकोण और संघर्ष का महत्व के अंतर्गत स्वामी विवेकानंद का यह मानना था कि जीवन में संघर्ष अनिवार्य है और इसे एक चुनौती के रूप में स्वीकार करना चाहिए। आज के युवा समाज में जहाँ मानसिक थकावट और अवसाद की समस्या बढ़ रही है, उनका यह दृष्टिकोण न केवल साहस देना है अपितु जीवन के संघर्षों का सामना करने की क्षमता भी विकसित करना है।

आध्यात्मिक शिक्षा और जीवन का उद्देश्य के अंतर्गत उनका मानना था कि शिक्षा को केवल भौतिक सफलता तक सीमित नहीं किया जा सकता। शिक्षा का उद्देश्य आत्म–ज्ञान और समाज के प्रति दायित्वों एवं जिम्मेदारी का विकास करना चाहिए। आज की भौतिकवादी और तकनीकी दुनिया में यह विचार महत्वपूर्ण है, क्योंकि आत्मिक संतुलन और उद्देश्यहीनता की भावना बढ़ रही है।

सामाजिक जागरूकता और सेवा के अंतर्गत स्वामी विवेकानंद ने यह भी कहा था कि शिक्षा का असली

उद्देश्य केवल व्यक्तिगत उन्नति नहीं, बल्कि समाज की सेवा करना है। वर्तमान समय में, जब सामाजिक असमानताएँ और संघर्ष बढ़ रहे हैं, उनका यह दृष्टिकोण हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत बन सकता है।

शारीरिक और मानसिक संतुलन में स्वामी विवेकानंद ने शारीरिक शिक्षा के साथ–साथ मानसिक और आत्मिक विकास पर भी जोर दिया। आज के समय में, जब मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएँ बढ़ रही हैं, उनके विचार इस बात को रेखांकित करते हैं कि केवल शारीरिक विकास ही नहीं, बल्कि मानसिक और मानसिक संतुलन भी उतना ही आवश्यक है।

स्वामी जी तत्कालीन प्रचलित शिक्षा की आलोचना करते हुए कहते हैं कि आप उस व्यक्ति को शिक्षित मानते है, जिसने कुछ परीक्षाएँ पास कर ली हो तथा जो अच्छे भाषण दे सकता हो, पर वास्तविकता यह है कि जो शिक्षा जनसाधारण को जीवन संघर्ष के लिए तैयार नहीं करती, जो चरित्र का निर्माण नहीं करती, जो समाज सेवा की भावना को विकसित नहीं करती तथा शेर जैसा साहस उत्पन्न नहीं करती ऐसी शिक्षा से क्या लाभ है? वर्तमान समय में विज्ञान की प्रगति, व्यापक व जटिल समाजों के विकसित होने के कारण जीवन की परिस्थितियों, समस्याओं एवं आवश्यकताओं में इतना परिवर्तन आया कि हमारी शिक्षा व शिक्षण प्रणाली दर्शन से दूर हो गई और उसे शिक्षा को दर्शन के साथ सामंजस्य स्थापित करना मुश्किल हो गया। यह सामंजस्य कैसे स्थापित किया जाए, किस प्रकार शिक्षा को दर्शन के समीप व दर्शन को जीवन के समीप रखा जाए? इस समस्या का समाधान करने के लिए आधुनिक समय में दर्शन एवं शिक्षा का अद्वितीय समन्वय स्थापित कर एक नवीन शास्त्र के विज्ञान शिक्षा दर्शन को जन्म दिया गया। शिक्षा और दर्शन दोनों शब्द अपना अलग–अलग अर्थ एवं स्वरूप रखते हुए भी एक दूसरे में समाहित हैं।

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त :–

1. स्वामी विवेकानन्द जी का मानना है कि शिक्षा ऐसी हो, जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास हो सके।
2. स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार शिक्षा ऐसी हो, जिससे बालक के चरित्र का निर्माण हो, मन का विकास हो, बुद्धि विकसित हो तथा बालक आत्मनिर्भर बने।
3. स्वामी विवेकानन्द जी का मानना है कि बालक एवं बालिकाओं दोनों को समान शिक्षा देनी चाहिए।
4. स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार धार्मिक शिक्षा पुस्तकों द्वारा न देकर आचरण व संस्कारो द्वारा देनी चाहिए।
5. शिक्षक एवं शिष्य के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिए तथा शिक्षक को शिष्य के साथ स्नेह एंव सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए।
6. सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार किया जाना चाहिए।
7. देश की आर्थिक प्रगति के लिए तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाये।
8. मानवीय एवं राष्ट्रीय शिक्षा परिवार से ही शुरू करनी चाहिए।
9. पाठ्यक्रम में लौकिक एंव पारलौकिक दोनों प्रकार, के विषयों को स्थान देना चाहिए।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, शिक्षा का अर्थ :–

विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का अर्थ मनुष्य में छिपी हुई सभी शक्तियों का पूर्ण विकास करना है, न कि

केवल सूचनाओं का संग्रह करना। उनके अनुसारए ''शिक्षा मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।'' उनके अनुसार, हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिसके द्वारा चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य स्वावलम्बी बनें। स्वामी जी व्यवहारिक शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। शिक्षा का अर्थ केवल विद्यालय में पढ़ाई तक सीमित नहीं है। यह एक व्यापक और समग्र प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और नैतिक विकास करना है। कुल मिलाकर, शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि उसे सही दिशा में उपयोग करना है ताकि समाज और व्यक्ति दोनों का समग्र विकास हो सके।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य :-

विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य वेदान्त दर्शन विशेष रूप से अद्वैत दर्शन पर आधारित है। वेदान्त दर्शन का सम्पूर्ण उद्देश्य निरन्तर संघर्ष द्वारा परिपूर्ण बनना, दिव्य बनना, भगवान तक पहुंचना और भगवान को देखना है। शिक्षा के उद्देश्य के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द का मुख्य ध्येय छात्रों में ''उत्तिष्ठत जागृत प्राप्य वरान्निबोधत'' अर्थात ''उठो, जागो और तब न रूको जब तक अपने उद्देश्य की प्राप्ति न कर लो की भावना विकसित करना है।

शारीरिक एवं मानसिक विकास का उद्देश्य :-

शिक्षा का उद्देश्य बच्चे का शारीरिक और मानसिक विकास करना है। शारीरिक उद्देश्य पर बल देते हुए स्वामी जी ने कहा कि हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा बालक भविष्य में विकसित नागरिक के रूप में राष्ट्रीय विकास व उन्नति में योगदान दे सके। स्वामी जी ने मानसिक उद्देश्य पर बल देते हुए कामना की है कि शिक्षा के द्वारा बालक दूसरों के लिए परजीवी बनने के बजाए आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खडा हो सके।

चारित्रिक तथा नैतिक विकास का उद्देश्य :-

स्वामी जी ने यह बात अनुभव की थी कि मनुश्य को शरीर से स्वस्थ और बुद्धि से विकसित होने के साथ–साथ चरित्रवान भी होना चाहिए। चरित्र ही मनुष्य को सत्यनिष्ठ तथा कर्तव्यनिष्ठ बनाता है। नैतिकता से इनका तात्पर्य सामाजिक नैतिकता और धार्मिक नैतिकता दोनों से था और चारित्रिक विकास से तात्पर्य ऐसे आत्मबल के विकास से था जो मनुष्य को सत्य मार्ग पर चलने में सहायक हो व उसे असत्य मार्ग पर चलने से रोके। उनका विश्वास था कि नैतिक व चरित्रवान मनुष्यों से ही कोई समाज या राष्ट्र आगे बढ़ सकता है व ऊँचा उठ सकता है।

राष्ट्रीय एकता एवं विश्वबन्धुत्व का विकास :-

स्वामी जी ने अनुभव किया कि परतन्त्रता हीनता को जन्म देती है जो दुःखों का सबसे बड़ा कारण है। जब स्वामी जी अमेरिका से भारत लौटे तो उन्होंने भारत की भूमि पर पैर रखते ही युवकों का आह्वान किया– ''तुम्हारा सबसे पहला कार्य देश को स्वतन्त्र कराना होना चाहिए और इसके लिए जो भी बलिदान करना पड़े, उसके लिए तैयार होना चाहिए।'' उन्होंने ऐसी शिक्षा व्यवस्था की आवश्कता पर बल दिया जो देशवासियों में राष्ट्रीय चेतना जागृत करें, उन्हें संगठित करें व देश की स्वतन्त्रता के लिए संघर्षरत करे।

धार्मिकता का विकास :-

स्वामी जी शिक्षा के द्वारा मनुष्य में धार्मिकता को बढ़ावा देना चाहते है तथा मनुष्य को धार्मिक बनाना

चाहते हैं। उनकी दृष्टि से धर्म वह है, जो हमें प्रेम सिखाता है और द्वेष व शोशण से बचाता है, हमें मानव सेवा के लिए प्रेरित करता है। अतः हमें बालक को प्रारम्भ से ही धर्म की शिक्षा देनी चाहिए। बच्चों को जीवन के अन्तिम उद्देश्य मुक्ति की प्राप्ति के लिए ज्ञान योग, कर्म योग, भक्ति योग, राज योग की ओर उन्मुख करना चाहिए।

आध्यात्मिक विकास :–

स्वामी जी का स्पष्ट मत था कि मनुष्य का भौतिक विकास आध्यात्मिकता की पृष्ठभूमि में होना चाहिए। उसका आध्यात्मिक विकास, भौतिक विकास के आधार पर होना चाहिए और ऐसा तभी सम्भव है, जब मनुष्य धार्मिक बने तथा धर्म का पालन करें। उनकी दृष्टि से वास्तविक शिक्षा वही है जो मनुष्य को आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त करने के लिए तैयार करती है।

समाज सेवा की भावना का विकास :–

स्वामी जी ने भारत की जनता की दरिद्रता को स्वय अपनी आँखों से देखा था। वे चाहते थे कि पढ़े–लिखे और सम्पन्न लोग दीन–हीनों की सेवा करें। समाज–सेवा से उनका तात्पर्य दीन–हीनों के उत्थान में सहयोग करने से था। वे आध्यात्मिक दृष्टि से भी समाज सेवा को अत्यधिक महत्व देते थे।

व्यावसायिक विकास :–

स्वामी जी ने भारत की दरिद्र जनता को बड़े निकट से देखा था। साथ ही उन्होंने पाश्चात्य देशों के वैभवशाली जीवन को भी देखा था और इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि उन देशों ने भौतिक सम्पन्नता, ज्ञान–विज्ञान और तकनीकी के प्रयोग से प्राप्त की है। अतः उन्होंने शिक्षा द्वारा मनुष्यों को उत्पादन एवं उद्योग कार्यों व अन्य व्यवसायों में प्रशिक्षित करने पर बल दिया।

जनसाधारण की शिक्षा :–

स्वामी जी ने कहा है कि ''मैं जनसाधारण की अवहेलना करना महापाप समझता हूँ। यह हमारे पतन का मुख्य कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को उपयुक्त शिक्षा, अच्छा भोजन, अच्छी सुरक्षा प्रदान नहीं की जाती तब तक राष्ट्रीय राजनीति बेकार सिद्ध होगी।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार पाठ्यक्रम :–

शिक्षा के पाठ्यक्रम में स्वामी विवेकानन्द्र ने प्राच्य धर्म, दर्शन, भाषा तथा पाश्चात्य ज्ञान–विज्ञान, तकनीकी एवं औद्योगिक प्रशिक्षण को स्थान दिया है। उन्होंने यह महसूस किया था कि पाश्चात्य जगत के भौतिक ज्ञान से हम अपना भौतिक विकास कर सकते हैं और देश के आध्यात्मिक ज्ञान से पश्चिमी जगत का कल्याण कर सकते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द का दृष्टिकोण समन्वयवादी, आधुनिक और व्यापक था। स्वामी जी शिक्षा के पाठ्यक्रम में लौकिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार के विषयों को पढ़ाना चाहते थे।.

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षण विधियाँ :–

शिक्षण विधियों के क्षेत्र में स्वामी जी की अपनी कोई देन नहीं है। उन्होंने कुछ परम्परावादी शिक्षण विधियों अनुकरण, व्याख्यान, स्वाध्याय तर्क और योग व कुछ आधुनिक विधियों निर्देशन,परामर्श, प्रयोग का समर्थन किया है। उन्होंने योग विधि को सर्वोत्तम विधि बताया है। वे ध्यान व एकाग्रता को भी महत्वपूर्ण मानते हैं क्योंकि इसके द्वारा बच्चे की मानसिक शक्तियों का विकास होता हैं।

शिक्षक :–

स्वामी जी कहते हैं कि शिक्षक दार्शनिक, मित्र तथा पथ प्रदर्शक है जो बालक को अपने ढंग से अग्रसर होने के लिए सहायता प्रदान करता है। शिक्षक का एकमात्र कर्तव्य ज्ञान की प्रक्रिया में आने वाली बाधाओं को दूर करना है। स्वामी जी के अनुसार शिक्षक को भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार का ज्ञान होना चाहिए। जिससे वह छात्रों को लौकिक एवं परालौकिक दोनों जीवन के लिए तैयार कर सके।

शिक्षार्थी :–

स्वामी जी के अनुसार किसी भी प्रकार के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है ब्रह्मचर्य व्रत का पालन आवश्यक है। शिक्षार्थी को संयमी होना चाहिए ज्ञान पिपासु होना चाहिए, अध्ययन में रुचि रखने वाला व परिश्रमी होना चाहिए। मन, कर्म व वचन से सत्य का पालन करने वाला होना चाहिए।

विद्यालय :–

स्वामी जी गुरुकुल शिक्षा का समर्थन करते थे, साथ ही उन्होंने जन शिक्षा के लिए सामान्य विद्यालय एवं विशिष्ट बच्चों के लिए विशिष्ट विद्यालयों की स्थापना पर बल दिया है। उनके अनुसार सभी प्रकार के विद्यालयों का प्राकृतिक वातावरण शुद्ध होना चाहिए। सामाजिक पर्यावरण आदर्शान्मुख तथा आध्यात्मिक विकास के लिए योग–साधना आवश्यक है।

महिला शिक्षा :–

स्वामी जी भारतीय नारी की दयनीय दशा देखकर अत्यन्त दुखी थे। वे मानते थे कि कोई भी राष्ट्र स्त्रियों को समाज में उचित स्थान और आदर दिए बिना प्रगति नहीं कर सकता है। स्त्रियों को भी पुरुषों के समान शिक्षित किया जाना चाहिए। स्वामी जी स्त्री को आदर्श गृहणी, माता, शिक्षिका एवं समाज सुधारक बनाने पर बल देते थे। वे लडकियों के लिए अलग विद्यालय की स्थापना व उनमे महिला शिक्षिकाओं की न्युक्ति करने के पक्षधर थे। महिला शिक्षा का अर्थ है महिलाओं को शिक्षा प्रदान करना ताकि वे आत्मनिर्भर, जागरूक और समाज में समान अधिकार प्राप्त कर सकें। यह न केवल एक व्यक्तिगत आवश्यकता है, बल्कि समाज और राष्ट्र के समग्र विकास के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। महिला शिक्षा का उद्देश्य महिलाओं को जीवन की विभिन्न क्षेत्रों में अपनी क्षमता को पहचानने और सशक्त बनाने का अवसर प्रदान करना है। शिक्षा महिला को आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाती है। पढ़ी–लिखी महिलाएं अपने परिवार और समाज के लिए बेहतर आय के अवसर उत्पन्न कर सकती हैं। यह उनकी सामाजिक स्थिति को बेहतर बनाने में मदद करता है और उन्हें स्वयं के फैसले लेने की स्वतंत्रता देता है। शिक्षित महिलाएँ स्वास्थ्य के प्रति जागरूक होती हैं और वे अपने परिवार को भी बेहतर स्वास्थ्य देखभाल प्रदान कर सकती हैं। साथ ही, महिला शिक्षा के माध्यम से जन्म दर, बाल मृत्यु दर, और कुपोषण जैसी समस्याओं में कमी लाई जा सकती है। महिला शिक्षा समाज में लिंग आधारित भेदभाव को कम करने में मदद करती है। जब महिलाएँ शिक्षा प्राप्त करती हैं, तो वे समान अधिकारों और अवसरों के लिए संघर्ष कर सकती हैं, जिससे समाज में समानता बढ़ती है। जब महिलाएं शिक्षा प्राप्त करती हैं, तो वे सामाजिक मुद्दों, कानून, राजनीति, और समाज में हो रहे बदलावों के प्रति अधिक जागरूक होती हैं। वे समाज में महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए तैयार होती हैं।

अनुशासन :–

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार अनुशासन का अर्थ है आत्मा से प्रेरित होकर कार्य करना। वे शिक्षक और छात्र दोनों को आत्मानुशासन का उपदेश देते थे। शिक्षकों को छात्रों के समक्ष उच्च आदर्श प्रस्तुत करने के लिए बल देते थे। जिससे बच्चे भी उनका अनुकरण करके आत्मानुशासन की ओर बढ सकें।अनुशासन का अर्थ है किसी निर्धारित नियम, आदर्श या आदेश का पालन करना। यह जीवन में नियमितता, व्यवस्था और आत्म–नियंत्रण को बढ़ावा देता है, जो किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक है। अनुशासन न केवल बाहरी नियमों का पालन करने से संबंधित है, बल्कि यह आंतरिक आत्म–नियंत्रण और आत्म–नियमन का भी भाग है।

निष्कर्ष :–

स्वामी जी के शैक्षिक विचार भारतीय धर्म एवं दर्शन पर आधारित है जो भारतीय जन–जीवन के अनुकूल है। आधुनिक समय में शिक्षा के क्षेत्र में पाश्चात्य एवं प्राच्य के समन्वय में उनके चिन्तन का अत्यधिक प्रभाव है। आज सम्पूर्ण विश्व में भारतीय आध्यात्म, पाश्चात्य विज्ञान एवं तकनीकी का प्रयोग हो रहा है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दृष्टिकोण वर्तमान संदर्भ में अत्यधिक सार्थक है। उनके विचारों के माध्यम से हम एक समग्र और संतुलित शिक्षा प्रणाली की ओर अग्रसर हो सकते हैं, जो न केवल भौतिक बल्कि मानसिक, शारीरिक, और आध्यात्मिक विकास पर भी ध्यान केंद्रित करती हो। उनके विचार आज भी हमारे जीवन में प्रासंगिक हैं, क्योंकि वे हमें सच्ची शिक्षा की दिशा दिखाते हैं जो समाज और व्यक्ति दोनों के लिए लाभकारी हो।

स्वामी विवेकानन्द ने अपने दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारों को मूर्त रूप देने के लिए रामकृष्ण मिशन की स्थापना की तथा देश–विदेश में अनेक शाखाएं स्थापित की साथ ही जन सेवा एवं जन शिक्षा की भी व्यवस्था की। स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक दर्शन में शिक्षा के सनातन मूल्य एव व्यावहारिक आदर्श सम्मिलित है जिनके प्रयोग द्वारा वर्तमान शैक्षिक समस्याओं का निराकरण सम्भव है। शिक्षा जगत की वर्तमान समस्याओं का समग्र समाधान स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक दर्शन व शिक्षण प्रक्रियाओं के माध्यम से सम्भव है। उनका शैक्षिक दर्शन सम्पूर्ण युवा जगत को भविष्य की चुनौतियों से निपटने के लिए तैयार करता है। घ्घ्द आज हम जो कुछ भी हैं वह इस समन्वित एवं व्यापक दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप ही है। आधुनिक शिक्षा को औचित्यपूर्ण बनाने के लिए स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचारों का अमूल्य योगदान है।

सन्दर्भ सूची :–

1 सक्सेना, एन आर स्वरूप (2009) ''शिक्षा दर्शन एंव पाश्चात्य तथा भारतीय शिक्षा'' आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।

2 बिहारी, रमन लाल एवं तोमर, गजेन्द्र सिंह'' विश्व के श्रेष्ठ शैक्षिक चिन्तन, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ

3 अग्रवाल, जे. सी ''उभरते भारतीय समाज में शिक्षा'' नई दिल्ली : जन शिप्रा प्रकाशन (2008)

4 चौहान, संजीव कुमार, शर्मा डॉ. योगेश्वर प्रसाद (2022) ''स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक दर्शन तथा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इसकी प्रासंगिकता'' www.jetir.org August 2022,volume 9, Issue 8

5 शर्मा, मुकेश कुमार, दुबे प्रमिला ''लोकाविष्कार अन्तर्राष्ट्रीय ई–जर्नल, ISSN 2277-727X,Vol-09, ISSUE-01, Oct-March 2020

6 शर्मा, रामकृष्ण ''स्वामी विवेकानन्द के विचारों की शैक्षिक एवं सामाजिक उपादेयता'' wwwijcrt.org, volume 10, ISSUE 7 July 2022 ISSN:2320-2882
7 सक्सेना, एन. आर, चतुवेर्दी, डॉ शिखा ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा'', आर लाल बुक डिपो मेरठ।
8 त्यागी, डा. सावित्री ''स्वामी विवेकानन्द की दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारधारा'' International journal of innovative social science & Humanities Research ISSN- 2349-1876
9 पाण्डेय, रामशक्ल (1999) ''विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशात्री, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
10 शर्मा, आर.ए. (2009) शिक्षा के दार्शनिक विचार एव सामाजिक मूल आधार'' आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
11 पाण्डेय, रामशक्ल (1999) '' विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशात्री, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

मोबाइल 9997598328
ई–मेल– mamtasushil19@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 32-34

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Feminist perspectives in the works of Alice Walker

Priya

Research Scholar, Department of English, Om Sterling Global University, Hisar, Haryana

Dr. Farah Naz Farrukh

Assistant Professor, Department of English, Om Sterling Global University, Hisar, Haryana

Abstract :

The present paper attempts to critically analyse the works of Alice Walker and find various perspectives, techniques, narrative styles used by the writer in her works. Alice Walker has been a renowned name in English literature since decades, and has proved herself by writing masterpieces which all together has given a new outlook. Born in poverty ridden and enslaved family, Alice since childhood faced many atrocities which shaped and reshaped her. It was her writings which became a medium of expression and in them expressed her closest and deepest emotions or thoughts.

The age in which a person is born affects him or her directly and indirectly; being a social animal we humans can't live in proper isolation and when we mix with society its impact is clearly visible and is quite obvious. An individual's beliefs, thought patterns, emotions, behavioural patterns are decided and taught by the society around it. As any language is learnt through imbibing the language spoken by him/her same is the case with beliefs and when any individual opts to writing it is sure that he will be presenting the society; same goes with the present writer Alice Walker who does not remain untouched from the society she was born and brought up. This paper will try presenting in the lights of feminism and depiction of women in her works.

Keywords – Walker, atrocities, feminism.

Introduction :

Alice Walker had a whole load of works in her trunk which are very famous and celebrated ones like The Color Purple, Meridian, Possessing the Secret of Joy, Third Life of Grange Copeland, In Search of My Mother's Garden, and many more. All these works have beautifully and artistically woven stories in which many issues, belief systems, thinking patterns, societal norms have been portrayed but women stand tall and at the center of these. Walker is an Afro American novelist, short story writer, poet who in her young days has seen harsh realities of life and have given her a very

deeper insight which helps her to go deeper into any topic and bring out some very intricate details. Minute and intricate details about females presented in her works are clearly visible. She presents a realistic picture that how women of different age groups suffer in the hands of men but at the center are black women. She says and makes it very clear that black women suffer twice as one they are women and other that they are black. They are harassed, ill-treated and given no rights whether it is Celie, Shug Avery, Nettie, Sophia from The Color Purple; Meridian Hill from Meridian; Tashi from Possessing the Secret of Joy and many more characters portrayed in her works.

Feminist Perspective :

It is often seen that Alice Walker in her writings adopts Carl Jung's archetypal patterns and through it brings out some worth noting facts. She engages herself to bring out morals of protest, resist and finally liberation which were the outcomes of her involvement in the Civil Rights Movement. In the earlier writings it is found that the main characters are seen protesting against the social set up and belief systems while in the more mature ones protagonists finally get liberated from the taboos and load they had been carrying in the name of culture, tradition etc. A new individual in new light is presented in the later works.

Walker has presented the issues related to women; their mental traumas, physical changes, emotional turmoil – all are artistically and vividly stated. One of her most celebrated work The Color Purple deals with the diverse characters facing loads of diverse problems. The protagonist Celie when an adolescent was sexually harassed and impregnated by her own step father. She gave birth to two children, they were never shown to her and were sold.

Just an animal she was driven & married to an aged man who had children, there also she gets no peace, comfort and love and suffers immensely in his hands. When Nettie starts to fight for herself, Celie remarks – "I don't know how to fight, all I know how to do is stay alive."

This is not only Celie's state but through her she portrays the condition of every women. Celie leads an unsatisfied cold married life and finally decides to break a cycle of abuse from Mister and sticks for herself – "Until you do right to me, everything you think about is going to crumble."

Shug Avery another character is an individual who is empowered one and is a blue singer. She is in total contrast to Celie and helps become empowered. There are other minor characters like Nettie, Sophie who are seen suffering in the hands of males of society at various steps.

In the novel Possessing Secret of Joy, the protagonist Tasha is torn apart between the cultural roots and advancing societal beliefs. She suffers so much that she looses her own mind, inspite of several treatments she is doomed. The idealists impressions about the cultural beliefs make her feel guilty for not following them and when she follows it her body as well as mental peace is lost.

The work Meridian talks about the character named Meridian Hill who struggles personally and wants to overcome the patriarchal society. She is the one who goes a proper transformation; once she was a poor, uneducated girl but finally becomes an independent woman with her own identity. Topics of vivid diaspora are discussed like racism, sexism, cruelty, rape, loneliness, disruption of gender roles etc.

Walker in different works talks about double oppression and uses the term womanist to show and present Afro American feminism; she brings out the fact that proper political, social and economic platform is required. Walker is with the ones who are ruined & oppressed especially women. Her works include bone chilling scenarios, facts and brings out crude reality in front of the world. She picturises the females who grew and became an epitome of strength and valour. The females do not divorce themselves from responsibilities & duties but they manage to resist adverse situations and came out heroically.

Education is given prime importance and brings out this concept in various works. She feels and concludes that it can transform the lives of women drastically making them aware of their own rights and about things going on in the outer world. She feels that when a woman is educated she alone does not become educated but the whole family. This fact has been brought out in different novels like The Color Purple, Meridian, Possessing the Secret of Joy etc. This is seen when the protagonists are educated ones, they stand and fight for it.

Meridian sees black young women who become strong professors and secretaries :

"They all had changed their appearance with the objective that they may look progressively like white women."

Conclusion :

Walker turns out to be immensely successful in portraying women, they are presented in true light as they were during her time. There is no extravagance or exaggeration while delineating them. Different women of different age groups are clearly presented by her and becomes a psychologist mentioning inner alienated as well as outer humiliated attitude. Stages of estrangement, loss of identity, craving for it are all described. The reservoir of creativity is whole lot of black culture and her aesthetic sense apprehends them beautifully.

References :

1. Alice Walker (2009). *The Columbia Encyclopedia*, Sixth Edition. New York: Columbia University Press.
2. Walker, A. (2006). *The Color Purple*. Wadsworth Publishing.
3. Walker, A. (1976). *Meridian*. Washington Square Press.

Mob : 9499264360
Email : priyaa20133@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 35-40

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मोहन राकेश का व्यक्तित्व

हेमन्त कुमार (शोधार्थी)
डॉ. रचना शर्मा (शोध निर्देशिका)
हिन्दी विभाग, श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टिबड़ेवाला विश्वविद्यालय, विद्यानगरी, झुंझुनूं, राजस्थान –333010

शोध आलेख सारांश :–

आचंलिक उपन्यासों की आंचलिकता ग्रामीण हो या शहरी इस संबंध में विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ विद्वान जहाँ आंचलिकता को नितान्त ग्रामीण जीवन से जोड़ते है, तो कुछ विद्वान इसके अन्तर्गत शहर के विशिष्ट चित्रण को भी स्वीकार करते हैं। ग्रामीण परिवेश समर्थित विद्वानों में डॉ0 आदर्श सक्सेना, डॉ0 हरदयाल जी आंचलिक उपन्यास को अपरिचित ग्राम जीवन का चित्रण मानते हैं तो वहीं नन्ददुलारे वाजपेयी जी के अनुसार ''आंचलिक कथाओं में चित्रित विलक्षण समाज शहर में नहीं हो सकता हैं, यह ग्राम समाज की विशेषता है।'' जबकि इससे विपरीत डॉ. सुरेश सिन्हा, डॉ. कांति वर्मा आदि विद्वानों ने आंचलिक कथा साहित्य को विशिष्ट ग्राम जीवन तक सीमित न रखते हुए इसे शहर के साथ जोड़ा है। महेन्द्र चतुर्वेदी के अनुसार ''आंचलिक कथा की वर्ण्य वस्तु विशुद्ध रूप से ग्रामीण हो यह अनिवार्य नहीं है।'' डॉ0 कांति वर्मा के अनुसार, ''आंचलिक शब्द का तात्त्विक अर्थ केवल ग्रामीण ही नहीं है।'' इससे स्पष्ट होता है कि आंचलिक कथा साहित्य की पृष्ठभूमि ग्रामीण या शहर दोनों में से कोई भी हो सकती है। हालाँकि यदि गहराई से देखा जाय तो नगर अंचल की अपेक्षा ग्राम्य अंचल ही आंचलिक साहित्य का उपयुक्त आधार अधिक लगता है, क्योंकि शहरों की जिंदगी में यान्त्रिकता, विकृतियाँ, जटिलता तथा अजनबीपन अधिक मिलता है जबकि गाँवों में मानवीय मूल्य अपने पूरे उत्कर्ष पर दिखाई देते हैं, यही कारण है कि जब आंचलिक उपन्यास लिखने का एक दौर उमड़ा तो उस दौर में जबरन लिखी गयी कृतियाँ जो ग्राम्यांचल पर आधारित थीं, असफल रहीं।

इस संदर्भ में डॉ0 चन्द्रशेखर कर्ण ने ठीक ही लिखा है कि ''आगे चलकर कुछ फैशन परस्त, छद्म लेखकों द्वारा सिर्फ उसके मुहावरों का अर्क लगाकर आंचलिकता के नाम पर प्रस्तुत किया गया है। लेकिन उनमें हमारा आज का गाँव, उसका बदलता हुआ चेहरा, उसकी नयी सामाजिक और मानसिक स्थितियाँ और समस्याएँ अपने जीवित सत्य के साथ तो नहीं अभिव्यक्त हो सकीं, बल्कि अक्सर शहरी मध्यवर्ग की मनःस्थितियाँ ही गँवई परिवेश की खूँटी पर टाँग दी जाती है।'' वास्तव में किसी भी आंचलिक कृति की श्रेष्ठता का श्रेय उसकी आंचलिकता पर निर्भर करता है, जिसके लिए किसी भी लेखक पर उसके कथा–क्षेत्र के चुनाव को लेकर दबाव नहीं बनाया जा सकता है। लेखक पूर्ण रूप से स्वतंत्र है कि वह ग्राम–जीवन के यथार्थ का ईमानदार साक्षात्कार कराये या नगर जीवन का। डॉ0 राजेन्द्र अवस्थी के अनुसार ''आंचलिकता का आग्रह परिवेश को सजीवता से प्रस्तुत करने

का है, चाहे वह शहर का हो या गाँव का। हिन्दी में पिछड़े ग्रामीण समाज को चित्रित करने वाली आंचलिक कृतियों की ही अधिकता है किंतु संसार की अनेक भाषाओं में सीमित भू–भाग के समुन्नत जीवन को लेकर लिखी श्रेष्ठ आंचलिक कृतियाँ भी मिलती हैं।''

मूल शब्द : व्यक्तित्व, आत्मनिर्भरता, अपमान।

भूमिका :–

मोहन राकेश का व्यक्तित्व एवं कृतित्व उन विषयों से जुड़ा है, जिनके द्वारा कोई भी लेखक अपने जीवन के सत्य एवं लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता था। मोहन राकेश के सभी पात्र जीवन्त हैं, उनके व्यक्तित्व में व्यक्ति की मनोदशा, जिजीविषा एवं जज्बात स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। जो बाद में व्यक्तित्व के रूप में परिणीत हो जाते हैं। रचनाकार के लिए आत्मबल, आत्मनिर्भरता, स्वच्छन्दता एवं स्वास्थ्य आपस में सभी आवश्यक हैं, जिनके द्वारा रचनाकार में सृजनात्मक शक्ति का जन्म होता है। उपन्यासकार रचनाओं पर निर्माण करते समय विभिन्न संस्कृतियों का अवलोकन करता है, जो कृतिकार के लिए आवश्यक है। भारतीय एवं पाश्चात्य समाज में स्त्री एवं पुरुष में काफी अन्तर है। दोनों संस्कृतियों की परिस्थितियों में विचारधारा, रीति–रिवाज एवं परम्पराएँ अलग–अलग हैं। मोहन राकेश ने पाश्चात्य दर्शन को अपने रचना संसार से जोड़ा, जो उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को प्रदर्शित करता है।

लेखिका ने पूरे समाज को नए भाव दिए, जिसमें बदलते परिवेश की मनोदशा एवं बदले हुए मापदण्ड एवं मानदण्ड भी स्पष्ट किए। अधिकांशतः मोहन राकेश के कृतित्व में स्त्री के अस्तित्व को संकटमय बताया, जो सामाजिक एवं सांस्कृतिक सच्चाई की छाया है।

स्त्री के अस्तित्व का सदा संकट रहा है। केवल वर्गानुसार इस संकट का रूप बदलता रहा है। निम्न वर्ग में यह समस्या प्रत्यक्ष आ जाती है, लेकिन उच्च वर्ग में परोक्ष रूप से। निम्न वर्ग की स्त्री लगभग पूरी तरह गृहस्थी का बोझ अपने कंधे पर ढोती है। झाड़ू–पौंछा करने जैसे काम करके जो कमा सकती है, उससे अपना घर–परिवार पालती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि घर का काम तो वह जन्म से ही अपने नाम लिखवा कर लाई है। इस वर्ग का काम पुरुष करता ही नहीं है या करता है तो अपनी सारी कमाई को शराब आदि व्यसनों में लगाकर गृहस्थी के दायित्व से मुक्त रहता है। कई बार तो वह अपनी पत्नी की कमाई को भी खत्म करना अपना जन्मसि अधिकार समझता है।

लेखिका ने अभिजात्य वर्ग की नारी के जीवन को अभिशापित देखा है। उन्होने अपनी रचनाओं में अधिकतर उन समस्याओं को व्यक्त किया है, जो मनोरोग से ग्रसित हैं। नारी को शारीरिक और मानसिक कष्ट भी दिए जाते हैं। जैसे– अपमान, तिरस्कार, घृणा, बेइज्जती, परिहास–उपहास। ये सभी जीवन की यातनाएँ हैं, जो मध्यवर्गीय या अभिजात्यवर्गीय परिवारों से जुड़े हैं। अधिकार मूल्यों में गिरावट आई हैं मूल्यों के स्थान पर कई प्रकार की दुर्बलताएँ जन्म ले रही हैं, जो नारी के नारीत्व को समाप्त करने में लगी हैं। नारी शोषण किसी वर्ग की समस्या नहीं है। यह पूरे समाज की समस्या है। कारण वही चिर–परिचित आर्थिक, सामाजिक किसी न किसी प्रकार के शक्ति प्रदर्शन की लालसा तथा मानव–मन की विकृति। यह तिरस्कार भी साधारण नही ं वरन् समाज की अत्यन्त निष्ठुरता का फल है। नारी के स्वभाव ने उसकी कोमलता को, उसकी दुर्बलता को दिपा दिया गया है। नारी ने अपनी शक्ति को कभी जाना और कभी नहीं जाना। नारीत्व की कोमलता से पुकारी जाने वाली

दुर्बलता के साथ बंधी हुई वेदना प्रत्येक युग में तथा परिस्थिति में नवीन रूप में आती रही है, परन्तु उसकी वर्तमान दशा करुण है। मोहन राकेश ने नारी सशक्तिकरण के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किए हैं। नारी में कोमलता और दुर्बलता दोनों ही मिलती हैं। आर्थिक समस्या के कारण उसे जीवन में कई बार अपमानित किया जाता है, जो उसके जीवन के अवरोधक एवं बाधक तत्व हैं। नारी स्वतंत्रता चाहती है, परन्तु समाज के लोगों ने उसकी स्वतंत्रता को सीमित कर दिया। स्त्री की सबसे बड़ी समस्या उसकी आर्थिक पराधीनता हैं। प्राचीनकाल से ही स्त्री के बन्धनों में नियंत्रित करके उसके क्षेत्र को सीमित करने का प्रयास किया गया है। वर्तमान में स्त्री का स्वाधीन स्वरूप यहीं तक सीमित हो गया है कि अर्थोपार्जन करने के उपरान्त भी आर्थिक रूप से पूर्ण स्वतंत्र नहीं है। पुरुष के हर प्रकार के अत्याचार को झलेने के लिए बाध्य हो जाती है, क्योंकि और कोई उपाय उनके पास नहीं है। पति के अत्याचारों का विरोध करने के लिए वह घर से बाहर जा नहीं सकती। स्त्रियों का पिता के घर रहना अच्छा नहीं समझा जाता। पुरुष आर्थिक रूप से स्वतंत्र है। अतः वह समाज के हर क्षेत्र में पूरा अधिकार रखता है। मोहन राकेश ने जीवन यापन करने के रास्तों को सुमागीय बनाने का प्रयास किया, जिससे नारी का नारीत्व बच सके। समाज, पति और पिता, उसके साथ अत्याचार न करें।

मोहन राकेश ने 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' शेषयात्रा 'रुकोगी नहीं राधिका' में व्यक्त किया है। आधुनिकता एवं उत्तर आधुनिकता के दौर में जहाँ आज का युवा सब कुछ जल्द ही प्राप्त कर लेना चाहता है वहीं आज की युवती भी इसी सोच से परिचालित है। देह की वर्जनाओं को झुठलाकर वह प्रदर्शन की वस्तु बनकर सब कुछ पा लेना चाहती है। सभ्यता के इसी दौर में 'स्त्री विमर्श' अब एक ऐसा मुहावरा बनता जा रहा है, जिससे आज भी युवती पीछा छुड़ाना चाहती है। यद्यपि दे हके स्तर पर वह आज भी छली जा रही है। उसकी शारीरिक क्षमताएँ कई बार उसे राह से पीछे धकेल देती हैं, फिर भी वह अपने अस्तित्व की लड़ाई में कुछ सफल होने के मंसूबे बुन रही है।

मोहन राकेश एक जागरूक एवं निष्ठावान साहित्यकार है। स्वतंत्रता के पश्चात् की सशक्त रचनाकार के रूप में उन्हें साहित्य प्रेमी हमेशा याद करते हैं। उनके व्यक्तित्व का हिन्दी साहित्य जगत में असाधारण महत्व है। उन्होंने आधुनिक एवं भौतिकवादी समय के पश्चात् जनजीवन का बहुमुखी चित्रांकन किया है, मोहन राकेश का साहित्य परिणाम एवं परिमाण में प्रचुर योगदान देता है साथ ही वैवव्य की दृष्टि से सराहनीय है। उनके साहित्य में जीवन मूल्यों के प्रति अटूट आस्था है। इसका प्रमाण स्वयं उनका प्रवासी साहित्य है। मोहन राकेश ने अनेक विधाओं में साहित्य रचा है, परन्तु वे मुख्यतः उपन्यासकार है, साथ ही वह महान महाशिल्पी हैं। साहित्य जगत में उनका व्यक्तित्व उच्च कोटि का है।

जीवन की अलग–अलग इकाईयों में बंटे होने पर भी उनका समग्र व्यक्तित्व सतरंगी आभा से युक्त है। उनके व्यक्तित्व में ब्रह्मश्रुत, बहुपठित, बहुभाषिक, समाहित है, जो उनके व्यक्तित्व पर एक विशेष छाप छोड़ता है और उनके जीवनवृत्ति एवं गुणवत्ता पर। 'साठोत्तरी हिन्दी महिला कथाकारों में 'मोहन राकेश' का स्थान उल्लेखनीय हैं 'सरिता' में छपी प्रथम कहानी 'लाल चूनर' से लेकर अब तक उन्होने अनेक कहानियाँ और छः उपन्यासों की रचना की है। छः उपन्यासों के आधार पर मोहन राकेश ने साठोत्तरी महिला उपन्यास परम्परा में अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त किया। इनकी रचनाओं में नारी और नारी से जुड़ी समस्याएँ ही प्रधान रही हैं। साठोत्तरी महिला लेखिकाओं में विशेष रूप से 'मन्नू भण्डारी', 'कृष्णा सोबती', 'मेहरुन्निसा परवेज', 'मृणाल

पाण्डेय', 'मृदुला गर्ग', 'राजी सेठ' आदि ने अपने साहित्य में नारी त्रासदी को अभिव्यक्त किया है। साठोत्तरी दशक में अनगिनत संख्या में महिलाएँ हिन्दी साहित्य जगत में प्रवेश कर रही है। वह स्त्री से जुड़ी हुई समस्याओं को और उसके जीवन संघर्ष के आधार बनाकर उपन्यासों और कहानियों को आधार बनाकर रचना आरम्भ करती है, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं रहा कि सारा का सारा स्त्री लेखन सार्थक एवं प्रगतिपरक है क्योंकि 'डॉ. प्रेमपाल शर्मा' के अनुसार– ''कुछ लेखिकाओं के पास कलम है, कागज है, लेखक बनने की धुन है, लेकिन वह जिन्दगी नहीं जिसकी आवश्यकता कथा साहित्य को रही है और उसकी उम्मीद भी नहीं, जहाँ कहानियों की खेती होती है।'' लेकिन मोहन राकेश का कथा साहित्य इन आक्षेपों से ऊपर उठता है, क्योंकि मोहन राकेश ने नारी–जीवन के उन पहलुओं को चित्रण देने का प्रयास किया है, जो अत्यन्त यथार्थ है।

हिन्दी साहित्य जगत में मोहन राकेश ने नारी त्रासदी, उसकी पीड़ाओं एवं कष्टों को अपनी रचनाओं में व्यक्त किया। अधिकांशतः लेखिका के नारी पात्र उच्च वर्ग के, अभिजात्य वर्ग एवं प्रवासी मानसिकता के हैं। मोहन राकेश के कथा साहित्य में भौतिकवादी जीवनशैली और समाज का यथार्थ है। उनके कथा–साहित्य में नारी का नारीत्व, स्त्री का स्त्रीत्व एवं पुरुष का पुरुषत्व इन तीनों का संयोजन कर अपनी कृतियों में ढाला है।

लेखिका ने अपने बारे में बहुत कम लिखा है। उनके साहित्य के विषय में अलग–अलग साहित्यकारों ने विभिन्न राय प्रस्तुत की। किम के साथ विवाह करके जब वह अमेरिका चली गई तभी उनके व्यक्तित्व के बारे में जानकारी मिली। मोहन राकेश का व्यक्तित्व अन्य साहित्यकारों की अपेक्षा अलग है। उनका जीवनृत्त कई प्रकार की चुनौतियों से भरा हुआ है। माता–पिता शिक्षित होने के कारण उन्हें बाल्यकाल से ही अच्छे संस्कार प्राप्त हुए। 'मोहन राकेश' के नाम से उनकी प्रारम्भिक रचनाएँ छपीं। बाद में हिन्दी कथा साहित्य में मोहन राकेश के नाम से विख्यात हुईं। जैसा कि हम जानते हैं कि बाल्यकाल में पड़े संस्कार एवं प्रभाव मनुष्य जीवन का सम्पूर्ण विस्तार करते हैं। मोहन राकेश से बचपन ही 'सुमित्रानन्दन पन्त' के सहचर्य में पलती रहीं। प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होने के कारण अंग्रेजी साहित्य को अधिक चाव से पढ़ती थीं। आत्म–व्यक्तित्व में लेखिका ने एक स्थान पर लिखा है– ''मैं उन साहित्यकारों की ओर विशेष रूप से आकर्षित हुई, जिन्होंने विभिन्न पक्षों और तत्कालीन समस्याओं पर बहुत कुछ लिखा। यहाँ रिटाटोस्स्टॉयल, गोर्की, गॉस्टवर्दी, थॉमस आर.डी., जॉर्ज बनार्ड शॉ एवं पी.वी. शैली जैसे यथार्थवादी लेखकों से बहुत प्रभावित हुईं जो उनके शिक्षित एवं दीक्षित काल का विशेष समय है। दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में तीन वर्ष अध्यापन कार्य करती रहीं। इसके पश्चात् फुलब्राइट स्कॉलरशि पर अमेरिका साहित्य के अध्ययन के लिए अमेरिका प्रस्थान कर वहीं 'ब्लामिंगटन इंण्डियाना' में उन्होंने दो वर्ष पोस्ट डॉक्टरल अध्ययन किया।

मोहन राकेश की शिक्षा भारतीय एवं पाश्चात्य संस्कृति का मिश्रण है, जो उनके लेखन कार्य को प्रतिबिम्बित करता है। शिक्षा को गतिमयी बनाने के लिए यशपाल, अज्ञेय, हरिवंश राय बच्चन, अमरकान्त, महोदवी वर्मा एवं डॉ. नामवर सिंह आदि के लेखन से उनका जीवन अधिक प्रभावित हुआ। मोहन राकेश पर अमरीका एवं यूरोप के कई विदेशी लेखक, दार्शनिक, चिन्तक, विचारक एवं मीमांसकों का विशेष प्रभाव पड़ा, इन्होंने अपनी बौद्धिक क्षमता को अधिक से अधिक पैना एवं तीखा किया।

''उनके पति किम हवार्ड यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर हैं। दोनों एक–दूसरे से 1600 मील की दूरी पर रहते हैं। वह बागवानी करती हैं, मकान की मरम्मत करवाती है। और मजे में 'शोरवुड' में रहती हैं। 'शोरवुड' में घर

खरीदना आम आदमी के लिए सम्भव नहीं। जब लोग जान जाते हैं कि वह गत बीस साल से वहाँ रह रही है, तब चकित रह जाते हैं। इतना बड़ा विश्वविद्यालय जिसकी परिधि में लाखों छात्र बसते हैं, अभी भी उसे गाँव का दर्जा हासिल है। गाँव का दर्जा होने से डाकिया–डाकघर में डाक नहीं डालता। रास्ते में लगे डिब्बों में छोड़ जाता है, वही हाल अखबार वालों का है।''

मोहन राकेश का वैवाहिक जीवन बड़ी परेशानियों एवं उलझनों से भरा हुआ था। दाम्पत्य जीवन में अलग–अलग संस्कृतियों के मिलने से जीवन अनुभवपूर्ण एवं चुनौतीमय बन जाता है। लेखिका ने अपने व्यक्तित्व को गरिमामयी बनाने के लिए दाम्पत्य जीवन को चुना, जिससे एक–दूसरे के विचार एवं मन की स्थिति को पहचान सकें।

सारांश :-

पाश्चात्य साहित्य में आंचलिक उपन्यासकारों में थामस हार्डी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। स्थानीय जीवन की गहराई में जाकर चरित्र के सम्पूर्ण स्वरूप का उद्‌घाटन, जीवन के अनेक क्षेत्रों में उसका प्रदर्शन पूर्ववर्ती उपन्यासों में पूर्णतः नहीं हुआ था। यह कार्य हार्डी द्वारा सम्पन्न हुआ। हार्डी के उपन्यास ग्रामीण झाँकियों से परिपूर्ण है। अपनी नियतिवादी दार्शनिक मान्यता के बावजूद भी हार्डी अपने पात्रों की स्वाभाविकता नष्ट नहीं होने देते। उनके पात्र नियति के हाथों खिलौनें मात्र है, जो भाग्य की चट्टान के साथ टकराकर बिखर जाते हैं और टूट जाते है। अपने उपन्यास 'टैस ऑफ दी डर्वीवल' में जहाँ एक ओर उन्होंने ब्लैकमूर के मर्लोट गाँव के रम्य रूप का वर्णन किया है तो वहीं दूसरी ओर 'फार फ्राम द मैडिंग क्राउड' के ग्रामीण दृश्य अंग्रेजी उपन्यास में आज तक के प्रस्तुत वास्तविक चित्रण में अपना एक विशेष स्थान रखते हैं। शायद इसलिए हार्डी की तुलना मुंशी प्रेमचन्द से की जाती है और कहा जाता है कि प्रेमचन्द की तरह वे भी ग्रामीण आत्मा के सच्चे प्रतिनिधि हैं। अपने दूसरे उपन्यास 'वेसेक्स' में हार्डी ने वेसक्स के विशेष अंचल को अपनी कथा का आधार बनाया है। उनका यह प्रयास अपने समय के अन्य उपन्यासकारों से भिन्न था, उन्होंने अपने चरित्रों को जिस सामाजिक जीवन का पात्र निर्धारित करने का प्रयास किया है, वे न केवल समाज वरन् उस अंचल की जलवायु, मौसम, परम्परागत कलात्मकता आदि से पूर्णतया प्रभावित थे। 'गाइल्स बिन्टरबोर्न' अपने क्षेत्र के सभी वृक्षों को अच्छी तरह पहचानने वाला कृषक था। 'ग्रैब्रियल ओक' बहुत अच्छा गड़रिया था तथा 'टैस' दुग्धालय के कार्य से सुपरिचित श्रमजीवी था। हार्डी के इन उपन्यासों को कुछ अंग्रेज समीक्षक परम्परा के बहुत अनुकूल नहीं मानते और अत्यधिक ग्रामीण चित्रण के कारण वाल्टर ऐलन ने उसे पिछड़ा हुआ व्यक्ति कहा है जो भी हो हार्डी ने अपने उपन्यासों में पात्रों के सामाजिक जीवन का ही नहीं बल्कि प्रकृति का भी सुन्दर चित्र उपस्थित किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध : ठेठ हिन्दी का ठाठ, प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण सन् 2011 ई0।
2. ठाकुर जगमोहन सिंह : श्यामा स्वप्न, सं0 डॉ0 श्री कृष्ण लाल, प्रकाशन : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी संस्करण सन् 1953 ई0।
3. देवकीनन्दन खत्री : काजल की कोठरी, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नेताजी सुभाष मार्ग, नई

दिल्ली, पहली आवृत्ति, सन् 2015 ई0।
4. देवकीनन्दन खत्री, : कुसुमकुमारी, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, पहली आवृत्ति, सन् 2009 ई0।
5. देवकीनन्दन खत्री : चन्द्रकान्ता, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, पहली आवृत्ति, सन् 2010 ई0।
6. पं0 बालकृष्ण भट्ट : नूतन ब्रह्मचारी, हिन्दी प्रदीप, 01 फरवरी सन् 1886 ई0।
7. पं0 बालकृष्ण भट्ट : सौ अजान एक सुजान, हिन्दी प्रदीप सितम्बर सन् 1890 ई0।
8. मेहता लज्जाराम शर्मा : धूर्तरसिकलाल, प्रकाशक : निजश्री वेंक्टेश्वर यन्त्रालय प्रकाशित, संस्करण सन् 1899 ई0

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 41-45

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

दक्षिण भारत की कोरागा जनजाति : एक अंतदृष्टि अध्ययन

नयना जैन, शोधार्थी
डॉ० सुमन कौशिक, मार्गदर्शिका
सी० एम० आर विश्वविद्यालय, बैंगलुरु।

'कोल किरात भील्ल, बनवासी मधु, सूचि सुंदर स्वादु सुधा सी।
भरि भरि परन पुती रचि रूरी, कंदमूल फल आखर जुरि।
सबहि देहि कर विनय प्रनामा, कहि कहि स्वाद भेद गुण नामा।
देहि लोग बहु मोल न लेंही, फेरत राम दोहाई देही।।'

उक्त चौपाई तुलसीदास के रामचरितमानस के अयोध्याकांड से हैं। भगवान राम के वन गमन के समय निषादराज (श्रंगवेरपुर के आदिवासी राजा तथा राम के बाल सखा जिन्होंने केवटराज से कहकर राम को गंगा पार करवायी) की प्रजा जिसमें कोल, किरात, भील वनवासी भी शामिल थे। भगवान राम की खोज में निकले भरत तथा समस्त अयोध्यावासियों का उनके क्षेत्र में पहुंचने पर कंदमूल तथा फल से सबका स्वागत करते हैं। शबरी जिसने राम को अपना झूठा फल खिलाया वह भी एक आदिवासी ही थी। महाभारत में भी जनजातियों का उल्लेख मिलता है। एकलव्य नामक भील जिसने द्रोणाचार्य को गुरु दक्षिणा में अपना अंगूठा अर्पित कर दिया था जिसका दंतकथाओं में एक आदर्श शिष्य के रूप में चित्रण किया जाता है। मुंडाओं तथा नागाओं ने युद्ध के समय कौरवों की ओर से पांडवों के विरुद्ध लड़ने का दावा किया है। भीम का पुत्र घटोत्कच जिसने महाभारत युद्ध में असाधारण वीरता का प्रदर्शन किया उसकी मां भी जनजाति से थी। अर्जुन ने भी एक नागा राजकुमारी चित्रांगदा से विवाह किया था।

प्राचीन काल से जनजातीय समुदाय के लिए वनवासी, गिरिवासी या अरण्यवासी शब्द का प्रयोग किया जाता रहा है क्योंकि जनजाति समुदाय प्रकृति प्रेमी होते हैं तथा वनों से उनका गहरा प्रेम होता है। ये लोग प्रकृति के उपासक होते हैं तथा उनकी आजीविका अधिकांशतः वनों पर ही निर्भर होती है। इनका निवास स्थान मूलतः निर्जन स्थानों, पर्वतों तथा वनों के समीप पाया जाता है। आज इन्हें आदिवासी, आदिम जाति, जनजाति तथा अनुसूचित जनजाति आदि नाम से संबोधित किया जाता है। इन्हें आदिवासी इसलिए कहा जाता है क्योंकि आदिकाल से यह भारत के निवासी माने जाते हैं। ये अपनी अनोखी सांस्कृतिक विरासत से भारतीय संस्कृति को विशिष्ट पहचान प्रदान करते हैं।

डॉ० श्रीनाथ शर्मा के मतानुसार 'भारतीय समाज में प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक आदि समूहों एवं वनवासियों का उल्लेख प्राप्त होता है। वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में जनजातियों के नाम भी उल्लेखित

है। जनजाति या आदिम जाति 'ट्राइब' Tribes शब्द का हिंदी रूपांतरण है।'

सामाजिक मानवशास्त्री घुर्ये जनजाति समुदाय को पिछड़े हिंदू मानते हैं। यानि सामाजिक व सांस्कृतिक दृष्टि से यह हिंदू समाज के ही अंश हैं।

जनजाति समुदाय का इतिहास यशस्वी रहा है। इनका भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। यह समुदाय युद्ध कौशल में भी निपुण रहा है। सन 1832 में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से पूर्व वीर बुधु भगत ने लरक्का संघर्ष नामक आंदोलन प्रारंभ किया। लरक्का संघर्ष जनजाति समुदाय को जमीन से बेदखल करने, अंग्रेजी शासन के विरुद्ध तत्कालीन राजाओं एवं जमींदारों के हाथ में देने और पेय पदार्थ पर आबकारी लागू करने व अत्याचार के विरोध में हुआ था। इसी प्रकार बिरसा मुंडा ने 23 वर्ष की अल्प आयु में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध ऐसा विद्रोह किया कि उसके विद्रोह की आग ब्रिटेन तक पहुंच गई थी। इसके अतिरिक्त संथाली विप्लव, भील विद्रोह, बस्तर विद्रोह, गोंड विद्रोह आदि भारत की जनजातियों में जागरूकता के कुछ प्रसिद्ध उदाहरण है।

भारत विविधताओं का देश है जहां जातीय सांस्कृतिक, भाषाई तथा भौगोलिक रूप से अनेक प्रकार की जनजातियां पाई जाती है। जनजातियों का जीवन प्रकृति से जुड़ा है और उनका अस्तित्व भी भौगोलिक परिवेश पर आधारित हैं। जनजातियां न केवल अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं के लिए जानी जाती हैं, अपितु उनके भौगोलिक वितरण ने भी उनके जीवन शैली को प्रभावित किया है। बी. एस. गुहा ने भौगोलिक क्षेत्र को देखते हुए भारतीय जनजातियों को तीन मंडलों में वर्गीकृत किया है –

1. उत्तरी पूर्वी तथा उत्तरी मंडल
2. केंद्रीय अथवा मध्य मंडल
3. दक्षिणी मंडल

उत्तरी पूर्वी तथा उत्तरी मंडल में कुकी, लुशाई, खाली तथा गारो समेत अनेक जनजातियाँ निवास करती हैं। केंद्रीय तथा मध्य मंडल में मुंडा, संथाल, ओराँव, बिराहोर, भटकारी, कोल, भील, कोराकु, अगरिया, भाडिया, गोंड आदि जनजातियाँ पाई जाती हैं। दक्षिणी मंडल में कड़ार, इरुला, कोटा, टोड़ा, लंबाडी, कुरंबा, कोरागा, बढ़ागा, मालवादिन आदि जनजातियां जंगलों में बसती है। हम यहां दक्षिण भारत की कोरागा जनजाति पर चर्चा करेंगे।

दक्षिण भारत के कर्नाटक राज्य के तटीय जिलों विशेष रूप से दक्षिण कन्नड़, उडुपी और केरल के कासरगोड जिले में बसने वाली कोरागा जनजाति को परंपरागत रूप से समाज के निचले पायदान पर रखा गया है। कोरागा समुदाय सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक रूप से हाशिये पर होने के बावजूद अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं। यह जनजाति मुख्य रूप से अनुसूचित जनजाति (ST) के अंतर्गत आती है और भारत के संवैधानिक संरक्षण के तहत कई विशेषाधिकार प्राप्त करती हैं। वर्तमान में कर्नाटक में लगभग 14800 और केरल में 1600 के करीब कोरागा जनसंख्या है।

कोरागा जनजाति की उत्पत्ति के विषय में स्पष्ट ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है, किंतु कुछ विद्वान इन्हें प्राचीन दक्षिण भारतीय द्रविड़ जातीय समूहों से संबंधित मानते हैं। कोरागा शब्द की उत्पति 'कोरा' शब्द से हुई है, जिसका संबंध सूर्य भगवान से है, इसलिए कोरागा जाति सूर्य भगवान की पूजा–उपासना में अधिक

विश्वास रखते है। इन्हे 'कोरुवर' भी कहा जाता है जिसका अर्थ है 'पहाड़ी लोग'। डॉ. एल. के. अय्यपन के अनुसार 'कोरागा दक्षिण भारत के आदिम निवासियों में से एक है जो द्रविड़ जातीय समूह से संबंधित हो सकते हैं।' अन्य विद्वान इनकी उत्पत्ति प्रोटो–आस्ट्रलॉयड जातीय समूह से मानते हैं। कुछ लोक कथाओं में इन्हें प्रारंभिक वानर जातियों से जोड़ा जाता है, जो दक्षिण भारतीय वनों में निवास करते थे। कोरागा अनेक ब्रह्मगोत्रीय वंशो या संप्रदायों में विभाजित हैं। जो कोरागा समतल भूमि पर रहते है, उन्हे 'कुन्टु' कोरागा तथा जो कोरागा जंगल में रहते है, उन्हे 'सप्पू' कोरागा कहा जाता है। उनके वंश को 'बली' कहा जाता हैं। कोरागा समुदाय में 17 बली पाये जाते हैं।

इतिहासकारों का मानना है कि कोरागा कभी अपने क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से निवास करते थे, किंतु ब्राह्मणवादी सामाजिक संरचना के उभार के साथ–साथ इन्हें समाज के निम्नतम स्तर पर धकेल दिया गया। औपनिवेशिक काल में इन पर 'जनजातीय असभ्यता' की मोहर लगा दी गई और यह 'आदिवासी श्रमिक वर्ग' में परिवर्तित हो गए।

कोरागा जनजाति की भाषा 'कोरागी' कहलाती है, जो द्रविड़ भाषा परिवार से संबंधित हैं। आधुनिक युग में अधिकांश कोरागा लोग कन्नड़, तुलु और मलयालम जैसी स्थानीय भाषाओं का प्रयोग अपने दैनिक जीवन में करते हैं, किंतु कोरागी भाषा का प्रयोग पारंपरिक रीति–रिवाजों गीतों और अनुष्ठानों में आज भी किया जाता है। भाषा संरक्षण की दृष्टि से कोरागी भाषा अब लुप्त होने के कगार पर है।

कोरागा जनजाति के धार्मिक विश्वास मुख्य रूप से प्रकृति पूजा, पूर्वज पूजा और स्थानीय देवी–देवताओं की पूजा पर आधारित है। इन्होंने हिंदू धर्म के कई देवी–देवताओं को भी अपने विश्वास में शामिल कर लिया है, किंतु 'कोरगज्जा' और 'मरगज्जा' उनके पारंपरिक देवता के रूप में विशेष पूजनीय है, जिसे वे अपना रक्षक देवता मानते हैं। 'कोरगज्जा काना' उत्सव विशेष रूप से प्रसिद्ध है जिसमें कोरागा जनजाति के लोग मिलकर देवता की आराधना करते हैं।

'भूत कोला' भी इनका एक प्रकार का पारंपरिक नृत्य अनुष्ठान है, जिसमे भूतों और आत्माओं (पंजुरली, कल्लुर्ती, कोरथी, गुलिगा आदि) को प्रसन्न करने के लिए रंग–बिरंगे परिधान पहनकर नृत्य किया जाता है। कोरागा अन्य तुलु भाषी समुदायों के त्योहारों में भी भाग लेते हैं। कोरागा समुदाय का 'पडनन' लोकगीत और 'ढोलू' और 'वूटे' (ढ़ोल और बांसुरी) वाद्य यंत्र के साथ किया जाने वाला नृत्य अत्यंत प्रसिद्ध है। इनके गीतों में जीवन संघर्ष, प्रकृति पूजा और सामाजिक जीवन की कहानियाँ परिलक्षित होती है।

कोरागा समाज में वरिष्ठों का सम्मान, सामूहिक निर्णय प्रक्रिया और पारंपरिक सहयोग की भावना वर्तमान युग में भी विद्यमान है। कोरागा समुदाय में परंपरागत रूप से 'गुरु' अथवा 'पाटेल' नामक व्यक्ति समाज का प्रमुख होता है, जो जनजातीय परंपराओं का संरक्षण करता है और सामाजिक विवादों का निपटारा करता है। कोरागा समुदाय के लोग आज भी अपनी पारंपरिक बस्तियों में सामूहिक रूप से निवास करते हैं। कोरागा जनजाति में पारंपरिक रूप से मातृसत्तात्मक व्यवस्था प्रचलित है। इसका तात्पर्य यह है कि परिवार की वंश परंपरा और संपत्ति का उत्तराधिकार महिलाओं के आधार पर चलता है। परिवार में महिलाओं का स्थान उच्च होता है और वह सामाजिक निर्णय में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कोरागा परिवार में पुत्र तथा पुत्री में संपत्ति का बंटवारा बराबर भाग से किया जाता है। कोरागा समाज में संयुक्त परिवार प्रणाली देखने को मिलती है, जहां कई पीढ़ियां

एक साथ रहती है। परिवार का प्रधान 'कुडुम्बा' कहलाता है। कोरागा समाज में विवाह सरल और सामुदायिक परंपराओं के अनुसार होता है। विवाह के समय गोत्र और कुल पर विशेष ध्यान दिया जाता है। विवाह संबंध पारिवारिक सहमति से तय किए जाते हैं। विवाह सामान्यतः समुदाय के भीतर ही होते हैं और इनमें दहेज जैसी कुप्रथा नहीं पाई जाती है। विवाह समारोह में धार्मिक अनुष्ठानों, लोकगीतों और सामूहिक भोज का आयोजन किया जाता है।

पारंपरिक रूप से कोरागा जनजाति वनों पर निर्भर रहती थी। वे पत्तों से बनी झोपड़ियों (कोप्पु) में रहते थे और पत्तों के कपड़े पहनते थे। जंगलों से लकड़ी, शहद और औषधीय जड़ी–बूटियां इकट्ठा कर यह जीवन यापन करते थे। किंतु अब इनका जीवन मुख्यतः श्रम पर आधारित है। यह लोग कृषि मजदूरी, निर्माण श्रमिक, बाँस तथा लकड़ी के हस्तशिल्प निर्माण और घरेलू सहायकों के रूप में कार्य करते हैं। कुछ कोरागा समुदाय के लोग नगरपालिकाओं में सफाई कर्मी, दिहाड़ी मजदूर, होटल उद्योग में छोटे कर्मचारियों के रूप में कार्य कर रहे हैं। हालांकि हाल ही के कुछ वर्षों में सरकारी योजनाओं के तहत कुछ लोग शिक्षा पाकर सरकारी नौकरियां तथा सामाजिक कार्यों में भी प्रवेश कर रहे हैं।

कोरागा जनजाति अनुसूचित जनजातियों के अंतर्गत आरक्षित हैं फिर भी इनकी साक्षरता दर बहुत कम है। सामाजिक अर्थशास्त्रीय अध्ययन के अनुसार कोरागा समुदाय के केवल 22.9 प्रतिशत लोग ही प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर पाए हैं तथा केवल 2.2 प्रतिशत जन ने हीं उच्च माध्यमिक शिक्षा पूर्ण की है। सन 2011 के सरकारी सर्वे के अनुसार कोरागा जनजाति की साक्षरता दर लगभग 72.7 प्रतिशत थी जोकि अन्य जनजातियों की औसत साक्षरता (62.1 प्रतिशत) से बेहतर है। एक क्षेत्रीय सर्वेक्षण (उडुपी जिला) में वास्तविक जीवन के अनुभव अधिक चिंताजनक हैं, विशेषकर ग्रामीण और वंचित समूहों में बच्चों का स्कूल छोड़ना, शिक्षा तक पहुंच की समस्या अभी भी गहरी है। 40.7 प्रतिशत लोग आज भी इस समुदाय के अशिक्षित हैं।

कर्नाटक सरकार ने कोरागा जनजाति के कल्याण के लिए कोरागा कल्याण विकास बोर्ड की स्थापना की है, जो शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में योजनाएं लागू कर रहा है। कोरागा समुदाय को अनुसूचित जनजाति (ST) और विशेष रूप से कमजोर जनजाति समूह (PVTG) के तहत आरक्षण का लाभ शिक्षा, सरकारी नौकरियों और राजनीतिक क्षेत्र में प्राप्त हैं। सरकार द्वारा चलाई जा रही 'जनजातीय आवास योजना', 'जनजातीय छात्रवृत्ति योजना' और 'कौशल विकास कार्यक्रम' उनके उत्थान में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। सन 2024 में केरल के कासरगोड जिले में 530 कोरागा परिवारों को भूमि प्रदान की गई, जो उनके जीवन स्तर में सुधार की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

कोरागा जनजाति दक्षिण भारत की सांस्कृतिक विविधता का महत्वपूर्ण हिस्सा है। उनकी विशिष्ट सामाजिक संरचना, मातृवंशी व्यवस्था और पारंपरिक आजीविका उन्हें अन्य जनजातियों से अलग बनाती है। 'अजालु प्रथा' एक अमानवीय और अपमानजनक परंपरा है, जिसके अंतर्गत कोरागा जनजाति के लोगों को उच्च जातियों के लोगों के लिए 'शुद्धिकरण' की रस्में करने के लिए मजबूर किया जाता था। इस प्रथा के अंतर्गतः कोरागा समुदाय के लोगों को मनुष्य के बाल, नाखून और अन्य अपवित्र माने जाने वाले चीजें एकत्र करनी होती थीं। उन्हें इन चीजों को अपने शरीर पर मलकर शुद्धिकरण संस्कार करना होता था। यह काम सामाजिक या धार्मिक आयोजनों के समय करवाया जाता था, जिसमें उन्हें अपमानजनक वस्त्र पहनाए जाते और अपमान सहना

पड़ता। यह प्रथा जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता का चरम उदाहरण है। इसमें कोरगा समुदाय को निम्न, अशुद्ध और अछूत समझा जाता था। यह उनकी मानव गरिमा का हनन करती थी और उन्हें मानसिक व शारीरिक रूप से उत्पीड़ित करती थी। भारत सरकार और राज्य सरकारों ने इस प्रथा को गैरकानूनी घोषित कर दिया है। मानव अधिकार संगठनों और न्यायालयों के हस्तक्षेप से इस प्रथा पर काफी हद तक रोक लगी है। लेकिन कुछ क्षेत्रों में यह अब भी अंधविश्वास या सामाजिक दबाव के चलते गुप्त रूप से चलती रहती है।

अजालु प्रथा भारतीय समाज की उन कुरीतियों में से एक है जिसे मिटाना आवश्यक है। यह केवल कोरागा समुदाय का नहीं, बल्कि मानवता का अपमान है। कोरागा जनजाति का इतिहास संघर्ष और उपेक्षा से भरा है, लेकिन उनकी संस्कृति और सामाजिक संगठन उनकी शक्ति का प्रमाण है। वर्तमान में सामाजिक समरसता, शिक्षा और आर्थिक विकास के साथ कोरागा समाज भी मुख्य धारा में सम्मिलित हो रहा है। हालांकि सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक पिछड़ापन, शिक्षा व स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, भाषा और संस्कृति के क्षरण जैसी चुनौतियां उनके अस्तित्व और विकास के लिए गंभीर खतरा है। यदि सरकार, समाज और स्वयं कोरागा समुदाय एकजुट होकर प्रयास करें तो इनका भविष्य उज्ज्वल और सशक्त हो सकता है।

संदर्भ सूची :-

1. तुलसीदास गोस्वामी, श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड।
2. डॉ. श्रीनाथ शर्मा, जनजातीय समाज, पृ. 11
3. डॉ. एल. के. अय्यपन, साउथ इंडियन ट्राइब्स एंड कास्ट।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 46-47

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

जनवादी प्रगतिवादी चेतना

तपन कुमार घासी

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, सिदो कान्हु मुर्मू विश्वविद्यालय, दुमका, झारखण्ड।

सन् 1935 में फ्रांस में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। इसी वर्ष लन्दन में मुल्कराज आनंद और सज्जाद जाहिर के प्रयास से भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई, जिसका पहला अधिवेशन सन् 1936 में प्रेमचन्द की अध्यक्षता में लखनऊ (भारत) में हुआ।

अपने अध्यक्षीय भाषण में प्रेमचन्द ने व्यक्तिवादी सौदर्य चेतना और काल्पिनीक दुनिया से निकल कर नये जीवन यथार्थ को साहित्य में अभिव्यक्त करने की गुजारिश की। सन् 1936 में ही अखिल भारतीय किसान सभा का अधिवेशन हुआ, इन सबसे प्रभावित होकर कवियों को लगने लगा कि कविता को कल्पना से निकलकर यथार्थ से साक्षात्कार करने की आवश्यकता है।

स्वयं छायावाद का घोषणा पत्र लिखने वाले सुमित्रानन्दत पन्त ने 1996 में युगान्त की घोषणा की। निराला ने सन् 1997 में 'तोड़ती पत्थर' में यथार्थ का दर्शन किया, तो पन्त ने 'युगवाणी' में और प्रसाद ने 'कंकाल' में। इस तरह छायावादी कवि ही प्रगतिशील कविता के अग्रदूत रहे। आगे चल कर नागार्जून आदि कवियों ने इसे उग्र स्वर प्रदात किया।

प्रगतिशील काव्य धारा की पृष्ठभूमि के रूप में हम देखते हैं कि जिस तरह रोमांटिक साहित्य का जन्म फ्राँसिसी अति के साथ हुआ, उसी तरह रुसी क्रांति की सफलता के गर्म से प्रगतिशील साहित्य का जन्म हुआ। हालांकि कविता में प्रगतिशीलता तो आरंभ से रही है, लेकिन जिस रूढ़ अर्थ में प्रगतिशील शब्द का प्रयोग होता है, उसका जन्म सन् 1917 की रूसी क्रांति की सफलता से ही माना जाता है। रूसी क्रांति की सफलता के बाद, समाज और साहित्य दोनों में सर्वहारा वर्ग की मुक्ति की उम्मीद की किरण दिखाई देने लगी।

भारत में बुद्धिजीवियों का मानना था कि लाल रुस है दाल साथियों सब मजदूर किसानों की। सन् 1925 में रसियन एसोसिएशन ऑफ प्रोलेटारियन राइटर्स (आर. ए. पी. पी.) की स्थापना सोवियत संघ में हुई। इस संघ के लेखकों की वैचारिक प्रतिबद्धता साहित्य में सिर्फ वर्ण–संघर्ष के विकास को दिखाना था। इस वैचारिक प्रतिबद्धता के कारण इस संघ से जुड़े साहित्यकारों के लेखर का विकास अवरुद्ध हो गया, जिसका विरोध कुछ ही वर्षों बाद किया जाने लगा। विरोध के कारण मैक्सिम गोर्की ने 'रसियन एसोसिएशन'ऑफ प्रोलेटरियन राइटस' को भंग कर सोवियत लेखक संघ की स्थापना की।

इस संघ से जुड़े लेखका का भी दार्शनिक आधार मार्क्सवाद का दर्शन था। मार्क्स के विचारों से प्रभावित होकर सन् 1935 में फ्रांस की राजधानी पेरिस में प्रातिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। इसी वर्ष लन्दन में

मुल्कराज आनंद और सज्जाद जाहिर के प्रयास से भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। भारतीय प्रगतिशील लेखक संध का पहला अधिवेश, प्रेमचन्द की अध्यक्षता में, उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में सन् 1936 हुआ। अपनी अध्यक्षता में प्रेमचंद ने कहा ''हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो... जो हमें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलाए नहीं क्योंकि अब ज्यादा सोना मृत्यु का लक्ष्य है।'' यही नहीं प्रेमचन्द को पूर्व में ही आभास हो गया था कि 'आने वाला जमाना अब किसान और मनदूरों का है (ज़माना, फरवरी, 1919) शिवदान सिंह चौहान ने मार्च 1935 में 'विशाल भारत' में एक लेख लिखकर इस बात पर बल दिया, उस शीर्षक प्रगतिशील साहित्य की आवश्यकता, भारतीय राजनीति के इस बदलते करवट के अनुरुप, प्रगतिशील साहित्य का ही था। गांधी के आवागमन के साथ मे मे नरमदल का प्रभाव बदा, किन्तु सन् 1928 के बाद भारतीय राजनीति में लगातार कुछ ऐसी घटनाएँ घटी, जिससे उग्रदल का प्रभाव बढ़ा। साइमन कमिशन की नियुक्ति के साथ ही उसका विरोध शुरु हुआ। पूरे देश में एक ही नारा गूँजने – लगा 'साइमन वापस जाओ।'

लाहौर षड़यंत्र के लिए भगतसिंह और उनके साथियों को 29 मार्च 1991 को फाँसी दे दी गई। जेल के दौरान भगतसिंह ने हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपक्लिक एसोसिएशन को सलाह देते हुए लिखा कि 'हमारा मुख्य लक्ष्य मजदूरों और किसानों को संगठित करना है।'

एक तरफ राजनीतिक दल किसान–मजदूर को संगठित कर आंदोलन को तेज कर रहे थे, दूसरी तरफ रचनाकार अपनी रचना द्वारा रूसी क्रांति के मजदूर किसान से ताकत की गाथा सुना रहे थे। इसी दौरान भारतीय किसान सभा का अधिवेशन सन् 1906 में हुआ, और इसी वर्ष कांग्रेस ने श्रमिकों के हितार्थ भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस की स्थापना की। इस सब की कोख में पोषित होकर, कविता राष्ट्रवादी चेतना के साथ किसान–मजदूर व आम जन के साथ सीधे–सीधे जुड़ गयी।

संदर्भ :–

1. जनवादी कहानी, पृष्ठभूमि से पुनर्विचार तक, रमेश उपाध्याय।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 48-52

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Application of Geographic Information System (GIS) in Disaster Management and Emergency Response

Nagendra Kumar Mahto
Manrakhan Mahto B.Ed College, Ranchi.

Abstract :

Geographic Information System (GIS) has proven to be a highly effective technology in disaster management and emergency response. This article provides an in-depth analysis of the role, applications, and challenges of GIS in this domain. It discusses how GIS helps in identifying risk-prone areas, pre-disaster planning, effective emergency response, and reconstruction planning.

Keywords : GIS, Disaster Management, Emergency Response, Risk Mapping, Reconstruction.

Introduction :

In an era marked by increasing environmental uncertainties and frequent natural disasters, the integration of modern technologies has become essential in ensuring effective disaster management. Among these, the Geographic Information System (GIS) stands out as a transformative tool. GIS is a sophisticated system designed to collect, manage, analyze, and visualize spatial and geographic data. Its ability to integrate multiple layers of information onto a single platform allows decision-makers to better understand the geographical context of any disaster. Whether it is predicting the path of a cyclone, identifying flood-prone zones, or coordinating relief operations, GIS empowers authorities with timely and accurate information, facilitating swift and informed responses in critical situations. Thus, GIS plays a central role in enhancing preparedness, minimizing risks, and improving the overall efficiency of disaster response and recovery efforts.

Importance of GIS :

The Geographic Information System (GIS) holds immense importance in the domain of disaster management due to its ability to streamline and enhance disaster-related planning, preparedness, and response. Unlike traditional methods, GIS provides spatial insights that help in understanding the geographic extent and potential impact of disasters. Its capacity to analyze vast datasets, visualize hazard zones, and predict vulnerable regions enables authorities to make well-informed decisions

swiftly.

By integrating data from various sources—such as satellite imagery, weather patterns, topography, and population density—GIS allows for comprehensive risk assessments. This proves crucial in natural disasters like floods, earthquakes, landslides, and cyclones, where time-sensitive action can significantly reduce damage and save lives. Moreover, GIS facilitates coordination among various response teams by offering a shared visual understanding of the affected areas. In essence, GIS transforms raw data into actionable intelligence, making it an indispensable tool for minimizing the impact of disasters and ensuring efficient emergency management.

Role of GIS in Disaster Management :

Geographic Information System (GIS) plays a multifaceted role across all phases of disaster management—ranging from preparedness and mitigation to response and recovery. Its integration into disaster-related processes enhances the accuracy, efficiency, and timeliness of actions taken before, during, and after a disaster.

1. Pre-Disaster Planning :

GIS is instrumental in creating detailed risk maps that highlight vulnerable regions prone to natural hazards. These maps assist authorities in designing strategic preparedness plans. It helps identify the safest evacuation routes, locations for emergency shelters, and availability of essential medical facilities, ensuring that infrastructure and resources are optimally placed in advance.

2. Early Warning Systems :

One of the key applications of GIS is in enhancing the performance of early warning systems. By analyzing meteorological data, river water levels, seismic activities, and historical patterns, GIS enables more accurate and timely predictions. This allows government agencies to issue early alerts to potentially affected populations, thereby minimizing loss of life and property.

3. Emergency Response :

When a disaster occurs, real-time GIS mapping becomes crucial in guiding emergency services. It helps in identifying severely impacted areas, blocked routes, and accessible locations for relief distribution. Rescue teams can use GIS-based applications to navigate through disrupted terrains and provide targeted support to those in immediate need.

4. Rehabilitation and Reconstruction :

Post-disaster, GIS plays a significant role in damage assessment and long-term recovery planning. By comparing pre- and post-disaster data, it helps authorities estimate the extent of damage to infrastructure, land, and livelihoods. This enables the development of data-driven reconstruction plans, ensuring that rebuilding efforts are both effective and resilient to future risks.

Major Applications of GIS :

The Geographic Information System (GIS) serves as a versatile tool in addressing a wide range of disasters by providing spatial insights and analytical capabilities. Its applications span across different types of natural hazards, helping authorities plan, respond, and recover with greater precision. Some of the major applications of GIS in disaster scenarios include:

- **Flood Management :**

GIS plays a pivotal role in identifying flood-prone zones by analyzing river basins, rainfall patterns, and land elevation data. It helps in monitoring real-time water levels and forecasting inundation areas. This enables timely evacuation, deployment of resources, and formulation of targeted rescue operations, thereby reducing the risk to human lives and infrastructure.

- **Earthquake Management :**

In regions susceptible to seismic activity, GIS is used to create detailed seismic hazard maps by integrating geological and tectonic data. These maps help in identifying high-risk zones, assessing structural vulnerabilities, and planning emergency responses. After an earthquake, GIS assists in damage assessment and coordination of relief efforts by visualizing affected areas.

- **Forest Fire Management :**

GIS is crucial for tracking the spread of wildfires, identifying ignition points, and predicting the path of fire based on wind direction, vegetation type, and topography. It supports the development of fire containment strategies and allocation of firefighting resources. GIS also assists in post-fire analysis to assess ecological damage and plan reforestation.

Through these applications, GIS enhances the capacity of disaster management agencies to act swiftly, reduce response time, and ensure that interventions are both effective and resource-efficient.

Use of GIS in India :

In India, the adoption of Geographic Information System (GIS) has significantly strengthened disaster preparedness and response mechanisms. The **National Disaster Management Authority (NDMA)**, along with state-level disaster management authorities, has recognized the potential of GIS in enhancing the efficiency and effectiveness of disaster risk reduction strategies.

GIS is being used across various states to map vulnerable zones, plan evacuation routes, and monitor real-time disaster data. For instance, flood forecasting systems in states like Assam, Bihar, and Uttar Pradesh utilize GIS to issue early warnings and minimize damage. Similarly, earthquake-prone regions such as Uttarakhand and Himachal Pradesh use GIS-based seismic maps for planning construction norms and emergency responses.

Moreover, institutions such as the **Indian Space Research Organisation (ISRO)** and the **National Remote Sensing Centre (NRSC)** have developed satellite-based GIS tools to support decision-makers during natural calamities. Initiatives like the **National Database for Emergency Management (NDEM)** provide centralized GIS data for disaster analysis and coordination among different agencies.

Through these efforts, GIS has become an integral part of India's disaster management framework, facilitating timely actions, resource optimization, and better coordination between government bodies during crisis situations.

Challenges in Using GIS :

While the Geographic Information System (GIS) offers immense potential in disaster management, its implementation is not without challenges. Several technical, financial, and operational barriers hinder the widespread and effective use of GIS, especially in developing regions. Key challenges include :

- **Lack of Skilled Human Resources :**

One of the primary limitations is the shortage of trained professionals who can operate GIS software, analyze spatial data, and interpret results accurately. The technical complexity of GIS tools requires specialized education and regular skill development, which is still lacking in many disaster management agencies.

- **Inadequate Financial Resources :**

Setting up a comprehensive GIS infrastructure involves substantial investment in hardware, software, satellite data, and maintenance. Budget constraints at local and regional levels often limit the adoption and integration of GIS into disaster management systems.

- **Issues Related to Data Accuracy and Reliability :**

The effectiveness of GIS is directly dependent on the quality and reliability of the data it processes. In many cases, outdated, incomplete, or incompatible datasets reduce the system's ability to produce accurate predictions or actionable insights. Additionally, the lack of real-time data integration can delay critical decision-making during emergencies.

To address these challenges, it is essential to invest in the development of skilled manpower through formal training and education in geospatial technologies. Governments and institutions must allocate sufficient funds to build and maintain robust GIS infrastructures. Furthermore, creating standardized, real-time, and interoperable data systems will enhance the accuracy and usability of GIS across disaster management activities. With coordinated efforts, these obstacles can be overcome, allowing GIS to fully realize its potential as a life-saving tool.

Conclusion :

GIS technology is a highly valuable tool for disaster management. Its effective use is essential for safeguarding human life and property. It not only improves immediate response but also helps control the impacts of future disasters.

References :

1. National Disaster Management Authority. (n.d.). *Official Reports & Guidelines on Disaster Management*. Retrieved from https://ndma.gov.in
2. ESRI. (n.d.). *GIS for disaster management*. Environmental Systems Research Institute. Retrieved from https://www.esri.com/en-us/industries/public-safety/disaster-response
3. Coppock, J. T., & Rhind, D. W. (1991). The history of GIS. In D. J. Maguire, M. F. Goodchild, & D. W. Rhind (Eds.), *Geographical information systems: Principles and applications* (Vol. 1, pp. 21–43). London: Longman Scientific.
4. Alexander, D. (2002). *Principles of emergency planning and management*. Oxford University Press.
5. Goodchild, M. F. (2006). GIS and disaster management. *Transactions in GIS, 10*(2), 143–150. https://doi.org/10.1111/j.1467-9671.2006.00295.x
6. Jha, A. K., Bloch, R., & Lamond, J. (2012). *Cities and flooding: A guide to integrated urban flood risk management for the 21st century*. World Bank Publications.
7. Kansakar, S. R., Hannah, D. M., Gerrard, A. J., & Rees, G. (2004). Spatial patterns in hydrological contribution and geospatial analysis for disaster management in the Himalayas. *Natural Hazards, 31*(1), 141–160.
8. United Nations Platform for Space-based Information for Disaster Management and Emergency Response (UN-SPIDER). (n.d.). *Knowledge portal*. Retrieved from https://www.un-spider.org

Email Id : nagumahto@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 53-57

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

किशोरावस्था में व्यक्तित्व विकास : एक अध्ययन

Sandeep Kumar Bharti

Research Scholar, YBN University, Department of Education.

सारांश (Abstract) :

किशोरावस्था जीवन का संक्रमणकाल है, जहाँ बालक–बालिकाएँ बचपन से वयस्कता की ओर अग्रसर होते हैं। इस अवस्था में व्यक्तित्व निर्माण के साथ–साथ संवेगात्मक बुद्धि का विकास भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। प्रस्तुत अध्ययन में परिवार, विद्यालय, समाज और मानसिक–शारीरिक स्वास्थ्य जैसे कारकों की भूमिका का विश्लेषण किया गया है। निष्कर्ष बताते हैं कि पारिवारिक सहयोग, विद्यालयीय मार्गदर्शन और स्वस्थ सामाजिक संपर्क मिलकर किशोरों के व्यक्तित्व विकास में निर्णायक भूमिका निभाते हैं।

मुख्य शब्द – किशोरावस्था, व्यक्तित्व विकास, भावनात्मक परिपक्वता, सामाजिक अनुकूलन, शैक्षिक प्रभाव।

परिचय :–

व्यक्तित्व विकास किसी भी मानव जीवन की आधारशिला है। यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति की सोच, भावनाएँ, व्यवहार और दृष्टिकोण आकार लेते हैं। बाल्यावस्था से ही व्यक्तित्व का निर्माण प्रारम्भ हो जाता है, परंतु किशोरावस्था को व्यक्तित्व निर्माण का सबसे संवेदनशील और निर्णायक काल माना जाता है। इस अवस्था में बालक और बालिका शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक रूप से तीव्र परिवर्तन अनुभव करते हैं।

किशोरावस्था सामान्यतः 13 से 19 वर्ष की आयु तक मानी जाती है। इस अवधि में शरीर में हार्मोनल परिवर्तन होते हैं, जिससे शारीरिक परिपक्वता के साथ–साथ मानसिक और भावनात्मक जटिलताएँ भी बढ़ती हैं। बालक–बालिकाएँ स्वतंत्रता की ओर अग्रसर होते हैं और अपनी पहचान बनाने की कोशिश करते हैं। ऐसे में उन्हें परिवार, विद्यालय और समाज से उचित मार्गदर्शन और सहयोग की आवश्यकता होती है।

परिवार बच्चों का पहला विद्यालय है। माता–पिता का व्यवहार, संवाद और मूल्य–परक शिक्षा किशोरों के आत्मविश्वास और संवेगात्मक बुद्धि के निर्माण में सहायक होती है। दूसरी ओर विद्यालय और शिक्षक उन्हें सामाजिकता, अनुशासन और शैक्षिक उपलब्धियों की दिशा प्रदान करते हैं। इसके साथ ही मित्र मंडली और सामाजिक परिवेश भी उनके व्यक्तित्व पर गहरा असर डालते हैं।

यदि इस अवस्था में बच्चों को सकारात्मक वातावरण, स्नेह और परामर्श मिले तो वे आत्मनिर्भर, जिम्मेदार और समाजोपयोगी नागरिक बन सकते हैं। इसके विपरीत, उपेक्षा या नकारात्मक परिस्थितियाँ व्यक्तित्व में हीनभावना, असंतुलन और असुरक्षा की भावना उत्पन्न कर सकती हैं। इसीलिए किशोरावस्था का अध्ययन और

इस दौरान व्यक्तित्व विकास को समझना अत्यंत आवश्यक है।

साहित्य समीक्षा :-

किशोरावस्था में व्यक्तित्व विकास पर अनेक शोध कार्य किए गए हैं। विद्वानों ने परिवार, विद्यालय, मित्र मंडली, समाज तथा मानसिक स्वास्थ्य के प्रभावों का विश्लेषण किया है। प्रस्तुत समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि यह अवस्था जीवन की दिशा तय करने में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

Black, Devers & Savones (2003) : ने अपने अध्ययन में यह पाया कि पारिवारिक वातावरण किशोरों की शैक्षिक उपलब्धि और आत्मविश्वास के विकास में निर्णायक है। माता–पिता का स्नेह और सकारात्मक संवाद बच्चों को जिम्मेदारी तथा आत्मसम्मान प्रदान करता है।

Eccles (1999) : ने किशोरावस्था को "परिवर्तन और संघर्ष का काल" बताते हुए कहा कि विद्यालय और शिक्षक बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सकारात्मक विद्यालयी अनुभव से आत्मनिर्भरता और जिम्मेदारी विकसित होती है।

Rodriguez (2002) : ने पारिवारिक अनुशासन और मार्गदर्शन पर बल देते हुए कहा कि संतुलित अनुशासन बच्चों में आत्मनियंत्रण और आत्मविश्वास को प्रोत्साहित करता है, जबकि कठोर नियंत्रण या उपेक्षा प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

Masten et al. (1990) : ने प्रमाणित किया कि मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य शैक्षिक उपलब्धि और व्यक्तित्व विकास से गहराई से जुड़ा हुआ है। संतुलित मानसिक स्थिति वाले किशोर रचनात्मक और आत्मविश्वासी पाए गए।

Sands & Plunkett (2005) : ने मित्र मंडली और सहपाठियों की भूमिका का अध्ययन किया। उनके अनुसार, अच्छे मित्र सहयोग और नेतृत्व क्षमता को बढ़ाते हैं, जबकि नकारात्मक संगति असंतुलन और जोखिमपूर्ण व्यवहार को जन्म देती है।

भारतीय संदर्भ में भी कई शोध हुए हैं।

डॉ. राधाकृष्णन (1995) : ने पाया कि संयुक्त परिवार प्रणाली में पले–बढ़े किशोर अधिक सहयोगी और सामाजिक होते हैं, जबकि एकल परिवार में पले–बढ़े बच्चों में अकेलापन और आत्मकेंद्रित प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है।

डॉ. सुनीता शर्मा (2002) : ने विद्यालयी वातावरण पर अपने शोध में यह स्पष्ट किया कि सकारात्मक शिक्षक–छात्र संबंध और गतिविधि–आधारित शिक्षण से किशोरों का आत्मविश्वास और सामाजिकता बढ़ती है।

डॉ. अरविंद कुमार (2007) : ने मित्र मंडली के प्रभाव पर बल दिया। उन्होंने कहा कि भारतीय किशोर अपने साथियों से अत्यधिक प्रभावित होते हैंय सही संगति से व्यक्तित्व में संतुलन आता है, जबकि अनुचित संगति विपरीत असर डाल सकती है।

डॉ. मंजू गुप्ता (2010) : के अनुसार मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व विकास का घनिष्ठ संबंध है। जिन किशोरों को परिवार का सहयोग और संतुलित जीवनशैली मिली, वे शैक्षिक उपलब्धि में भी आगे रहे।

डॉ. वीरेन्द्र प्रसाद (2015) : ने ग्रामीण और शहरी किशोरों की तुलना करते हुए पाया कि ग्रामीण किशोर परंपरागत मूल्यों पर आधारित अधिक सामूहिक प्रवृत्ति रखते हैं, जबकि शहरी किशोर स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता

की ओर अधिक उन्मुख होते हैं।

शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि :

- परिवार बच्चों का पहला विद्यालय होता है। माता–पिता का स्नेह और अनुशासन आत्मविश्वास और जिम्मेदारी की भावना जगाते हैं।
- विद्यालय और शिक्षक न केवल शिक्षा प्रदान करते हैं बल्कि सामाजिकता और मूल्य शिक्षा भी देते हैं।
- मित्र मंडली से सहयोग, प्रतिस्पर्धा और नेतृत्व के गुण विकसित होते हैं।
- मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य व्यक्तित्व निर्माण के लिए अनिवार्य है।

अध्ययन की आवश्यकता :–

आधुनिक समाज में किशोरावस्था एक अत्यंत चुनौतीपूर्ण अवस्था बन गई है। तीव्र प्रतिस्पर्धा, बदलती जीवनशैली, तकनीकी प्रभाव और पारिवारिक ढाँचे में आ रहे परिवर्तन के कारण किशोरों पर मानसिक एवं भावनात्मक दबाव लगातार बढ़ रहा है। इस स्थिति में उनके व्यक्तित्व निर्माण की दिशा और स्वरूप प्रभावित हो रहा है।

किशोर जीवन के इस दौर में अपनी पहचान स्थापित करना चाहते हैं और स्वतंत्रता की आकांक्षा रखते हैं, परंतु यदि उन्हें उचित मार्गदर्शन और सहयोग न मिले तो वे भ्रम, असुरक्षा और नकारात्मक प्रवृत्तियों का शिकार हो सकते हैं। इसलिए आवश्यक है कि यह समझा जाए कि व्यक्तित्व निर्माण किन–किन कारकों से प्रभावित होता है – जैसे पारिवारिक वातावरण, विद्यालय और शिक्षक का मार्गदर्शन, सामाजिक परिवेश तथा मानसिक स्वास्थ्य। इस अध्ययन की आवश्यकता इसलिए भी है कि प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर परिवार, विद्यालय और समाज बच्चों को सही दिशा देकर उन्हें संतुलित, आत्मनिर्भर और समाजोपयोगी नागरिक बनाने में सहयोग कर सकें।

अनुसंधान पद्धति :–

किसी भी अध्ययन की सफलता उसकी पद्धति पर निर्भर करती है। प्रस्तुत शोध वर्णनात्मक–विश्लेषणात्मक स्वरूप का था, जिसका उद्देश्य किशोरावस्था के बालक–बालिकाओं के व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का गहन अध्ययन करना था।

इस शोध में विभिन्न विद्यालयों से 13 से 19 वर्ष आयु वर्ग के किशोरों को अध्ययन का नमूना चुना गया। नमूना चयन के लिए यादृच्छिक पद्धति (Random Sampling) का प्रयोग किया गया ताकि विविध पृष्ठभूमि के विद्यार्थियों को शामिल किया जा सके। डेटा संकलन हेतु प्रमुख रूप से तीन उपकरणों का प्रयोग किया गया :–

1. **प्रश्नावली (Questionnaire) :** जिसके माध्यम से पारिवारिक वातावरण, विद्यालयी अनुभव और सामाजिक संपर्क से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई।
2. **अवलोकन (Observation) :** जिसके द्वारा किशोरों के व्यवहार, सामाजिक सहभागिता और व्यक्तित्व लक्षणों का प्रत्यक्ष अध्ययन किया गया।
3. **संवेगात्मक बुद्धि परीक्षण (Emotional Intelligence Test) :** जिससे यह आकलन किया गया कि उनकी भावनात्मक परिपक्वता और आत्म–नियंत्रण का स्तर कितना है।

संकलित आंकड़ों का विश्लेषण सांख्यिकीय विधियों जैसे प्रतिशत, माध्य और सहसंबंध तकनीकों की सहायता से किया गया। इन परिणामों के आधार पर अध्ययन के निष्कर्ष निकाले गए, जिन्होंने स्पष्ट किया कि

किशोरावस्था का व्यक्तित्व विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसमें परिवार, विद्यालय, समाज और स्वास्थ्य की निर्णायक भूमिका होती है।

प्रमुख कारक :–

1. **पारिवारिक वातावरण :** सहयोगी और सौहार्दपूर्ण परिवार किशोरों को आत्मविश्वासी बनाता है।
2. **माता–पिता का व्यवहार :** संवाद और स्नेह बच्चों की आत्मछवि को सुदृढ़ करते हैं।
3. **विद्यालय एवं शिक्षक :** सकारात्मक मार्गदर्शन से शैक्षिक उपलब्धि और मूल्य शिक्षा का विकास होता है।
4. **मित्र मंडली :** सहयोग और सामाजिक अनुकूलन क्षमता का विकास।
5. **स्वास्थ्य और मानसिक संतुलन :** स्वस्थ मन और शरीर ही व्यक्तित्व को पूर्णता देते हैं।
6. **मीडिया एवं तकनीक :** सही उपयोग विकास का साधन, दुरुपयोग हानिकारक।

निष्कर्ष :–

अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आया कि किशोरावस्था के बालक–बालिकाओं का व्यक्तित्व विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसमें परिवार, विद्यालय, समाज और मानसिक स्वास्थ्य की केंद्रीय भूमिका होती है। सबसे पहले, माता–पिता और परिवार का सहयोग व्यक्तित्व निर्माण का आधार माना गया। परिवार ही वह प्रथम वातावरण है जहाँ बच्चा जीवन के प्रारंभिक मूल्य, आचरण और व्यवहार सीखता है। यदि परिवार में सहयोग, स्नेह और सकारात्मक संवाद का वातावरण हो तो किशोरों में आत्मविश्वास, जिम्मेदारी और सामाजिकता का विकास सहज रूप से होता है। इसके विपरीत, उपेक्षा और असहमति उनके व्यक्तित्व में असंतुलन पैदा कर सकती है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह रहा कि विद्यालय और शिक्षकों का मार्गदर्शन बच्चों की शैक्षिक सफलता और व्यक्तित्व निर्माण, दोनों में निर्णायक भूमिका निभाता है। शिक्षक केवल ज्ञान प्रदाता नहीं होते, बल्कि वे आदर्श प्रस्तुत कर विद्यार्थियों के चरित्र, दृष्टिकोण और व्यवहार को भी प्रभावित करते हैं। विद्यालय का वातावरण अनुशासन, सहयोग और प्रतिस्पर्धा की भावना को प्रोत्साहित करता है, जिससे विद्यार्थियों में आत्मनिर्भरता और जिम्मेदारी का भाव विकसित होता है।

तीसरा महत्वपूर्ण पहलू स्वस्थ सामाजिक संबंध और मानसिक स्वास्थ्य का पाया गया। मित्र मंडली, सहपाठी और सामाजिक गतिविधियाँ किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि को प्रभावित करती हैं। जिन बच्चों का मानसिक स्वास्थ्य संतुलित होता है और जिनके सामाजिक संबंध सकारात्मक होते हैं, उनमें आत्मनियंत्रण, सहानुभूति और निर्णय लेने की क्षमता अधिक विकसित होती है।

इस प्रकार अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि यदि किशोरों को परिवार, विद्यालय और समाज से उचित सहयोग और मार्गदर्शन मिले तो उनका व्यक्तित्व संतुलित, आत्मविश्वासी और समाजोपयोगी बन सकता है।

सुझाव :–

1. **माता–पिता हेतु :**

- बच्चों से संवाद करें और सकारात्मक वातावरण बनाएँ।
- अनुशासन और स्वतंत्रता में संतुलन रखें।

2. **विद्यालय एवं शिक्षक हेतु :**

- सभी विद्यार्थियों को समान अवसर दें।
- मार्गदर्शन और परामर्श सेवाएँ उपलब्ध कराएँ।

3. समाज एवं नीति-निर्माताओं हेतु :

- किशोरों के लिए स्वास्थ्य सेवाएँ और परामर्श केंद्र स्थापित करें।
- शिक्षा नीति में किशोरों की आवश्यकताओं को विशेष स्थान दें।

संदर्भ :-

1. शोध प्रबंध : "माता–पिता के संबंधों का किशोरावस्था के बालक–बालिकाओं के व्यक्तित्व विकास एवं संवेगात्मक बुद्धि पर प्रभाव।"
2. Black, S., Devers, K., & Savones, R. (2003). Family environment and adolescent personality development. Journal of Child Psychology, 45(3), 215–229.
3. Eccles, J. S. (1999). The development of children ages 6 to 14. The Future of Children, 9(2), 30–44.
4. Rodriguez, R. (2002). Parental discipline and adolescent adjustment: A study of family influence. Journal of Adolescent Research, 17(4), 356–375.
5. Masten, A. S., Best, K. M., & Garmezy, N. (1990). Resilience and development: Contributions from the study of children who overcome adversity. Development and Psychopathology, 2(4), 425–444.
6. Sands, T., & Plunkett, S. (2005). Social support and the development of self-esteem in adolescents. Journal of Youth Studies, 8(1), 45–60.
7. Radhakrishnan, R. (1995). Parivarik parivesh aur kishoron ka vyaktitva vikas [Family environment and adolescent personality development]. Delhi: National Psychological Corporation.
8. Sharma, S. (2002). School environment and its effect on adolescent development. Jaipur: Rawat Publications.
9. Kumar, A. (2007). Mitra Mandali aur Kishoron ka Vikas: Ek Samajshastriya Adhyayan [Peer group and adolescent development: A sociological study]. Varanasi: Banaras Hindu University Press.
10. Gupta, M. (2010). Mental health and adolescent personality: An Indian perspective. Lucknow: Ankur Prakashan.
11. Prasad, V. (2015). A comparative study of rural and urban adolescents' personality development. Patna: Aryan Publications.

Email Id-dmahto1284@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 58-61

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

किशोरावस्था में माता–पिता के संबंध और संवेगात्मक बुद्धि का अध्ययन

Sandeep Kumar Bharti
Research Scholar, YBN University, Department of Education.

सारांश (Abstract) :–

किशोरावस्था जीवन का संक्रमणकाल है, जहाँ बालक–बालिकाएँ बचपन से वयस्कता की ओर अग्रसर होते हैं। इस अवस्था में संवेगात्मक बुद्धि (Emotional Intelligence) का विकास अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि यही उनकी भावनाओं को समझने, नियंत्रित करने और सामाजिक संबंधों में संतुलन बनाने की क्षमता को आकार देती है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि माता–पिता के संबंध, उनके व्यवहार और पारिवारिक वातावरण किस प्रकार किशोरों की संवेगात्मक बुद्धि को प्रभावित करते हैं। निष्कर्षों से यह प्रमाणित हुआ कि माता–पिता का स्नेह, संवाद और सहयोग संवेगात्मक बुद्धि को बढ़ावा देता है, जबकि उपेक्षा और कठोर अनुशासन नकारात्मक प्रभाव छोड़ते हैं।

मुख्य शब्द – माता–पिता संबंध, किशोरावस्था, संवेगात्मक बुद्धि, पारिवारिक वातावरण, व्यक्तित्व विकास।

परिचय :–

संवेगात्मक बुद्धि वह मानसिक क्षमता है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी और दूसरों की भावनाओं को समझता है, उनका मूल्यांकन करता है और परिस्थितियों के अनुसार उचित प्रतिक्रिया देता है। यह न केवल आत्मनियंत्रण और आत्म–जागरूकता को बढ़ाती है, बल्कि सहानुभूति, सहयोग और निर्णय लेने की क्षमता को भी सुदृढ़ करती है। आधुनिक युग में संवेगात्मक बुद्धि को शैक्षिक सफलता, व्यावसायिक प्रगति और सामाजिक जीवन में सामंजस्य का आधार माना जाने लगा है।

किशोरावस्था वह संवेदनशील काल है जिसमें बालक–बालिकाएँ शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से तीव्र परिवर्तन का अनुभव करते हैं। इस समय उनका व्यक्तित्व निर्माण गति पकड़ता है और वे स्वतंत्रता की ओर अग्रसर होते हैं। परंतु इन परिवर्तनों के बीच वे असुरक्षा, तनाव और भावनात्मक उतार–चढ़ाव का भी सामना करते हैं। ऐसे में संवेगात्मक बुद्धि उन्हें संतुलन प्रदान करती है और चुनौतियों से निपटने की क्षमता विकसित करती है।

पारिवारिक संबंध इस अवस्था में सबसे निर्णायक कारक होते हैं। माता–पिता बच्चों के लिए सुरक्षा, विश्वास और आत्मसम्मान का प्रथम स्रोत होते हैं। यदि माता–पिता का व्यवहार स्नेहपूर्ण, सहयोगी और संवादपूर्ण

है तो बच्चे भावनात्मक रूप से स्थिर, आत्मविश्वासी और सामाजिक रूप से सक्षम बनते हैं। इसके विपरीत, कठोर अनुशासन, उपेक्षा या अस्नेह किशोरों में हीनभावना, असुरक्षा और भावनात्मक अस्थिरता को जन्म दे सकते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि किशोरावस्था में संवेगात्मक बुद्धि का विकास सीधे–सीधे माता–पिता के संबंधों और पारिवारिक वातावरण से प्रभावित होता है। इसलिए इस दिशा में गहन अध्ययन करना अत्यंत आवश्यक है।

साहित्य समीक्षा :-

Black, Devers & Savones (2003) ने अपने अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाला कि पारिवारिक वातावरण और माता–पिता का सहयोग बच्चों की आत्मनियंत्रण क्षमता तथा भावनात्मक संतुलन को गहराई से प्रभावित करता है। उन्होंने यह भी पाया कि जिन किशोरों को घर पर सकारात्मक समर्थन और संवाद मिला, वे कठिन परिस्थितियों में धैर्य और आत्मनियंत्रण का परिचय अधिक देते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि परिवार भावनात्मक परिपक्वता का प्राथमिक स्रोत है।

Eccles (1999) ने किशोरावस्था को "परिवर्तन और संघर्ष का काल" कहा। उनके अनुसार, यह वह अवस्था है जब बच्चों की भावनाएँ तीव्र होती हैं और वे अपनी पहचान स्थापित करना चाहते हैं। इस समय माता–पिता का मार्गदर्शन भावनात्मक परिपक्वता विकसित करने में सहायक होता है। संवाद, प्रोत्साहन और भावनात्मक समर्थन से किशोर तनावपूर्ण परिस्थितियों का सामना अधिक संतुलित ढंग से कर पाते हैं।

Rodriguez (2002) ने अनुशासन की भूमिका का अध्ययन किया। उन्होंने सिद्ध किया कि यदि माता–पिता संतुलित अनुशासन अपनाएँकृजहाँ नियंत्रण और स्वतंत्रता दोनों का उचित मेल हो तो बच्चों में आत्मविश्वास और संवेगात्मक बुद्धि का स्तर बढ़ता है। इसके विपरीत, कठोर दंडात्मक अनुशासन बच्चों में असुरक्षा, भय और भावनात्मक अस्थिरता उत्पन्न करता है।

Masten et al. (1990) ने अपने शोध में यह प्रमाणित किया कि मानसिक स्वास्थ्य और भावनात्मक स्थिरता शैक्षिक उपलब्धि और सामाजिक अनुकूलन से गहराई से जुड़ी हुई है। जिन किशोरों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा था, वे न केवल शैक्षिक दृष्टि से बेहतर प्रदर्शन करते थे, बल्कि सहपाठियों और परिवार के साथ उनके संबंध भी अधिक सामंजस्यपूर्ण थे।

भारतीय संदर्भ में भी कई शोध इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। राधाकृष्णन (1995) ने पाया कि संयुक्त परिवार प्रणाली में पले–बढ़े किशोर अधिक सहयोगी और भावनात्मक रूप से संतुलित होते हैं। शर्मा (2002) ने अपने शोध में विद्यालयी वातावरण को भावनात्मक परिपक्वता का प्रमुख कारक माना और बताया कि सकारात्मक शिक्षक–छात्र संबंध बच्चों के आत्मविश्वास को बढ़ाते हैं। वहीं कुमार (2007) ने मित्र मंडली की भूमिका का अध्ययन किया और निष्कर्ष निकाला कि किशोर अपने सहपाठियों से गहराई से प्रभावित होते हैंय सही मित्रता भावनात्मक संतुलन और नेतृत्व क्षमता को बढ़ाती है।

अध्ययन की आवश्यकता :-

आधुनिक समाज में किशोरावस्था अत्यधिक संवेदनशील और चुनौतीपूर्ण अवस्था बन गई है। बदलते पारिवारिक ढाँचे, तीव्र तकनीकी दबाव और प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण ने किशोरों पर भावनात्मक तनाव को और बढ़ा दिया है। इस दौर में बालक–बालिकाएँ अपनी पहचान बनाने की कोशिश करते हैं, परंतु यदि उन्हें परिवार और विशेषकर माता–पिता से पर्याप्त सहयोग, स्नेह और संवाद न मिले तो वे अवसाद, चिंता, आक्रोश और

असुरक्षा जैसी समस्याओं से ग्रस्त हो सकते हैं।

संवेगात्मक बुद्धि, जो व्यक्ति को अपनी और दूसरों की भावनाओं को समझने और नियंत्रित करने की क्षमता प्रदान करती है, किशोरों के व्यक्तित्व निर्माण की सबसे अहम नींव है। माता–पिता के संबंध इस क्षमता के विकास में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। इसलिए यह अध्ययन आवश्यक है कि यह समझा जा सके कि माता–पिता का व्यवहार, संवाद और अनुशासन किशोरों की भावनात्मक परिपक्वता और संवेगात्मक बुद्धि को कैसे प्रभावित करता है। इससे परिवार, विद्यालय और समाज उन्हें सही दिशा प्रदान कर सकेंगे।

अनुसंधान पद्धति :–

किसी भी अध्ययन की सफलता उसकी अनुसंधान पद्धति पर निर्भर करती है। प्रस्तुत शोध कार्य वर्णनात्मक–विश्लेषणात्मक स्वरूप का था, जिसका उद्देश्य किशोरावस्था के बालक–बालिकाओं की संवेगात्मक बुद्धि पर माता–पिता के संबंधों के प्रभाव का आकलन करना था। इस अध्ययन के लिए विभिन्न विद्यालयों से 13 से 19 वर्ष आयु वर्ग के किशोरों का चयन किया गया। नमूना चयन में विविध सामाजिक और शैक्षिक पृष्ठभूमि के विद्यार्थियों को शामिल किया गया ताकि परिणाम अधिक विश्वसनीय और व्यापक हों।

डेटा संकलन के लिए तीन प्रमुख उपकरणों का उपयोग किया गया। पहला, प्रश्नावली (Parental Relationship & EI Scale), जिसके माध्यम से माता–पिता और बच्चों के संबंधों तथा संवेगात्मक बुद्धि से संबंधित पहलुओं की जानकारी प्राप्त की गई। दूसरा, अवलोकन अनुसूची (Observation Schedule), जिसके द्वारा विद्यार्थियों के व्यवहार, भावनात्मक प्रतिक्रिया और सामाजिक सहभागिता का प्रत्यक्ष अध्ययन किया गया। तीसरा, संवेगात्मक बुद्धि परीक्षण (Emotional Intelligence Test), जिससे किशोरों की आत्म–नियंत्रण, सहानुभूति और भावनात्मक स्थिरता का स्तर मापा गया।

प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण सांख्यिकीय तकनीकों जैसे प्रतिशत, माध्य और सहसंबंध (Correlation) के प्रयोग द्वारा किया गया। इस विश्लेषण ने यह स्पष्ट करने में सहायता की कि पारिवारिक वातावरण और माता–पिता के साथ संबंध, किशोरों की भावनात्मक परिपक्वता और संवेगात्मक बुद्धि के विकास में किस प्रकार प्रभाव डालते हैं।

निष्कर्ष :–

अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि :

1. माता–पिता का स्नेह और सहयोग बच्चों की संवेगात्मक बुद्धि को बढ़ाता है।
2. संवाद की खुली परंपरा बच्चों में आत्मविश्वास, सहानुभूति और भावनात्मक संतुलन विकसित करती है।
3. उपेक्षा या कठोर अनुशासन किशोरों में असुरक्षा और भावनात्मक अस्थिरता को जन्म देता है।
4. सकारात्मक पारिवारिक वातावरण वाले किशोर सामाजिक अनुकूलन और निर्णय क्षमता में अधिक सक्षम पाए गए।

सुझाव :–

- **माता–पिता हेतु :** बच्चों को सुनें, उनसे संवाद करें और सहयोगात्मक वातावरण बनाएँ।
- **विद्यालय हेतु :** परामर्श सेवाएँ उपलब्ध कराएँ और माता–पिता–शिक्षक सहयोग को बढ़ावा दें।
- **समाज हेतु :** किशोरों के लिए मानसिक स्वास्थ्य सेवाएँ और जागरूकता अभियान चलाए जाएँ।

निष्कर्ष :-

किशोरावस्था संवेगात्मक बुद्धि के विकास की सबसे संवेदनशील अवस्था है। इस काल में माता–पिता के संबंध यदि सहयोगी और स्नेहपूर्ण हों तो बालक–बालिकाएँ भावनात्मक रूप से परिपक्व, आत्मविश्वासी और समाजोपयोगी नागरिक बन सकते हैं।

संदर्भ :-

1. Black, S., Devers, K., & Savones, R. (2003). Family environment and adolescent personality development. Journal of Child Psychology, 45(3), 215–229.
2. Eccles, J. S. (1999). The development of children ages 6 to 14. The Future of Children, 9(2), 30–44.
3. Rodriguez, R. (2002). Parental discipline and adolescent adjustment: A study of family influence. Journal of Adolescent Research, 17(4), 356–375.
4. Masten, A. S., Best, K. M., & Garmezy, N. (1990). Resilience and development: Contributions from the study of children who overcome adversity. Development and Psychopathology, 2(4), 425–444.
5. Sands, T., & Plunkett, S. (2005). Social support and the development of self-esteem in adolescents. Journal of Youth Studies, 8(1), 45–60.
6. Radhakrishnan, R. (1995). Parivarik parivesh aur kishoron ka vyaktitva vikas [Family environment and adolescent personality development]. Delhi: National Psychological Corporation.
7. Sharma, S. (2002). School environment and its effect on adolescent development. Jaipur: Rawat Publications.
8. Kumar, A. (2007). Mitra Mandali aur Kishoron ka Vikas: Ek Samajshastriya Adhyayan [Peer group and adolescent development: A sociological study]. Varanasi: Banaras Hindu University Press.
9. Gupta, M. (2010). Mental health and adolescent personality: An Indian perspective. Lucknow: Ankur Prakashan.
10. Prasad, V. (2015). A comparative study of rural and urban adolescents' personality development. Patna: Aryan Publications.

Email Id-dmahto1284@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 62-69

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Effect of Technology Integrated Module on Technological Pedagogical Content Knowledge of Pre-Service Teachers

Amita Kumari, Ph.D. Scholar

Dr. Sunita Sarswat, Research Supervisor

Education Department, Singhania University. Rajasthan, india.

Sammary :-

Technological pedagogical content knowledge (TPACK) was introduced to the educational research field as a conceptual framework for understanding teacher knowledge that is required for technology integration (Mishra and Koehler, 2006) TPACK evolved from Shulman's (1986) theory of pedagogical content knowledge (PCK) and focuses on the need for teacher to skillfully demonstrate their ability to integrate technology within the constructs of content and pedagogical domains. TPACK can be perceived as a teacher's intuitive understanding for teaching subject –specific content with appropriate pedagogical methods and selected technologies. It is well understood that teaching is a complex cognitive activity that required teachers to draw upon several types of knowledge (Kachier & Mishra). TPACK serves as a useful conceptual framework for thinking, analyzing and evaluating what teachers must know to integrate technology into teaching, but ultimately it must be understood as a framework for ways in which teaches might best develop this integrated knowledge.

Key Words : Technological Pedagogical Content knowledge, Technology Integrated Module, Pre-service Teacher

Introduction :

The emergence of new approaches, pedagogies, technologies, and theories is recommending entirely new models of teaching and learning. An important implication of this transformation or shift is the need for creating an ideal learning environment for students to employ appropriate pedagogies and technologies. We are living in 21st century running with technological advancements which is also affecting the education system of the whole world. Today all the institution and the society required teachers who can adopt quickly and effectively with the changing challenges as per

the needs and demands of the education system. It's time for teachers to take different approach to education in order to fulfill the needs of 21st century students. Many technology applications in teaching offer the teachers a way in understanding the capacity of knowledge of their own self as well as the students and enable them to explore that to what extent they can work in bringing desirable changes during teaching –learning process. Techno-pedagogy can be considered as the wearing of the technologies of the craft of teaching into learning environment itself.

The effective use of technological advancements in the classroom does not only help students' growth and achievements but it also motivates and provides an opportunity in changing the role of teachers in the classroom. Also the use of technology in teaching learning gives teachers the opportunity to give special attention to every student. It increases interaction and interest level among the student making them an active learner. It also helps the students to imagine and complete the things that are being taught with the help of technology.

Techno Pedagogy skills are related to hybrid teaching style in which ICT is used to teach and learn in a classroom setting. Pedagogy literally translates to teaching science and art. " The term techno is derived from the Latin word 'texere' which means " to weave or to create." Thus techno pedagogy is an art of teaching with the addition of technology to improve academic achievement and also helps in remote learning. Education technology provides such teaching learning situation, which brings the best practices means of instruction, which effect on learning positively. There domains of knowledge covers three main areas with respect to techno-pedagogy, which are content pedagogy, and, technology respectively. The subject matter to be taught is referred to as content. Technology includes both modern and everyday technologies such as the computers, the internet, and digital video as well as overhead projectors, blackboards and books, pedagogy is the study of teaching and learning techniques processes, tactics, procedure and approaches. As a result techno pedagogical abilities refer to a teacher's ability to integrate these main areas of knowledge domain and apply them in a teaching learning environment.

First of all, we have to understand content which include the subject matter, content along with pedagogy and technology are the important aspects of teaching learning process. Actually good content knowledge and its successful integration with technology and pedagogy are the essence of quality education. So in this connection understanding of different types of pedagogy and technology are very much required.

Technological pedagogical content knowledge (TPACK) was introduced to the educational research field as a conceptual framework for understanding teacher knowledge that is required for technology integration (Mishra and Koehler, 2006) TPACK evolved from Shulman's (1986) theory

of pedagogical content knowledge (PCK) and focuses on the need for teacher to skillfully demonstrate their ability to integrate technology within the constructs of content and pedagogical domains. TPACK can be perceived as a teacher's intuitive understanding for teaching subject –specific content with appropriate pedagogical methods and selected technologies. It is well understood that teaching is a complex cognitive activity that required teachers to draw upon several types of knowledge (Kachier & Mishra). TPACK serves as a useful conceptual framework for thinking, analyzing and evaluating what teachers must know to integrate technology into teaching, but ultimately it must be understood as a framework for ways in which teaches might best develop this integrated knowledge.

Theoretical orientation :

The proposed study intends to explore the effects of technology integrated modules on technological pedagogical content knowledge and teaching effectiveness of pre-service teachers in English language teaching. So, to further enlighten the concern of the study it is necessary to define the concepts of technology integration, technological pedagogical content knowledge and teaching effectiveness.

In educational context, technology has the potential to increase access to education and improve its relevance and quality. Tinio (2002) asserted that Information & Communication Technology (ICT) has a tremendous impact on education in terms of acquisition and absorption of knowledge to both teachers and students through the promotion of :

- **Active learning :** ICT tools help for the calculation and analysis of information obtained for examination and also students' performance report are all being computerized and made easily available for inquiry. In contrast to memorization- based or rote learning, ICT promotes learner engagement as learners choose what to learn at their own pace and work on real life situations' problems.
- **Collaborative and Cooperative learning :** ICT encourages interaction and cooperation among students, teachers regardless of distance which is between them. It also provides students the chance to work with people from different cultures and working together in groups, hence help students to enhance their communicative skills as well as their global awareness. Researchers have found that typically the use of ICT leads to more cooperation among learners within and beyond school and there exists a more interactive relationship between students and teachers (Grégoire et al., 1996). "Collaboration is a philosophy of interaction and personal lifestyle where individuals are responsible for their actions, including learning and respect the abilities and contributions of their peers." (Panitz, 1996).
- **Creative Learning :** ICT promotes the manipulation of existing information and to create one's own knowledge to produce a tangible product or a given instructional purpose.

- **Integrative learning :** ICT promotes an integrative approach to teaching and learning, by eliminating the synthetic separation between theory and practice unlike in the traditional classroom where emphasis encloses just a particular aspect.
- **Evaluative learning :** Use of ICT for learning is student-centered and provides useful feedback through various interactive features. ICT allow students to discover and learn through new ways of teaching and learning which are sustained by constructivist theories of learning rather than students do memorisation and rote learning.

Technology Integration in teaching-learning process :

- the contribution new technologies can make to teaching and learning:
- New technologies stimulate the development of intellectual skills.
- New technologies contribute to the ways of learning knowledge, skills and attitudes, but still dependent on pre-requisite knowledge and type of learning activity.
- New technologies spur spontaneous interest more than traditional approaches of learning.
- Students using new technologies concentrate more than those in traditional settings
- Moreover the above outlined points are balanced by further genuine observations:
- Benefits of ICT for students are greatly dependent on the technological skills of the teachers and their attitudes towards technology.
- Skill and attitude in turn are largely dependent on the staff training in this area. (UNESCO Paris, 2002).

Technology Integrated Modules :

Technology integration can be described as of process of using existing tools, equipment and materials, including the use of electronic media for the purpose of enhancing learning. It involves managing and coordinating available instructional aids and resources in order to facilitate learning. It also involves the selection of suitable technology based on the learning needs of student as well as the ability to select suitable technology while planning instructions.

In the past, content mastery was considered as the only criteria for effective teaching and very little emphasis was given on its transaction. Effective teaching cannot be achieved by simply expert in the field nor solely by possessing certain skills and knowledge of pedagogical practices. It raised a very important question. How teachers adapt their content knowledge into forms that are comprehendible to all learners?

The TPACK framework, developed by Mishra and Koehler attempts to go beyond techno-centric approaches to one which emphasises the interrelation of technology, pedagogy and content. The framework describes the knowledge required for teachers to integrate ICT, recognising that

"teaching is a highly complex activity that draws on many kinds of knowledge and is complex" (Mishra and Koehler 2006).

TPACK is a theoretical framework for understanding teacher knowledge required for effective technology integration (Mishra & Koehler, 2006). The TPACK framework was proposed in order to emphasize the need to situate technology knowledge within content and pedagogical knowledge. TPACK considers teachers' knowledge as complex and multifaceted, critiquing techno-centric approaches that focus on the attainment of technology skills separate from pedagogy and content. The following seven components are included in the TPACK Framework.

- **Technology knowledge (TK) :** Knowledge about various technologies, ranging from low-tech technologies, such as pencil and paper, to digital technologies, such as the Internet, digital video, interactive whiteboards, and software programs.
- **Content knowledge (CK) :** Knowledge about the actual subject matter that teachers must know about to teach.
- **Pedagogical knowledge (PK) :** Knowledge about the methods and processes of teaching such as classroom management, assessment, lesson plan development, and student learning.
- **Technological pedagogical content knowledge (TPACK) :** Knowledge required by teachers for integrating technology into their teaching in any content area. Teachers, who have TPACK, act with an intuitive understanding of the complex interplay between the three basic components of knowledge (CK, PK, and TK).

Scope of the study :

Technology is an important component of pre-service language teachers training and various existing teachers training the learning environment is more dynamic than ever before and as a result today's learner are learning in a way that is very different. With the advancement of technology and rise of remote learning, classroom are being remodeled and redefine in a number of ways to fit or satisfy the evolving needs of modern digital learner. Technology allows the educators to remove the physical barriers of the classroom and connect the curriculum with the real world and it can truly enrich the students' experience. No two students learn the same way but right insight tools, educators can address diversity in learning styles and experience.

Here are some points that describe how technology satisfies the learner's need.

- It helps to connect the student to the real world
- Prepare student for the work force (modern office)
- Encourage collaboration (classroom, Google meet)
- Support different type of learner.

- Access information more easily (quickly & accurately)
- Teaches the student how to be responsible online.
- Add a function to learning (game-based learning.

Hence, we can say that the demand of digital learning has increased and it will be an essential part of the educating system in the coming years.

Objective : To study the effect between trained and untrained pre-service teachers through technology integrated modules in terms of their technological pedagogical content knowledge.

Hypothesis : There exists no significant difference between trained and untrained pre-service teachers through technology integrated modules in terms of their technological pedagogical content knowledge.

Sample :

The population of the study comprised of pre-service teachers of teacher education institutions in the Una district of Himachal Pradesh, India. The 100 pre-service teachers studying in 9 teacher education institutions, having English as their pedagogy subject, constituted the sample. The 51 pre-service teachers formed the experimental group and other 49 pre-service teachers formed the control group. So, the sample of 100 pre-service teachers was selected through purposive sampling.

Tool :

- Scale on Technological Pedagogical Content Knowledge (TPACK)
- Interview schedules for pre-service teachers and School teachers developed and used to understand the impact of technology integrated modules

Statistical Analysis

Table 1

	Group	**N**	**Mean**	**SD**	**SE_D**	**t' value**	**p-value**
TPACK	Experimental	51	167.51	6.011	1.219	12.521	0.00*
	Control	49	152.24	6.180			

*significant at 0.01 level of significance and **significant at 0.05 level of significance Table 1 depicts significant difference in mean TPACK scores of experiment and control groups. There was significant difference between the experimental group (M=167.51; SD=6.011) and control group (M=152.24; SD=6.180) as t (98) = 1.219, p-value= 0.00. The mean analysis shows that the experimental group has shown more improvement in TPACK as compared to control group. There is significant

effect of technology integrated modules on technological pedagogical content knowledge of pre-service teachers in experimental group.

Further, the p-value= 0.00 is low (less than 0.05), so null hypotheses is rejected at 0.01 level of significance.

It can be concluded that pre-service teachers trained through technology integrated modules and not trained through technology integrated modules shows significant difference in terms of their TPACK. The experimental group has shown more improvement in TPACK as compared to control group.

Thus, there exists a significant difference between pre-service teachers trained through technology integrated modules and not trained through technology integrated modules in terms of their technological pedagogical content knowledge.

Conclusion :

- There exists no significant difference between trained and untrained pre-service teachers through technology integrated modules in terms of their technological pedagogical content knowledge.
- There is no significant effect of technology integrated modules on technological pedagogical content knowledge of male & female pre-service teachers.
- There is no significant effect of technology integrated modules on technological pedagogical content knowledge of urban & rural pre-service teachers.

Bibliography :

1. AACTE (Ed.). (2008). The handbook of technological pedagogical content knowledge (TPCK) for educators. New York: Taylor
2. Abbitt, J. T. (2011). Measuring technological pedagogical content knowledge in pre-service teacher education: A review of current methods and instruments. *Journal of Research on Technology in Education*, *43*(4), 281-300.
3. Alexandrea, Tsvara. "Evaluation of Language Teaching Methods in Enhancing English Language Skills: The Case of Grade 11 Students at Nampula Secondary School in Mozambique." International Journal Of Applied Linguistics & English Literature, vol. 11, no. 1, 2022, pp. 127-139.
4. Allan, W. C., Erickson, J. L., Brookhouse, P., & Johnson, J. L. (2010). Teacher professional development through a collaborative curriculum project: An example of TPACK in Maine. Tech Trends, 54(6), 36–43.

5. Almusharraf, Sarah, and Muhammad Ghaffar. "Instructional Practices and Challenges of English Language Teachers in Elementary Schools in Central Punjab, Pakistan." International Journal of Elementary Education, vol. 3, no. 3, 2024, pp. 1-18.
6. Angeli, C., & Valanides, N. (2009). Epistemological and methodological issues for the conceptualization, development, and assessment of ICT-TPCK: Advances in technological pedagogical content knowledge (TPCK). Computers & Education, 52(1), 154-168.
7. Angeli, C., and Valanides, N. 2005. "Preservice Elementary Teachers as Information and Communication Technology Designers: An Instructional System Design Model Based on an Expanded View of Pedagogical Content Knowledge." *Journal of Computer Assisted Learning* 21, no. 4: 292-302.
8. Asare, Samuel K., and Kwame A. Amo. "Teaching Self-Efficacy and Instructional Effectiveness among Preservice Management Teachers." *Journal of Educational Research and Development* 15, no. 2 (2023): 223-240.
9. Atun, H., and Usta, E. 2019. "The Effects of Programming Education Planned with the TPACK Framework on Learning Outcomes." *Participatory Educational Research (PE)* 6, no. 2 : 26-36. https://doi.org/10.17275/per.19.10.6.2.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 70-77

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

उपमा मुक्तिबोधस्य

डॉ. दीपक त्रिपाठी

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी–विभाग, रामकृष्ण कॉलेज, मधुबनी, बिहार।

प्रयोगवादी अथवा प्रगतिशील चेतना से युक्त काव्य में परम्परागत कलात्मक तत्त्वों जैसे– रस, छन्द और अलंकार इत्यादि ढूँढ़ना एक निरर्थक और निष्प्रयोज्य कार्य करने जैसा है। ऐसा इसलिए भी कहा जा सकता है कि ये 'वाद' अपने मूल में या कहें कि अपनी सैद्धान्तिकी में पूर्ववर्ती काव्य–परम्परा से अलग हैं। आग्रहपूर्वक अलग हैं, सायास अलग हैं। इसलिए मुक्तिबोध, जो कि मेरी दृष्टि में दोनों परम्पराओं (प्रगतिवाद, प्रयोगवाद) से जुड़े हैं, के काव्य में परम्परागत कलात्मक तत्त्वों को खोजने का खतरा तो नहीं उठाया जा सकता, लेकिन कुछ अलंकारों पर बात की जा सकती। विभिन्न अलंकारों के अन्तर्गत कुछ ऐसे अलंकार भी हैं जिनके बिना काव्य और कविता तो क्या, हम सामान्य बातचीत भी नहीं कर सकते। उपमा उन्हीं अलंकारों में से एक है। यहाँ मुक्तिबोध की कविताओं में व्यक्त उपमाओं का विवेचन किसी कलात्मक अन्वेषण अथवा अभिव्यक्तिगत सौन्दर्य–विश्लेषण हेतु नहीं किया जा रहा, बल्कि एक अन्य उद्देश्य से किया जा रहा है।

उपमा अलंकार चूँकि एक अर्थालंकार है और मुक्तिबोध की कविताएँ अर्थों की कई–कई परतें अपने में समेटे रहती हैं, तो शायद इस उपमा–अन्वेषण के बहाने अर्थों के कुछ नये सिरे हाथ लग जायें। मुक्तिबोध स्वयं लिखते हैं :–

झरने पुराने पड़ गये
उनकी उपमा अब कोई नहीं देता
शायद धोबी दें
जो वहाँ कपड़े फचीटते हैं
या किसान
जो उसमें फँसी हुई गाड़ी घसीटते हैं
लेकिन वे सभ्य नहीं हैं
इसीलिए झरने की उपमा अब लभ्य नहीं है
फिर भी मैं झरने की उपमा जरूर दूँगा
उस सुदूर को
जो बहता हुआ हमारी ओर आ रहा है।[1]

यहाँ एक और बात स्पष्ट करना आवश्यक है कि मुक्तिबोध की प्रतिनिधि कविताएँ प्रतीकों के सहारे

उद्भूत, विकसित और समाप्त होती हैं, इसलिए किसी सटीक अर्थ–प्राप्ति अथवा एक ही अर्थ की उम्मीद नहीं की जा सकती। मुक्तिबोध का काव्य किसी तिलिस्मी हवेली में घूमने जैसा है– जहाँ क्या, कब, कहाँ, कैसे हो जाय और कितना हो जाय, कुछ पूर्व–निश्चित नहीं। यहाँ अनिश्चितता एक अप्रत्याशित रोमांचक जिज्ञासा की सृष्टि करती है। जिस प्रकार तिलिस्मी चक्रव्यूह में कोई वस्तु छू लेने पर कोई रास्ता खुल जाता है या कोई नाम लेने पर कुछ तूफान जैसा चलने लगता है अथवा कोई पहेली हल करने पर खजाने का नक्शा हाथ लग जाता है उसी तरह मुक्तिबोध की कविताओं में कौन–सा प्रतीक किस विचारधारा का निःसरण कर दे, अथवा किस रूपक से संघर्ष की पृष्ठभूमि तैयार हो जाय या कौन–सी उपमा अर्थों के नये जाल फैला दे..... कुछ कहा नहीं जा सकता। मैंने इनके कुछ शब्दों को छूने की कोशिश भर की है और दावे के साथ नहीं कह सकता कि जो हाथ लगा है वो कुछ सार्थक ही है। यहाँ मैंने कुछ प्रतीकों और रूपकों के अर्थ स्वयं गढ़े हैं या यूँ समझें कि प्रस्तावित किये हैं तथा कुछ के अर्थ और जगहों से ग्रहण किये हैं। सभी प्रतीकों और रूपकों का केवल एक ही अर्थ होगा ये तो बिलकुल नहीं कहा जा सकता, लेकिन प्रस्तावित अर्थ तमाम सम्भावित अर्थों में से एक अवश्य है, वैकल्पिक ही सही।

मुक्तिबोध की एक कविता है – 'भूल–गलती', इसमें वे लिखते हैं :

भूल–गलती
आज बैठी है जिरहबख्तर पहनकर
तख्त पर दिल के
चमकते हैं खड़े हथियार उसके दूर तक
आँखें चिलकती हैं नुकीले तेज पत्थर–सी।[2]

ये इस कविता की शुरूआती पंक्तियाँ हैं। पूरी कविता में एक आक्रोश व्यक्त किया गया है, उसके प्रति जो हमारी भूल अथवा गलती से तख्त पर बैठ गया है। यही नहीं गलती से तख्त अर्थात् सिंहासन पर बैठे उस व्यक्ति को ये भ्रम है कि वो सबके दिल पर बैठा है, क्यूँकि पंक्ति– 'तख्त पर दिल के' स्पष्ट संकेत कर रही है कि उसे लग रहा है वो 'दिलों पर हुकूमत' कर रहा है, लेकिन ऐसा है नहीं। यहाँ ध्यातव्य हो कि 'चिलकना' शब्द का अर्थ 'रह–रहकर दर्द उठना' और 'रह–रहकर चमकना' भी है। मुक्तिबोध ने दोनों अर्थों को एक साथ साधा है, लेकिन अधिक जोर 'रह–रहकर दर्द उठने' पर है, क्यूँकि पिछली पंक्ति में वो कहते हैं– 'चमकते हैं खड़े हथियार दूर तक' और अगली ही पंक्ति में 'चिलकने' शब्द का प्रयोग कर दिया है जो 'चमकने' के साथ दर्द का भी एहसास दे रहा है। तख्ते–शाही पर भूल और गलती से बैठे शख्स को देखना आँखों में किसी नुकीले पत्थर के चुभ जाने जैसा है। यहाँ इस दृश्य के लिए आँखों में नुकीले तेज पत्थर चुभने की उपमा इसलिए भी औचित्यपूर्ण जान पड़ती है कि जो तख्ते–शाही पर बैठा है वो नुकीले तेज पत्थर की तरह कष्टकारी, निष्ठुर और दयाहीन है। यहाँ 'दिल का तख्त' और 'आँखों में पत्थर चुभना' संयोग से 'पत्थर–दिल' होने या 'संग–दिल' होने का काव्यात्मक वातावरण भी सृजित कर रहे हैं। ये पंक्तियाँ सत्ताधारी का विपक्ष भी सृजित कर रही हैं।

मुक्तिबोध की एक सुप्रसिद्ध कविता है– 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', उसका एक अंश है :–

टेढ़े–मुँह चाँद की ऐयारी रौशनी भी खूब है
मकान–मकान घुस लोहे के गजों की जाली

के झरोखों को पार कर
लिपे हुए कमरे में
जेल के कपड़े-सी फैली है चाँदनी
दूर-दूर काली
धारियों के बड़े-बड़े चौखट्टों के मोटे-मोटे
कपड़े-सी फैली है।[3]

यहाँ स्पष्ट है कि मुक्तिबोध ने तत्कालीन सत्ताधीश को चाँद माना है और ये भी सभी को ज्ञात है कि चाँद की उपमा किसके सर से दी जा सकती थी। यहाँ 'मुँह टेढ़ा होना' अपने सामान्य आशय के अतिरिक्त एक मुहावरे के रूप में भी प्रयुक्त हुआ है, जिसका अर्थ है– 'क्रोधित होना, नाराज होना'। यह 'मुँह बनाने' या 'मुँह बिचकाने' जैसे मुहाविरों के समकक्ष अर्थों में है। यहाँ पहली ही पंक्ति में 'ऐयारी रौशनी' शब्द–युग्म का इस्तेमाल करके कवि ने स्पष्ट संकेत दिया है कि चाँद की रौशनी अर्थात् सत्ताधीश का शासन–प्रशासन 'ऐयारी' है, यानी रूप बदलनेवाला या बहुरूपिया है। 'चन्द्रकान्ता' उपन्यास ने हिन्दी–पाठकों को 'ऐयारी' शब्द का अर्थ अच्छे ढंग से समझा दिया है। जब कवि लिखता है कि ये रौशनी या चाँदनी मकानों की सलाखों और खिड़कियों से घर के अन्दर पहुँचती है तो ऐसा लगता है कि कैदियों का जेल में पहनने वाला कपड़ा फैला हो। इन पंक्तियों से, इस उपमा से दिमाग में सहज ही कैदियों का वो कपड़ा उभरता है जिस पर सफेद पृष्ठभूमि पर काले रंग की धारियाँ होती हैं। साथ ही दिमाग में ये चित्र भी उभरता है कि सलाखों के पार से आने वाली रौशनी अपनी परछाईं से उसी तरह के कपड़े का प्रतिबिम्ब बना रही है। इस उपमा से कवि ने इशारा किया है कि ये रौशनी अर्थात् ये शासन–प्रशासन ऐसा है कि लोग खुद को अपने ही घर में कैद महसूस कर रहे हैं।

यही नहीं, कवि ने इस 'ऐयारी रौशनी' की पोल खोलने अर्थात् इसके अलग–अलग भेष बदलने तथा रूप बदलने को स्पष्ट करने के लिए पूरी कविता में अलग–अलग जगह उपमाओं की झड़ी लगा दी है –

1. **चोरों-सी, उचक्कों-सी, आवारा मछुओं-सी, शोहदों-सी चाँदनी।**[4]
2. **गन्दगी के काले-से नाले के झाग पर**
   बदमस्त कल्पना-सी फैली थी रात भर।[5]
3. **सेक्स के कष्टों के कवियों के काम-सी।**[6]
4. **खूबसूरत अमरीकी मैगजीन पृष्ठों-सी।**[7]

मुक्तिबोध की एक कविता है- 'डूबता चाँद कब डूबेगा'। इस पूरी कविता में कवि ने रात के समय सक्रिय जीव–जन्तुओं को प्रतीक बनाते हुए अपने विचारों को व्यक्त किया है। यहाँ रात स्वयं एक प्रतीक है....ये प्रतीक है एक निराश–हताश युग का, ये प्रतीक है अच्छे–बुरे सबको छुपा देने का, ये शोषकों के, चोरों के, अत्याचारियों के सक्रिय होने के समय का भी प्रतीक है, रात प्रतीक है हर दर्द के, हर पीड़ा के, हर चिन्ता और दुःख के बढ़ जाने का। रात उन लोगों के लिए अनुकूल है जिन्हें अँधेरे में भी दिखायी देता है। रात सीधे–सादे साधारण जीवों के लिए प्रतिकूल है तथा शिकारी जीवों के मुआफिक है। मुक्तिबोध कविता की रौ में रात की उद्विग्नता व्यक्त करते–करते जैसे व्यग्र हो उठते हैं और कहते हैं :–

'कुछ ऐसी चलने लगी हवा,

अपनी अपराधी कन्या की चिन्ता में माता-सी बेकल
उद्विग्न रात
के हाथों से
अँधियारे नभ की राहों पर
है गिरी छूटकर
गर्भपात की तेज दवा
बीमार समाजों की जो थी।'[8]

यहाँ उपमा से युक्त पंक्ति है – **'अपनी अपराधी कन्या की चिन्ता में माता-सी बेकल/उद्विग्न रात'।** वास्तव में ये रात की उद्विग्नता नहीं, बल्कि कवि की उद्विग्नता है जो रात के उन्हीं प्रतीकों के कारण उत्पन्न हुई है जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है। जिस प्रकार एक माता अपनी अपराधी कन्या के कृत्यों के कारण चिन्तित और उद्विग्न हो उठती है या सतत् उद्विग्न रहती है, उसी प्रकार इस प्रतिकूल रात में कवि चिन्तित और उद्विग्न है कि हमारे बीमार समाज के गर्भ में क्या–क्या जायज–नाजायज सम्भावनाएँ पल रही हैं। यहाँ 'कन्या' शब्द विशेष अर्थ प्रदान कर रहा है कि हमारा समाज कुछ भी नया, कुछ भी बेहतर पैदा करने के लिए अभी अधिकृत नहीं किया गया है, यहाँ कुछ भी परिवर्तन और सृजन सम्भव नहीं। जो लोग समाज में अथवा साहित्य में कुछ भी नया पैदा करने के लिए उद्धत हैं उन्हें अनधिकृत मानकर उस नवीन और मौलिक सृजन को समाप्त करने का प्रयास किया जा रहा है। गर्भपात की दवा का आशय कुछ भी पैदा होने की सम्भावना को समाप्त कर देना है। यहाँ इस उपमा से भाव–प्रवणता बढ़ गयी है।

मुक्तिबोध की एक कविता है– **'मुझे पुकारती हुई पुकार'**, इसमें वे पुकार के विभिन्न आयामों को उद्घाटित–परिभाषित करते हुए एक जगह कहते हैं :–

विराट् झूठ के अनन्त छन्द-सी
भयावनी अशान्त पीत धुन्ध-सी
सदा अगेय।'[9]

वस्तुतः यहाँ जिस पुकार की ओर मुक्तिबोध संकेत कर रहे हैं वो कभी तो स्वयं उनके भीतर की ही आवाज है जो कभी उन्हें पुकारती है और कभी वो पुकार उस समाज, उस वर्ग की पुकार बन जाती है जिसकी एक इकाई कवि स्वयं भी है। ये पुकार एक मानसिकता का प्रतीक है जो बार–बार कवि को अपनी तरफ प्रवृत्त करने की कोशिश करती है। इस पुकार का विभिन्न प्रकार से विश्लेषण करते–करते कवि कह उठता है कि ये 'विराट् झूठ के अनन्त छन्द–सी' है, ये मानसिकता 'भयावनी अशान्त पीत धुन्ध–सी' है। यहाँ 'छन्द' शब्द अपने सामान्य अर्थ के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट अर्थों में भी प्रयुक्त हुआ है। वामन शिवराम आप्टे के संस्कृत–हिन्दी शब्दकोश में 'छंद्', 'छन्दः' और 'छन्दस्' के प्रमुख अर्थ इस प्रकार दिये गये हैं– 'प्रसन्न करना, बहलाना–फुसलाना, कामना, इच्छा, कल्पना, जालसाजी, धोखा, चालाकी' आदि।[10] इन तमाम अर्थों को दृष्टिगत करने पर स्पष्ट होने लगता है कि कवि 'छन्द–सी' की उपमा क्यूँ दे रहा है। यह अनन्त झूठ जो समाज में फैला है, या सत्ता द्वारा फैलाया जा रहा है, ये झूठ हमें प्रसन्न कर रहा है, ये झूठ हमें बहला–फुसला रहा है, ये झूठ हमारे साथ धोखा भी कर रहा है। आशय यह है कि ये झूठ अन्ततः हमें चालाकी से अपने जाल में फँसा ही लेता है। इसीलिए 'अमरकोश'

में 'छल–छन्द' का अर्थ दिया है– वह काम जो किसी को धोखे में डालकर कोई स्वार्थ साधने के लिए किया जाये।

यदि इन अर्थों से हटकर हम छन्द के प्रायः प्रचलित अर्थ को ग्रहण करें तो भी, जिस प्रकार काव्य में छन्द का अपना एक जाल होता है, अर्थात उसकी अपनी एक बनावट और बुनावट होती है और हम उसकी मात्राओं के उतार–चढ़ाव में मंत्रमुग्ध होते जाते हैं, उसी प्रकार विराट झूठ हमें एक विराट वाक–जाल में, विराट उतार–चढ़ाव में फँसा रहा है या फँसा लेता है।

ये तथ्य भी रोचक है कि वेद के छह अंगों में से एक अंग 'छन्द' भी है। वेद में 'विराट अनन्त सत्य' का उद्‌घाटन है, लेकिन मुक्तिबोध यहाँ विराट और अनन्त झूठ की बात रहे हैं। ये महज संयोग भी हो सकता है, परन्तु अर्थपूर्ण संयोग है। अन्तिम पंक्ति की उपमा 'पीत धुन्ध–सी' में 'पीत' (पीला) शब्द 'जीर्ण–शीर्ण, बीमार तथा निराशा' का द्योतक है। इसके अतिरिक्त हिन्दू–धर्म सम्बन्धी अधिकांश कर्मकाण्ड और क्रियाकलाप में पीले रंग की प्रधानता रहती है, 'पीत धुन्ध–सी' जैसी उपमा से जो इस तरफ संकेत जा रहा है उससे भी इन पंक्तियों का अर्थ व्यापक हो जाता है।

मुक्तिबोध की एक कविता है– **'मेरे सहचर मित्र'।** इसमें यद्यपि कि कवि अपने मित्र से प्रश्न करता है और जो उत्तर मिलते हैं उनका भाव–प्रभाव ग्रहण करता है, परन्तु सम्पूर्ण वार्तालाप की बुनावट इतने महीन और पारदर्शी धागों से हुई है कि जगह–जगह ये भ्रम होता है कि ये सहचर मित्र कोई बाहर का मित्र नहीं है, बल्कि कवि की स्वयं से बातचीत है। कवि अपने संघर्ष में जब अकेला पड़ने लगता है तो अपनी स्वप्न–शक्ति या कल्पना–शक्ति से एक आभासी मित्र का सृजन कर लेता है। कभी–कभी उसे ही 'आत्मा के मित्र मेरे' की संज्ञा भी देता है। इस वार्तालाप में विभिन्न प्रश्नों पर जैसे– 'मानव–समाज रूपान्तर विधि' पर, 'मर्मों की व्यथा–कथा' पर, 'अंगार तपस्या' पर, 'मानव–स्वभाव' और 'मानव–सभ्यता–समस्या' पर उत्तर अपेक्षित हैं। इसी क्रम में उपमा देते हुए मुक्तिबोध कहते हैं :–

पानी के काले थर के नीचे कीचड़ में
अज्ञान–व्हेल की प्रदीर्घ भीषण ठठरी–सा
मैं कहीं पड़ा होता सूने में,
किसी चोर की गठरी–सा
रह अन्धकार के भूसे–सा
निशि–वृषभ–गले।[11]

यहाँ एक साथ तीन उपमाएँ और दो रूपक आश्चर्यजनक ढंग से शब्दों का एक समीकरण बना रहे हैं, जिसे हल करने के लिए अर्थों और प्रतीकों के सूत्र एक–एक करके समझने होंगे। यहाँ कवि ने 'ठठरी' शब्द का प्रयोग उसके विभिन्न अर्थों में एक साथ किया है। 'ठठरी' का कोशगत अर्थ– 'हड्डियों का ढाँचा, अर्थी, भूसा बाँधने का जाल' है। अपने भीतर रहनेवाला सहचर मित्र जब अपने 'उत्तर स्पर्श' से आत्मा की गुफा का शिलाद्वार धड़ से खोल देता है तब कवि को एहसास होता है कि हम बिना ज्ञान के गतिहीन हैं। यहाँ 'अज्ञान–व्हेल' में जो रूपक है वो यही स्पष्ट कर रहा है कि ज्ञान का होना किसी मछली की सहज–स्वाभाविक गतिशीलता की तरह है, जबकि अज्ञानता में पड़े रहना किसी मछली के कंकाल की तरह निरर्थक है।

कवि आगे इसे एक अन्य उपमा से भी स्पष्ट करता है कि बिना मौलिक ज्ञान के व्यक्ति किसी चोर की गठरी जैसा है जिसमें उसका अपना कुछ नहीं है.....सब दूसरे का है। उद्धृत कवितांश की अन्तिम पंक्ति 'निशि–वृषभ–गले' एक ऐसा रूपक है कि जिसकी जितनी तारीफ की जाय कम है। ज्ञान के अभाव में व्यक्ति उस अन्धकार रूपी भूसे जैसा है जो रात रूपी वृषभ के गले में पड़ा हो, फँसा हो। साथ ही अज्ञान की अब तक हिन्दी–काव्य में जो उपमाएँ मिलती हैं उनमें शायद ही अज्ञान को मुक्तिबोध से पूर्व कहीं 'व्हेल' से उपमित करते हुए 'अज्ञान–व्हेल' कहा गया हो या कहीं अज्ञानी को 'अन्धकार के भूसे' जैसा कहा गया हो। ये बिलकुल अभिनव है। व्हेल मछली का आकार कितना बड़ा हो सकता है ये कहा नहीं जा सकता। एक से बढ़कर एक आकार (प्रम) की व्हेल प्राप्त होती हैंय इसी तरह अज्ञान के आकार–प्रकार की कोई सीमा नहीं है। एक से बढ़कर एक अज्ञानी हैं।

मुक्तिबोध की एक अन्य कविता है– 'एक अन्तःकथा', जिसमें वे उस बच्चे के वर्णन से कविता की शुरूआत करते हैं जो अपनी माँ के पीछे–पीछे सर पर टोकरी उठाकर चल रहा है। दोनों 'अग्नि–काष्ठ' एकत्र कर रहे हैं। उस टोकरी में इकट्ठा किये जा रहे काले–भूरे रंग के डंठलों और टहनियों को कवि इस तरह देखता है :–

सहज उभरी फैली-सँवरी
डंठल-टहनी की कठिन साँवली रेखाएँ
आपस में लग यों गुँथ जातीं
मानो अक्षर नवसाक्षर खेतिहर के-से।[12]

स्पष्ट है कि कवि सूखी टहनियों और डंठलों को काली–साँवली रेखाओं की तरह देख रहा है। उसे ये भी लगता है कि जैसे ये टहनियाँ किसी नये–नये साक्षर हुए खेतिहर के अक्षर हों–बेढंगे, टेढ़े–मेढ़े और अनगढ़। यहाँ जिस ढंग से उपमा का प्रयोग हुआ है वो कविता के अर्थ को उत्तरोत्तर समृद्ध करता है। इस उपमा से एक आशय इस तरफ भी जाता है कि जिस प्रकार अग्नि जलाने के लिए सूखी टहनियों और डंठलों की जरूरत होती है उसी तरह क्रान्ति की आग जलाने के लिए खेतिहर और मजदूरों का शिक्षित होना या कम–से–कम साक्षर होना जरूरी है। ये भी अर्थ–संकेत है कि अगर कोई वंचित–शोषित, खेतिहर–किसान साक्षर होने की दिशा में अग्रसर होता है तो ये आग लगाने का सामान एकत्र करने जैसा है, ये एक क्रान्ति–सम्भवा स्थिति है।

मुक्तिबोध की उपमाओं को खोलने के इस क्रम में एक अन्तिम उदाहरण प्रस्तुत है। इनकी कविता 'चकमक की चिनगारियाँ' की शुरूआत कुछ यूँ होती है :–

अधूरी और सतही जिन्दगी के गर्म रास्तों पर
हमारा गुप्त मन
निज में सिकुड़ता जा रहा
जैसे कि हब्शी एक गहरा स्याह
गोरों की निगाहों से अलग ओझल
सिमिटकर सिफर होना चाहता हो जल्द।[13]

यहाँ प्रथम दृष्टया ही 'गर्म रास्तों पर' वाक्यांश की 'गहरे स्याह हब्शी' से जो सम्बद्धता दिखती है वो विशेष

रूप से उल्लेखनीय है। उद्धृत कवितांश में कवि उस व्यक्ति, समाज या वर्ग की तरफ संकेत कर रहा है जो एक अधूरी जिन्दगी जी रहा है। ये समाज दिन–ब–दिन अपने 'निज मन में सिकुड़ रहा है'। यहाँ जिस उपमा का प्रयोग हुआ है वो विशेष रूप से रेखांकनीय है : किसी काले हब्शी का गोरों की निगाहों से ओझल होना या तो डर के कारण होगा या एहसासे–कमतरी यानी हीन–भावना के कारण होगा। समाज अथवा व्यक्ति जिन्दगी के 'गर्म रास्तों पर' यानी परेशानी, पीड़ा तथा कष्ट से भरे रास्तों पर विभिन्न प्रकार के डर और हीन–भावनाओं से सिमटकर सिफर अर्थात् शून्य होता जा रहा है या अपने ही हाथों अपने को मिटा रहा है, किसी 'गिनती' में नहीं बच रहा है। ये उपमा कविता के भाव और अर्थ में आश्चर्यजनक ढंग से वृद्धि कर रही है।

उपर्युक्त विवेचित–विश्लेषित विभिन्न उपमाओं के अतिरिक्त एक से बढ़कर एक उपमाएँ मुक्तिबोध ने पेश की हैं। उन सारी उपमाओं का विश्लेषण एक विस्तृत अध्ययन की अपेक्षा करता है, इसलिए यहाँ कुछ पंक्तियों को मात्र अवलोकनार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है :–

अ. व्यक्तित्व वह कोमल स्फटिक प्रासाद–सा।[14]

आ. बुद्धि की आँखों में/स्वार्थों के शीशे–सा।[15]

इ. आत्मबिम्ब–सा उसका तेजस्वी मुख–मण्डल।[16]

ई. खुदा के बन्दों का बन्दा हूँ बावला
परन्तु कभी–कभी अनन्त सौन्दर्य संध्या में शंका के
काले–काले मेघ–सा
काटे हुए गणित की तिर्यक रेख–सा
सरीसृप–सृक–सा।[17]

उ. कि जिससे वक्ष/हो सिद्धान्त–सा मजबूत।[18]

ऊ. मार्मिक चोट के गम्भीर दोहे–सा।[19]

ए. हृदय के रक्त–सर में, सूर्यमणि–सा ज्ञान डूबा है।[20]

ऐ. जमकर पत्थर बन गये दुखों–सी/धरती की प्रस्तर–माला।[21]

ओ. सागर–तरंगों पर भयानक लट्ठे–सा/डूबता उतराता दिखायी देता हूँ...।[22]

अं. स्वर्णिम कमलों की पाँखुरी–जैसी ही/ज्वालाएँ उठती हैं उससे।[23]

यहाँ मुक्तिबोध की मात्र उपमाओं का उल्लेख किया गया है। इनकी कविताओं में उत्प्रेक्षा का इतना अधिक और सफल प्रयोग मिलता है कि उस पर अलग से एक लेख की आवश्यकता होगी। यही नहीं, मुक्तिबोध के काव्य में रूपकों का इतना नव्य, व्यापक और समर्थ प्रयोग मिलता है कि उस पर अलग से एक लघु पुस्तक ही लिखी जा सकती है।

सन्दर्भ :–

1. मुक्तिबोध रचनावली : भाग– दो, सम्पा. नेमिचन्द्र जैन, संस्करण 2011, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 174
2. वही, पृ.– 390

3. चाँद का मुँह टेढ़ा है, मुक्तिबोध, पन्द्रहवाँ संस्करण 2003, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ.– 57
4. वही, पृ.– 59
5. वही, पृ.– 59
6. वही, पृ.– 59
7. वही, पृ.– 60
8. वही, पृ.– 69
9. वही, पृ.– 89
10. संस्कृत–हिन्दी शब्दकोश, वामन शिवराम आप्टे, कमल प्रकाशन, नयी दिल्ली।
11. मुक्तिबोध रचनावली : भाग– दो, सम्पा. नेमिचन्द्र जैन, संस्करण : 2011, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 250–251
12. चाँद का मुँह टेढ़ा है, मुक्तिबोध, पन्द्रहवाँ संस्करण 2003, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 128–129
13. मुक्तिबोध रचनावली : भाग– दो, सम्पा. नेमिचन्द्र जैन, संस्करण 2011, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 232
14. चाँद का मुँह टेढ़ा है, मुक्तिबोध, पन्द्रहवाँ संस्करण 2003, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, पृ. 41
15. वही, पृ.– 57
16. वही, पृ.– 125
17. वही, पृ.– 138
18. वही, पृ.– 152
19. वही, पृ.– 153
20. वही, पृ.– 160
21. वही, पृ.– 177
22. वही, पृ.– 199
23. वही, पृ.– 292

मोबाइल– 09415142314
ईमेल– deepakruhani@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 78-80

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में संस्कृति

चन्दन कुमार
शोध छात्र, हिन्दी विभाग
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार।

'संस्कृति' क्या है? आज संस्कृति का अर्थ संकुचित और संकीर्ण हो गया है। इसे अंग्रेजी में कल्चर कहा जाता है। भार्गव आदर्श, हिंदी शब्दकोश के अनुसार– "संस्कृति (सं, स्त्री) संस्कार, सुधार, परिष्कार, शुद्धि, सजावट, सभ्यता, चौबीस वर्षों के वृतों की संज्ञा''।

कहने का अभिप्राय संस्कृति हमारी परंपरा का शाश्वत मूल्यों का प्रवाह है तथा हमारी चेतना को झंकृत करने वाली प्रेरणा है और पहचान भी। संस्कृति राष्ट्र की आधारशिला है। संस्कृति का बोध जीवन का बोध है। दिशा का बोध है और अतीत को पहचान कर भविष्य की ओर तीव्रता से उन्मुख होने का बोध भी है डॉक्टर राधाकृष्णन ने ठीक ही कहा था– संस्कृति विवेक'बुद्धि को, जीवन को भली प्रकार जान लेने का नाम है। शिक्षा मूलतः साधना है। सांस्कृतिक गतिविधियों के समायोजन से यह साधना और दीप्त तथा सार्थक होती है।

संस्कृत शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है 'सम' + 'कृति' = संस्कृति। 'सम' उपसर्ग का अर्थ है अच्छा और कृति का अर्थ है – करना। इस अर्थ में यह संस्कार की समानार्थक है। संस्कृति एक जटिल अवधारणा है। एक ऐसी व्यवस्था माना जाता है जिसमें व्यवहार के दंश, भौतिक तथा अभौतिक प्रतीक, परंपराएं, ज्ञान, विश्वास अविश्वास आदि सन्निहित होते हैं। संस्कृति सदैव एक ऐसी वस्तु है जिसे अपनाया जा सके। प्रसिद्ध समाजशास्त्री एडवर्ड टायलर का कथन है कि– "संस्कृति वह जटिल समग्रता हैं जिसमे ज्ञान, विश्वास, कला, आर्दश, कानून, प्रथा एवं अन्य किन्ही भी आदतों एवं क्षमताओं का समावेश होता है जिन्हे मानव ने समाज के सदस्य होने के नाते प्राप्त किया है।"[1]

बीरस्टीड के अनुसार "संस्कृति वह जटिल संपूर्णता है जिसमें वे सभी दंश सम्मिलित हैं जिन पर हम विचार करते हैं व कार्य करते हैं और सब कुछ जो समाज के सदस्य होने के नाते हम अपने पास रखते हैं।"[2] प्रत्येक समाज की अपनी एक विशिष्ट संस्कृति होती है। समाज एवं संस्कृति में इतना गहरा संबंध है कि कुछ विद्वान एक दूसरे को पूरक मानते हैं किंतु यहां हमारे विवेच्य का प्रश्न है–"कृष्णा सोबती के उपन्यासों में संस्कृत।"[3]

संस्कृति की झलक हमें कृष्णा सोबती की कृति 'दिलो दानिश' में देखने को स्पष्ट रूप से मिलती है। लेखिका ने 'दिलो दानिश' में उस संस्कृति के चित्रण की ओर मुड़ी है, जो हिंदू–मुस्लिम साहचर्य से जन्मी है, जिसमें दोहरापन विद्यमान हैं। इस संस्कृति के प्रतीक कृपानारायण पारिवारिक संहिता, पत्नी और प्रेमिका, हवेली

और फारशखाने के बीच द्वंदग्रस्त हैं। उनकी परिणति बड़ी करुण है। परिवार और पत्नी के स्तर पर वे हिंदू–संस्कारों से ग्रस्त हैं और अपनी रईसी और प्रेमिका के स्तर पर मुस्लिम सामंती संस्कृति से ग्रस्त हैं। हवेली और फरशखाने की नैतिक संहिताएं और संस्कृतियाँ अलग–अलग है। इन दोनों संस्कृतियों में स्त्रियां पिसती हैं, हवेली में कुटुंबप्यारी और फराशखाने में महक बानो। महकबानो के मनोद्वंद के माध्यम से उसके चरित्र को भरने में लेखिका को अद्‌भुत सफलता मिली है। इसका कारण यह है कि कृष्णा सोबती के 'दिलोदानिश' उपन्यास के केंद्र में स्त्री है। कुटुंबप्यारी की अपेक्षा महाकबानो का चित्रण अधिक प्रभावशाली बन पड़ा है। शायद इसलिए की लेखिका एक स्त्री के रूप में जितना महाकबानो के साथ साधारणीकृत हो सकी है उतना कुटुंबप्यारी के साथ नहीं।

स्त्री–पुरुष काम–संबंध को सौंदर्य–सृष्टि के साथ अंकित करना हर रचनाकार के वश की बात नहीं होती है। प्रायः रचनाकार इस तरह के नाजुक विषय को उठाकर भटक जाते हैं। पिछले कई दशक से उपन्यासों में काम–संबंध का चित्रण बेहद उत्तेजक और अप्रासंगिक दृष्टि से हुआ है। किंतु कृष्णा सोबती ने 'सूरजमुखी अंधेरे के' में सृजनात्मक कल्पना और कलात्मक रचना प्रक्रिया से इसे नया अर्थ दिया है। काम संस्कृति का एक नया मॉडल है।

'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास में रक्तिका या रत्ती नामक लड़की की कथा है। बचपन में किसी लड़के से यौन संपर्क हो जाने के कारण उसे उपहास मिलता है और वह कुंठाग्रस्त हो जाती है। परिणामतः वह प्रत्येक पुरुष से छिटक कर दूर रहती है– 'वह जिसने कभी किसी को नहीं पाया और जिसको कभी किसी ने नहीं। उसका जीवन एक भयानक युद्ध है, जो भीतर–बाहर चलता रहता है। अंत में वह दिवाकर से मिलती है और दोनों पार्क में रतिमग्न हो जाते हैं। ऐसा लगता है कि 'एक वेदिका पर साथ–साथ लेटे वे दोनों देवगण हैं। देवता! अपने–अपने तन में छिपे स्रोतों से जिन्हें अमृत की बूंदे पानी हों, भागीरथी खींच लानी हो।' इस पूजा ने रत्ती को मुक्त किया है। यह प्रतीक कथा बड़े ही कलात्मक शिल्प से तराशी गई है। पूरा का पूरा उपन्यास काव्यात्मकता में तरंग भरा गीत है। लेखिका कृष्णा सोबती ने 'सूरजमुखी अंधेरे के' में इसे निम्नांकित पंक्तियों में परिभाषित किया है। द्रष्टव्य है कुछेक पंक्तियां :

"दिवाकर ने हँसते-हँसते रत्ती की दमक हाथों की अंजुरी में भर ली।.....दोनों जांघों को चूमा।
पांव अलग कर टांगे खोल दी और कुरेद लेने की मुद्रा में रत्ती पर छा गए।"[5]

"दिलोदानिश' उपन्यास के कभर पर द्रष्टव्य है– कथानक एक सामंती हवेली और रईस समाज व्यवस्था से वाबस्था है लेकिन कृष्ण जी ने जिस रचनात्मक कौशल और तटस्थ आत्मीयता के साथ उसकी अच्छाइयों और बुराइयों का चित्रण किया है वह अद्वितीय है। देश की आजादी से पहले हमारे समाज में सामंती पारिवारिक व्यवस्था थी, जिसमें रईसों की पत्नी के अलावा दूसरी कई स्त्रियों से संबंध भी मान्य थे, लेकिन इस उपन्यास का मुख्य पात्र कृपा नारायण पत्नी के अलावा मात्र एक अन्य स्त्री से संबंध रखता है लेकिन दोनों स्त्रियों और उनके बच्चों की परवरिश जिस नेकनीयता से करता है वह काबिले तारीफ है।"

'डार से बिछुड़ी' उपन्यास की निम्नांकित पंक्तियों पर गौर तो कीजिए सही द्रष्टव्य है :–

"नानी ठीक हीं कहती थी
संभलकर री

एक बार का थिरका पांव

जिंगजिनामा

धूल में मिला देगा।'[4]

'डार से बिछुड़ी' उपन्यास में पाशो अभी किशोरी हीं थी, जब उसकी मां विधवा होकर भी शेखों की हवेली जा चढ़ी। ऐसे में मां हीं उसके मामुओं के लिए ' कुलबोंरनी' नहीं हो गई वह भी संदेहास्पद हो उठी। तभी तो नानी ने एक दिन कहा ही था– पाशो संभलकर री,..... धूल में मिला देगा।

संस्कृति के ढेर सारे मूलभूत आधारतत्व हैं। लोकगीत उनमें से एक महत्वपूर्ण तत्व हैं। 'जिंदगीनामा' उपन्यास में लोकगीत का एक उदाहरण यहां द्रष्टव्य है :–

"पगड़ी संभाल ओ जट्टा

सीने पे खावे तीर

रांझा तू देश है हीर

संभल के चल तू वीर।"[5]

निष्कर्षतः कृष्णा सोबती के उपन्यासों का वैशिष्ट्य हम उनके लोकगीतों के धुन व उसकी स्वर लहरियों, क्षेत्र विशेष की संस्कृति, भाषा–बोली, रहन–सहन, रीति–रिवाज, लोक जीवन, लोक कथाएं, लोहड़ी के अवसर पर गीत–नृत्य के लिए गांव की लड़कियां हवेली में एकत्रित होकर जो मांगलिक स्वरों में गाती है सुनकर श्रोतागण मंत्र–मुग्ध हो झूम उठते हैं। यह मेरी दृष्टि में है। सचमुच में कृष्णा सोबती के उपन्यासों में संस्कृति अद्‌भुत है। हमें कृष्णा सोबती पर गर्व है।

संदर्भ :–

1. प्रो० रामचंद्र पाठक : भार्गव आदर्श हिंदी शब्दकोश, पृ० 75
2. कृष्णा सोबती : 'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास, पृ० 131
3. कृष्णा सोबती : 'दिलोदानीश' उपन्यास के कभर पेज पर।
4. कृष्णा सोबती : 'डार से बिछड़ी' उपन्यास, भूमिका से।
5. कृष्णा सोबती : 'जिंदगीनामा' उपन्यास, पृ० 161

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 81-92

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

The Digital Scaffolding : A Psycho-Educational and Technical Analysis of Early-Age AI/ML Pedagogy and its Impact on Holistic Child Development

Dr. Anuradha Aggarwal

Head of the Education Department, SD PG College, Ghaziabad.

Abstract :

The proliferation of Artificial Intelligence (AI) and Machine Learning (ML) has established a new literacy imperative for 21st-century education. This paper addresses the critical question of whether, when, and how AI/ML concepts should be introduced to children. It argues that any implementation must be rigorously governed by foundational principles of developmental psychology to harness benefits while mitigating profound risks. The analysis synthesizes Jean Piaget's theory of cognitive development and Lev Vygotsky's sociocultural theory to construct a developmentally-aligned framework for AI pedagogy. It contends that the abstract nature of core AI/ML concepts is only truly accessible to learners upon reaching the formal operational stage of cognitive development, which typically occurs at age 12 and older. The paper conducts a multi-dimensional analysis of the impact of early AI education on a child's holistic development, examining the cognitive, social-emotional, physical, and ethical-cultural domains. Key findings reveal a significant risk of cognitive deskilling, the erosion of social-emotional competencies through frictionless human-AI interaction, and the exacerbation of societal inequities. The paper concludes by recommending a phased, scaffolded pedagogical approach that prioritizes the development of critical thinking and ethical reasoning. This approach uses AI as a tool to augment, rather than replace, the uniquely human skills necessary for children to thrive in an increasingly automated world.

1.0 Introduction : The New Literacy Imperative in an AI-Saturated World :

Artificial Intelligence is no longer a futuristic concept but a pervasive and defining force in the modern world. It is deeply woven into the fabric of daily life, evident in the recommendation algorithms that shape media consumption on platforms like Netflix and YouTube and the voice assistants such as Siri and Alexa that manage household tasks. This technology's influence extends

beyond consumer applications, as it is fundamentally reshaping the professional landscape. Across various industries, companies are aggressively investing in AI and data, reimagining workflows, and seeking employees who can thoughtfully apply AI tools to drive innovation and solve complex problems. As a result, AI literacy is rapidly transitioning from a specialized technical skill to a foundational competency, becoming as essential to modern digital citizenship as traditional reading, writing, and mathematics. The ability to understand, interact with, and critically evaluate AI systems is now a prerequisite for meaningful participation in a globalized, technology-driven society.

In response to this technological sea change, a clear educational mandate has emerged. Schools are increasingly tasked with preparing students for an AI-driven future, equipping them with the knowledge to excel in future careers and the critical awareness to function as informed creators and consumers of AI technology. This has catalyzed a global movement to integrate AI and ML concepts into K-12 curricula. However, this imperative creates a profound and central conflict: the drive to accelerate technological education risks colliding with the fundamental, well-established principles of child development. The rapid deployment of AI educational tools and concepts, if not carefully managed, could inadvertently compromise the very cognitive, social, and emotional foundations that education is meant to build. This paper, therefore, addresses the core research question that must guide this educational transformation: How can we harness the immense potential of AI to enhance learning without undermining the holistic development of the child?. Answering this requires a deeply integrated analysis, drawing upon psychological theory, technical understanding, and educational best practices to determine not only if AI should be taught to children, but more critically, when, what, and how.

2.0 Cognitive Readiness : Psychological and Educational Foundations for AI Pedagogy :

To determine the appropriate timing and nature of AI instruction, it is essential to ground pedagogical strategy in established theories of cognitive development. The frameworks of Jean Piaget and Lev Vygotsky provide a robust psychological lens through which to evaluate a child's readiness for the complex and often abstract concepts of AI and ML.

2.1 Piaget's Stages of Cognitive Development : From Concrete to Abstract Thought Jean Piaget's seminal theory posits that children progress through four distinct and sequential stages of cognitive development: Sensorimotor (birth to 2 years), Preoperational (2-7 years), Concrete Operational (7-11 years), and Formal Operational (12 years and older). This progression represents a universal pattern of intellectual maturation determined by biological readiness and interaction with the environment. The most critical transition for the purpose of AI education occurs between the Concrete Operational and Formal Operational stages.

During the Concrete Operational stage, a child's thinking becomes logical, but this logic is tethered to tangible, physical reality. Children in this stage can classify objects, understand the principle of conservation, and perform mental operations on things they can see and manipulate. However, their reasoning remains grounded in the concrete world. The capacity for abstract thought—the ability to reason about hypothetical situations, engage in scientific reasoning, and understand concepts that have no physical referent, such as algebra or justice—emerges only in the Formal Operational stage. This developmental progression has profound implications for AI pedagogy. The core mechanisms of machine learning—such as algorithms, statistical modeling, neural networks, and probabilistic reasoning—are fundamentally abstract. While a child in the Concrete Operational stage can grasp the tangible aspects of training an AI model, such as showing a computer pictures of cats and dogs to teach it classification, they lack the cognitive architecture to genuinely understand the abstract statistical model being constructed within the system. Attempting to teach these internal, abstract principles prematurely creates a significant pedagogical mismatch. This often forces children to rely on simplistic metaphors or anthropomorphism, leading them to believe "the computer is thinking" or "has feelings".

Such misconceptions can hinder the development of a scientifically accurate understanding of the technology. Therefore, while exposure to AI's effects is appropriate for younger children, formal instruction in its abstract mechanisms should be reserved for learners who have entered the Formal Operational stage and possess the requisite capacity for abstract thought.

2.2 Vygotsky's Sociocultural Lens : AI as a "Tool" and "More Knowledgeable Other" Lev Vygotsky's sociocultural theory offers a complementary perspective, emphasizing that learning is a socially mediated process. Vygotsky proposed that cognitive development is driven by interaction with a "More Knowledgeable Other" (MKO)—a parent, teacher, or peer—who provides guidance and support within the child's "Zone of Proximal Development" (ZPD), the conceptual space between what a learner can do independently and what they can achieve with help. Central to this process is the use of "tools," both physical and psychological (like language), which mediate learning and extend our cognitive abilities.

From this Vygotskian perspective, AI can be viewed as an exceptionally powerful educational tool. AI-powered adaptive learning platforms and intelligent tutoring systems can function as a digital MKO, offering personalized, real-time feedback and scaffolding that is perfectly tailored to a student's ZPD. This can enhance learning efficiency and provide support that is difficult to achieve in a traditional classroom setting.

However, this framing reveals a critical paradox. Vygotsky's theory is fundamentally rooted in the idea that learning is a social activity, constructed through dialogue and relational interaction.

While an AI can flawlessly replicate the functional role of an MKO by possessing superior knowledge and providing guidance, it is an inherently asocial entity. It lacks the genuine empathy, shared experience, cultural understanding, and relational depth of a human teacher, which are crucial for motivating learners and fostering holistic growth. When a child's primary learning interactions shift from a human MKO to an AI MKO, the nature of learning itself is transformed. The process can become less of a social, collaborative construction of meaning and more of a transactional, information-retrieval exercise. Instead of the learner internalizing a skill through social mediation, the skill risks becoming externalized—residing not within the individual, but within the "human-AI pair". The student becomes proficient at prompting the tool to generate a correct answer but may fail to internalize the underlying reasoning processes. This phenomenon, termed "intellectual deskilling," represents a profound challenge to the very definition of learning and highlights the risk of creating technologically dependent, rather than independently capable, thinkers.

3.0 A Multi-Dimensional Analysis of Developmental Impact :

Integrating AI education into a child's life extends far beyond cognitive readiness, having profound and multifaceted effects on their holistic development.

3.1 The Cognitive Double-Edged Sword: Mental Development and Critical Thinking The introduction of AI into the learning process presents both significant opportunities and substantial risks for cognitive development. On one hand, AI tools can deliver highly personalized and adaptive learning experiences, tailoring content to a student's individual pace and needs. Generative AI can serve as a potent catalyst for creativity, helping students brainstorm ideas and overcome the initial hurdle of a blank page.

On the other hand, the pervasive availability of AI solutions poses a grave threat to the development of core cognitive skills. A significant body of research warns that an over-reliance on AI can lead to "cognitive offloading," where students outsource mental effort to the machine, resulting in the atrophy of their own abilities. When students can instantly obtain answers from an AI, they bypass the essential, and often arduous, process of wrestling with a problem, analyzing it from multiple angles, and developing a logical solution. This circumvention of effort can directly diminish the development of critical thinking and logical reasoning skills. This points to the potential erosion of cognitive resilience. Learning is fundamentally about building the mental fortitude to persist through challenges and learn from mistakes. This "productive struggle" is what forges resilient, independent thinkers. AI tools, optimized for efficiency, are designed to eliminate this very struggle. When a student uses an AI shortcut, the immediate problem is solved, but the crucial opportunity to build cognitive muscle is lost. Over time, this pattern risks creating a generation of learners who are

cognitively brittle and ill-equipped to tackle novel problems without digital assistance.

3.2 The Social-Emotional Paradox: Empathy and Relationships The impact of AI on social-emotional development is similarly paradoxical. AI can provide unique benefits for social-emotional learning (SEL). For a child struggling with social anxiety, an AI chatbot can offer a safe, non-judgmental environment to practice conversational skills. For students with disabilities, AI-powered assistive technologies can enhance communication and promote inclusion.

However, these benefits are overshadowed by the risk of diminishing meaningful human interaction, which is the primary context for developing empathy, social cues, and emotional intelligence. Young children, particularly in the preoperational stage, are prone to anthropomorphizing technology, attributing human-like thoughts and feelings to AI agents. This can lead to the formation of parasocial attachments to non-sentient entities and may foster unrealistic expectations for real human relationships, which are not as compliant or instantly gratifying as an AI. The core issue lies in the potential erosion of "social friction". The development of robust social competence and deep empathy is forged in the crucible of real-world interactions, with all their inherent messiness and unpredictability. Navigating misunderstandings and negotiating disagreements are the exercises that build the "muscles" of empathy and conflict resolution. AI companions and chatbots are engineered to be the antithesis of this: perfectly agreeable, compliant, and frictionless. If a significant portion of a child's formative social interactions shifts to the artificially smooth environment of AI agents, they are deprived of the essential practice needed to navigate authentic human relationships.

3.3 The Physical Dimension: Screen Time and Embodied Learning The implementation of AI education is almost inseparable from digital technology, which brings the well-documented issue of screen time to the forefront. Extensive research has established a clear link between excessive screen time and negative health outcomes in children, including an increase in sedentary behavior, a higher risk of weight problems, and disruptions to sleep patterns. A curriculum heavily reliant on digital interfaces inherently promotes this sedentary behavior. Furthermore, screen-centric learning clashes with the educational principle of embodied cognition. This theory posits that learning, especially for young children, is not a purely abstract mental process but is deeply intertwined with sensory experience and physical action. Children in the sensorimotor and concrete operational stages learn most effectively by touching, manipulating, and interacting with their physical environment.

Over-reliance on 2D screen-based instruction can create a "video deficit effect," where children learn more slowly from a screen than from a live, in-person demonstration. This implies that any responsibly designed AI curriculum must be intentionally structured to counteract the negative effects of its own delivery medium. This requires a heavy emphasis on "unplugged" activities that teach

computational concepts through physical games, as well as the integration of physical computing and robotics, which connect abstract coding concepts to tangible actions.

3.4 The Ethical and Cultural Fabric: Bias, Privacy, and Equity The technical aspects of AI education are underpinned by complex ethical and cultural considerations. A primary concern is algorithmic bias. AI models learn from vast datasets that reflect existing societal biases and can inadvertently perpetuate and amplify harmful stereotypes related to race and gender. Another critical issue is data privacy. Personalized learning systems collect vast amounts of sensitive student data, creating significant risks of data breaches or misuse in violation of regulations like FERPA. The rise of generative AI has also created an academic integrity crisis, forcing institutions to rethink assessment methods.

Beyond these concerns, AI education intersects with issues of equity. The implementation of AI requires significant investment in hardware, software, and robust internet infrastructure, creating a stark digital divide. Schools in affluent communities are far more likely to have access to these resources than those in underserved areas, thus exacerbating existing educational inequalities. Furthermore, AI models are cultural artifacts that reflect the data upon which they were trained—data that is often overwhelmingly sourced from dominant, Western-centric perspectives. When a standardized, non-contextualized AI curriculum is deployed in a culturally diverse classroom, it implicitly transmits the cultural values and biases embedded within its design. This positions AI in education as a powerful cultural magnifying glass. It can be used to reinforce a single, dominant cultural worldview, potentially leading to a form of digital colonialism. Alternatively, it can be intentionally designed as a tool for multicultural education, which involves creating culturally sensitive AI systems and adapting curricula to be relevant to students' local contexts.

4.0 Frameworks for a Developmentally-Appropriate AI/ML Curriculum :

4.1 Pedagogical Approaches for AI Literacy A systematic review of existing K-12 AI programs reveals a consensus around several key pedagogical approaches that move beyond rote memorization to foster deep, critical understanding.

- **Project-Based and Inquiry-Based Learning :** Rather than passively receiving information, students should be actively engaged in solving authentic, real-world problems. This involves using AI tools to conduct research, analyze data, and create solutions for issues they care about.
- **"Unplugged" Activities :** To make abstract concepts concrete and mitigate excessive screen time, a significant portion of foundational AI education should occur offline. Activities like role-playing as a neural network or using physical sorting games to understand classification algorithms teach core computational thinking principles in a tangible and collaborative manner.

- **Constructionism :** Building upon constructivism, this approach posits that learning is most effective when students are actively creating tangible artifacts. In the context of AI, this involves activities like programming a robot, designing an AI-powered game, or building a simple predictive model.
- **Critical Pedagogy :** The ultimate goal of AI literacy is to cultivate critical evaluators of AI, not just proficient users. This pedagogical stance shifts the focus from simply accepting AI outputs to actively questioning them. Students should be taught to analyze AI-generated content for accuracy, identify potential biases in algorithms, and reflect on the societal impact of different AI systems.

5.0 Conclusion and Recommendations :

The integration of AI/ML into K-12 education is not a question of if, but of when and, most critically, how. A technologically deterministic rush to implement AI education without careful consideration of its developmental, ethical, and social implications poses a significant threat to the well-being of children. The analysis demonstrates that a developmentally-aware, ethically-grounded, and critically-focused pedagogical approach is paramount. A premature or poorly designed implementation risks the erosion of cognitive resilience by eliminating productive struggle; the stunting of social-emotional skills by replacing complex human interaction with frictionless AI agents; the degradation of physical health through excessive sedentary screen time ; and the exacerbation of societal inequities through algorithmic bias and a widening digital divide. To proceed responsibly, education must prioritize the cultivation of uniquely human skills, using AI as a powerful tool to augment—not supplant—the creativity, critical thinking, and empathy that will define the citizens and leaders of tomorrow.

To navigate this complex landscape, a coordinated effort among all stakeholders is required. The following recommendations provide an actionable path forward:

- **For Policymakers :**
- **Prioritize Equity and Access :** Address the digital divide by making strategic investments in technological infrastructure, particularly in underserved communities.
- Fund comprehensive, ongoing professional development to equip all teachers with the skills and confidence to teach with and about AI effectively.
- **Establish Robust Governance :** Develop clear national and state-level guidelines for the responsible and ethical use of AI in schools, grounded in child protection principles and data privacy laws such as FERPA.
- **Promote Culturally Responsive Curricula :** Support and fund the development of AI curricula that are adaptable and responsive to diverse cultural and linguistic contexts.

- **For Curriculum Developers :**
- **Adopt a Developmentally-Aligned Framework :** Design curricula based on a phased approach that aligns AI concepts with the cognitive readiness of students at different developmental stages.
- **Foster Interdisciplinary Integration :** Weave AI concepts and ethical considerations across all subject areas, including humanities and social sciences, rather than isolating it within computer science classes.
- **Balance Digital and Physical Learning :** Intentionally design curricula that incorporate a significant number of "unplugged," project-based, and embodied learning activities to counteract the negative effects of screen time.
- **For Educators and Parents :**
- **Cultivate Critical Thinking :** Shift the pedagogical focus from teaching students how to use AI to teaching them how to think critically about AI.
- Model and encourage a healthy skepticism of AI-generated content, teaching students to question its accuracy, identify its biases, and understand its limitations.
- **Model Responsible and Ethical Use :** Demonstrate the ethical application of AI tools, including proper citation and transparency, and engage children in age-appropriate conversations about data privacy and fairness.
- **Champion Human-Centered Skills :** In an age of automation, prioritize activities that foster the skills AI cannot replicate: deep empathy, collaborative creativity, complex ethical reasoning, and resilient problem-solving.

References :

1. "Teaching AI Literacy to Kids: Why It Matters." *eLearning Academy*, accessed September 4, 2025, https://elearningk12.com/teaching-ai-literacy-to-kids-why-it-matters/.
2. "AI for Kids: The Ultimate 2025 Guide for Parents to Raise Future..." *JetLearn*, accessed September 4, 2025, https://www.jetlearn.com/blog/ai-for-kids-guide.
3. "AI literacy is the new career currency: How the modern workforce is being redefined." *The Times of India*, accessed September 4, 2025, https://timesofindia.indiatimes.com/education/careers/news/ai-literacy-is-the-new-career-currency-how-the-modern-workforce-is-being-redefined/articleshow/123646261.cms.
4. "Why AI Literacy Matters for School Children." *GSIS*, accessed September 4, 2025, https://gsis.ac.in/why-ai-literacy-matters-for-school-children/.
5. "Demystifying Artificial Intelligence (AI) for K-12." *All4Ed*, accessed September 4, 2025,

https://all4ed.org/future-ready-schools/emerging-practices-guides/demystifying-artificial-intelligence-ai-for-k-12/.
6. "Teach and Learn AI with Code.org | Explore AI Education." *Code.org*, accessed September 4, 2025, https://code.org/en-US/artificial-intelligence.
7. "Piaget's stages of cognitive development (video)." *Khan Academy*, accessed September 4, 2025, https://www.khanacademy.org/science/health-and-medicine/executive-systems-of-the-brain/cognition-lesson/v/piagets-stages-of-cognitive-development.
8. "Piaget's Theory and Stages of Cognitive Development." *Simply Psychology*, accessed September 4, 2025, https://www.simplypsychology.org/piaget.html.
9. "Piaget." *StatPearls - NCBI Bookshelf*, accessed September 4, 2025, https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK448206/.
10. "Piaget Cognitive Stages of Development." *WebMD*, accessed September 4, 2025, https://www.webmd.com/children/piaget-stages-of-development.
11. "What Is Age-Appropriate Use of AI? 4 Developmental Stages to Know About." *Education Week*, accessed September 4, 2025, https://www.edweek.org/technology/what-is-age-appropriate-use-of-ai-4-developmental-stages-to-know-about/2024/02.
12. "How Will Artificial Intelligence (AI) Affect Children?" *HealthyChildren.org*, accessed September 4, 2025, https://www.healthychildren.org/English/family-life/Media/Pages/how-will-artificial-intelligence-AI-affect-children.aspx.
13. "Artificial intelligence: Why is it our problem?" *Taylor & Francis Online*, accessed September 4, 2025, https://www.tandfonline.com/doi/full/10.1080/00131857.2024.2348810.
14. Clark, Donald. "Vygotsky, language, intelligence and AI." *Donald Clark Plan B*, accessed September 4, 2025, http://donaldclarkplanb.blogspot.com/2023/06/vygotsky-language-intelligence-and-ai.html.
15. "AI as the 'More Knowledgeable Other' for Children." *HIVE Educators*, accessed September 4, 2025, https://hive-educators.org/2024/09/20/ai-as-the-more-knowledgeable-other-for-children.
16. "The Impact of Artificial Intelligence (AI) on Students' Academic Development." *MDPI*, accessed September 4, 2025, https://www.mdpi.com/2227-7102/15/3/343.
17. "How Artificial Intelligence Is Changing Education." *Psychology Today*, accessed September 4, 2025, https://www.psychologytoday.com/us/blog/parenting-beyond-power/202508/how-artificial-intelligence-is-changing-education.
18. "Artificial Intelligence and Social-Emotional Learning Are on a Collision Course." *Education Week*, accessed September 4, 2025, https://www.edweek.org/technology/artificial-intelligence-and-social-emotional-learning-are-on-a-collision-course/2023/11.
19. "The Impact of AI on Children's Development." *Harvard Graduate School of Education*, accessed September 4, 2025, https://www.gse.harvard.edu/ideas/edcast/24/10/impact-ai-

childrens-development.
20. "How artificial intelligence in education is transforming classrooms." *Learning Sciences, SMU*, accessed September 4, 2025, https://learningsciences.smu.edu/blog/artificial-intelligence-in-education.
21. "Pedagogical Design of K-12 Artificial Intelligence Education: A..." *MDPI*, accessed September 4, 2025, https://www.mdpi.com/2071-1050/14/23/15620.
22. "AI in Schools: Pros and Cons." *University of Illinois*, accessed September 4, 2025, https://education.illinois.edu/about/news-events/news/article/2024/10/24/ai-in-schools—pros-and-cons.
23. "AI4K12 - Sparking Curiosity in AI." *AI4K12.org*, accessed September 4, 2025, https://ai4k12.org/.
24. "Contextualizing AI Education for K-12 Students to Enhance Their..." *PMC, NCBI*, accessed September 4, 2025, https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC8342268/.
25. "Four things an educational psychologist wants you to know about AI in the classroom." *University of Wisconsin-Madison News*, accessed September 4, 2025, https://news.wisc.edu/four-things-an-educational-psychologist-wants-you-to-know-about-ai-in-the-classroom/.
26. "Benefits, Challenges, and Use Cases of Machine Learning for Kids." *A3Logics*, accessed September 4, 2025, https://www.a3logics.com/blog/machine-learning-for-kids/.
27. "The Hidden Dangers of AI Tools in Your Child's Education..." *Psychology Today*, accessed September 4, 2025, https://www.psychologytoday.com/us/blog/parenting-beyond-power/202508/the-hidden-dangers-of-ai-tools-in-your-childs-education.
28. "The debate on the use of artificial intelligence in education." *MAPFRE*, accessed September 4, 2025, https://www.mapfre.com/en/insights/innovation/debate-on-the-use-of-artificial-intelligence-in-education/.
29. "Top US lawyers issue stern warning to tech giants on AI risks to children in candid open letter..." *The Economic Times*, accessed September 4, 2025, https://economictimes.indiatimes.com/magazines/panache/top-us-lawyers-issue-stern-warning-to-tech-giants-google-meta-apple-openai-xai-on-ai-risks-to-children-in-candid-open-letter-weve-been-down-this-road-before-/articleshow/123568292.cms.
30. "The Effect of Screen Time and Physical Activity with Children's Abilities to Self-Regulate." *The University of Texas at Austin*, accessed September 4, 2025, https://undergradcollege.utexas.edu/academics/research-week/longhorn-research-poster-session/longhorn-research-poster-session-archive/human-development-longhorn-research-poster-3.
31. "The effects of screen time on children: The latest research parents should know." *CHOC*, accessed September 4, 2025, https://health.choc.org/the-effects-of-screen-time-on-children-the-latest-research-parents-should-know/.

32. "Screen time and preschool children: Promoting health and development in a digital world." *Canadian Paediatric Society*, accessed September 4, 2025, https://cps.ca/en/documents/position/screen-time-and-preschool-children.
33. "Screen time and young children: Promoting health and development..." *PMC, NCBI*, accessed September 4, 2025, https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC5823000/.
34. "Ethical Considerations For AI Use In Education." *Enrollify*, accessed September 4, 2025, https://www.enrollify.org/blog/ethical-considerations-for-ai-use-in-education.
35. "Transformative impact of ai on multicultural education: A qualitative thematic analysis." *ResearchGate*, accessed September 4, 2025, https://www.researchgate.net/publication/384168003_Transformative_impact_of_ai_on_multicultural_education_A_qualitative_thematic_analysis.
36. "US professors are bringing back handwritten tests: Why colleges are going old-school." *The Times of India*, accessed September 4, 2025, https://timesofindia.indiatimes.com/education/news/us-professors-fight-ai-cheating-by-bringing-back-handwritten-tests-why-colleges-are-going-old-school/articleshow/123635381.cms.
37. "AI Guidance for Schools Toolkit." *TeachAI*, accessed September 4, 2025, https://www.teachai.org/toolkit.
38. "Trouble with Tech: 11 Problems with AI in Education." *Banyan Global Learning*, accessed September 4, 2025, https://banyangloballearning.com/2024/10/03/problems-with-ai-in-education/.
39. "Cultivation of human centered artificial intelligence: culturally adaptive thinking in education (CATE) for AI." *PMC, NCBI*, accessed September 4, 2025, https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC10722251/.
40. "Culturally Responsive Generative AI Use and Training Supports Multilingual Learning in Public Classrooms." *University of Illinois Blogs*, accessed September 4, 2025, https://blogs.illinois.edu/view/9382/13991913.
41. "K-12 AI Education Program." *University of Florida AI*, accessed September 4, 2025, https://ai.ufl.edu/teaching-with-ai/k-12-ai-education-program/.
42. "K-12 AI curricula: A mapping of government-endorsed AI curricula." *UNESCO*, accessed September 4, 2025, https://www.unesco.org/en/articles/k-12-ai-curricula-mapping-government-endorsed-ai-curricula.
43. "K-12 | Artificial Intelligence Institute for Advances in Optimization." *AI4OPT*, accessed September 4, 2025, https://www.ai4opt.org/k-12.
44. "Case Studies." *MagicSchool*, accessed September 4, 2025, https://www.magicschool.ai/case-studies.
45. "US Education Department is all for using AI in classrooms: Key guidelines explained." *The Times of India*, accessed September 4, 2025, https://timesofindia.indiatimes.com/education/news/ethical-use-of-ai-in-us-classrooms-how-to-stay-compliant-and-innovative/articleshow/

123616928.cms.
46. "AI in Education: Exploring the Benefits and Challenges." *Learning Liftoff*, accessed September 4, 2025, https://learningliftoff.com/k-12-education/ai-in-education-exploring-the-benefits-and-challenges/.
47. "Evaluation of Piaget's Cognitive Development Theory in the Digital Age." *Psychology Writing*, accessed September 4, 2025, https://psychologywriting.com/piagets-theory-of-cognitive-development-critical-writing-examples/.
48 "Educators' Perspectives on Generative AI in K-12: Informing AI in Education Guidance." *The Friday Institute for Educational Innovation*, accessed September 4, 2025, https://fi.ncsu.edu/resource-library/perspectives-ai-in-k12/.
49. "Piaget's theory of cognitive development." *Wikipedia*, accessed September 4, 2025, https://en.wikipedia.org/wiki/Piaget%27s_theory_of_cognitive_development#:~:text=In%20his%20theory%20of%20cognitive,stage%2C%20and%20formal%20operational%20stage.
50. "Piaget's theory of cognitive development." *Wikipedia*, accessed September 4, 2025, https://en.wikipedia.org/wiki/Piaget%27s_theory_of_cognitive_development.
51. "Piaget's Theory and Stages of Cognitive Development." *Simply Psychology*, accessed January 1, 1970, https://www.simplypsychology.org/piaget.html.
52. "The Similarities between the Learning of Children and AI." *Cogmed*, accessed September 4, 2025, https://www.cogmed.com/articles/the-similarities-between-the-learning-of-children-and-ai.
53. "Classrooms are adapting to the use of artificial intelligence." *American Psychological Association*, accessed September 4, 2025, https://www.apa.org/monitor/2025/01/trends-classrooms-artificial-intelligence.
54. "Artificial Intelligence in Education." *ISTE*, accessed September 4, 2025, https://iste.org/ai.
55. "Screen time: how it helps children learn." *Raising Children Network*, accessed September 4, 2025, https://raisingchildren.net.au/school-age/school-learning/learning-ideas/screen-time-helps-children-learn.
56. "Artificial Intelligence and New Technologies in Inclusive Education for Minority Students: A Systematic Review." *MDPI*, accessed September 4, 2025, https://www.mdpi.com/2071-1050/14/20/13572.
57. "Why studying children's minds could help us build better AI." *Berkeley News*, accessed September 4, 2025, https://news.berkeley.edu/2024/08/13/why-studying-childrens-minds-could-help-us-build-better-ai/.
58 "How educators are using AI in K-12 classrooms." *Van Andel Institute*, accessed September 4, 2025, https://www.vai.org/article/how-educators-are-using-ai-in-k-12-classrooms/.

aanuradhawork@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 93-97

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

प्रकृति के तीन गुणों की वैज्ञानिकता

दिलीप कुमार बागरे, जनभागीदारी शिक्षक (अंग्रेजी साहित्य)
डॉ. मुन्ना लाल चौधरी, सहायक प्राध्यापक (संस्कृत)
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिवनी (म. प्र.)

गीता के अनुसार सृष्टि को परमात्मा ही चला रहा है। यह सृष्टि परमात्मा से अन्यथा नहीं हो सकती। जब सृष्टि परमात्मा ही चला रहा, है तो बुरे कर्म कौन करवाता है। यह बुराई कहां से आती है। अलग–अलग चिन्तकों ने पृथक–पृथक उत्तर खोजा है। जो बहुत गहरे नहीं गये हैं वे कहते हैं शैतान या पापात्मा है, जो बुरा कर्म करा लेता है।

अर्जुन कहता है कि परमात्मा उस पापात्मा (शैतान) का कुछ नहीं करता, तो क्या वह शैतान परमात्मा से भी ज्यादा शक्तिशाली है, तो मैं परमात्मा की आराधना क्यों करूँ, तो मैं परमात्मा के स्थान पर शैतान की ही आराधना करूंगा। अनेक चिन्तकों ने इस प्रश्न का दूसरा उत्तर खोजने का प्रयास किया है। एक–दूसरा हल है, जो हमें बलात् धक्का देकर बुरे कर्म करवाता है। यह उत्तर भी पूर्ण नहीं है। इस उत्तर से वे ही लोग संतुष्ट हो सकते हैं जिनकी सोचने–समझने की क्षमता कम है। जिनके लिए कोई और राजी ना हो।

कृष्ण इस प्रश्न का मनोवैज्ञानिक उत्तर देते हैं हुए कहते हैं कि– प्रकृति के तीन गुण हैं सत्व, रजस् और तमस्। उनका उत्तर वैज्ञानिक है। वे कहते हैं की प्रकृति "त्रिगुणा" है, ये तीन गुणों की बात जब कृष्ण ने कहा था तब बड़े वैज्ञानिक आधार थे। लेकिन पिछले 5000 सालों से जिन्होंने यह बात कही उनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं था। लेकिन अभी लगभग सौ वर्ष पूर्व पश्चात्य वैज्ञानिकों ने परमाणु का विश्लेषण करने के बाद यह कहा कि प्रकृति त्रिगुणा है, उस दिन पता चला कि पदार्थ का जो अंतिम कण परमाणु है, वह तीन भागों में टूट जाता है :– Electron, Positron और Neutron।

आधुनिक वैज्ञानिक कहते हैं कि इन तीन के बिना परमाणु नहीं बनता और इन तीन तत्वों के जो गुणधर्म है वे ही गुणधर्म है जो सत्व रज् एवं तम् के हैं। ये तीनों तत्व (इलेक्ट्रॉन, पाजिट्रांन, न्युट्रांन) जो काम करते हैं, वही काम करते हैं जो सत्व, राज् और तम् करते हैं।

इनमें तमस् अवरोध का तत्व है, स्थिरता का तत्व है, यदि तमस् न हो तो पृथ्वी की कोई भी वस्तु स्थिर नहीं रह सकती। आप एक पत्थर ऊपर फैंकते हैं अगर जगत् में रोकने वाली तमस् की ताकत न हो, ग्रेविटेशन न हो, अवरोध न हो, तो पत्थर नीचे नहीं गिरेगा। आप के द्वारा आसमान में फैंकने से वह चलता ही रहेगा अनंत काल तक। फिर वह नही गिरेगा, कोई अवरोध जो उसे रोकता हो। तमस् न हो तो आदमी पृथ्वी पर नहीं रह सकेगे, हम कब से उड़ गए होते। जमीन की तमस् ग्रेविटेशन के कारण हमें रोके हुए है। ग्रेविटेशन के भार से

हम पृथ्वी पर स्थिर हैं। अंतरिक्ष यात्रियों की एक कठिनाई यह भी है कि जैसे ही हम जमीन के गुरुत्वाकर्षण (ग्रेविटेशन) से बाहर (लगभग 200 मीटर उपर) होते ही पृथ्वी की कशिश (ग्रेविटेशन) समाप्त हो जाती है, और आदमी गुब्बारे की तरह उड़ने लगता है। चांद का पृथ्वी से गुरुत्वाकर्षण आठ गुना कम है। आदमी बेल्ट न बांधे तो कुर्सी से अपने आप ऊपर उठ सकता है। चांद पर यह कठिनाई गुरुत्वाकर्षण (Gravitation) (reL) कम होने के कारण है।

तमस् अवरोध शक्ति है। अवरोध शक्ति यदि न हो तो गति भी सम्भव नहीं है। गति इसलिए सम्भव है कि अवरोध शक्ति का उपयोग कर पाने के कारण। आपकी कार में ब्रेक न हो तो फिर गति भी सम्भव नहीं है। कार चलना भी संभव नहीं है। और यदि चल भी जाए तो चलती कार को फिर रोकना असम्भव हो होगा। कार की गति में अवरोध स्वरूप ब्रेक भी चाहिए, एक्सीलेटर ही काफी नहीं है। इस प्रकार यदि रोकने वाली ताकत न हो जीवन में एकदम से विस्फोट हो जाए। अतः तमस् रोकने वाली ताकत है।

तेजस Movement गति की ताकत है। तेजस गति देता, यह शक्ति है (Energy) एनर्जी है, विधायक है।

सत्व् पहला तत्व है। सत्व रजत तमस् दोनों के ऊपर है। ये तीनों एक ही कोण की रेखाए हैं। किंतु सत्व रजस् और तमस् के ऊपर है। सत्व इन दोनों का संतुलन है। अगर गति भी हो, रोकने वाला भी हो, और उसमें संतुलन न हो तो भी बेकार है। जैसे कार में गति है, Break है, Accelerator भी है परन्तु ड्राइवर नहीं। ड्राइवर पूरे समय कार का संतुलन (Balancing) है। जरूरत पड़ने ड्राइवर ब्रेक या एक्सेलेटर पर पैर ले जाकर गाड़ी बैलेंस करता है, वह पूरे समय संतुलन करता रहता है। इस प्रकार सत्व बैलेंसिंग हैं।

ये तीन तत्व हैं, जिनको भारत ने सत्व रजस् और तमस् नाम दिए थे। पाश्चात्य ने जिनको इलेक्ट्रॉन, पॉजिट्रांन और न्यूट्रॉन नाम दिए हैं। नाम अलग–अलग देने से उनके स्वभाव में कोई अन्तर नहीं पड़ता। एक बात जो सिद्ध है कि जीवन का अन्तिम विश्लेषण तीन शक्तियों में टूटता है, इसीलिए इन तीन तत्वों को कई तरह से नाम दिए गए हैं।

जो लोग वैज्ञानिक ढंग से सोचते थे, उन्होंने सत्व रजस् और तमस् ऐसे नाम दिए हैं। जो लोग काव्यात्मक (Metafhorically) ढंग से सोचते हैं उन्होंने तीन तत्व के नाम ब्रह्मा, विष्णु, महेश दिया है। इनका काम भी वही है, जो सत्व, रजस् और तमस् करते हैं। उसमें ब्रह्मा सर्जक शक्ति है विष्णु संभालने (Sustaining) वाले और शिव विनाश करने वाले इन तीनों के बिना सृष्टि असंभव है। इलेक्ट्रॉन न्यूट्रॉन और पॉजिट्रांन ये भी इसी प्रकार तीन काम करते हैं।

इनमें जो न्यूट्रॉन है वह नेगेटिव है। ठीक शिव जैसे जो तोड़ता है, नष्ट करता है। उसमें जो पाजिट्रांन है, वह ब्रह्मा जैसे है, पाजेटिव है। पाजेटिव इसीलिए कि वह निर्माण करता है, विधायक है। और जो इलेक्ट्रॉन है न नेगेटिव है, न पॉजिटिव, बीच में है बैलेंसिंग के लिए है, जैसे विष्णु।

कृष्ण कहते हैं कि मनुष्य के भी बाहर–भीतर जो भी घटित होता है उसका कारण इन तीन शक्तियों का खेल है। इन तीन शक्तियों के अनुसार संसार की प्रत्येक घटना घटित होती है और मनुष्य उसका निमित्त मात्र है। आदमी धमकाया जाता है, रोका जाता है, जन्माया जाता है, मृत्यु को उपलब्ध होता है, हंसी को उपलब्ध होता है, रोने को उपलब्ध होता है। ये तीनों शक्तियों के काम है। ये तीन शक्तिया निरन्तर अपना काम करती रहती हैं। ये परमात्मा के तीन रूप हैं जो जीवन का सृजनध विनाश करते रहते हैं।

अर्जुन पूछता है कि हम बुरे काम करना नहीं चाहते, फिर कौन है, जो करवा लेता है। कृष्ण अर्जुन से कहते हैं, हे अर्जुन तुम नहीं चाहते हैं की जमीन पर गिर जाए, फिर भी जमीन पर गिर जाते हो, डॉ. से इलाज के दौरान पूछने पर डॉ. वही उत्तर देगा, जो श्रीकृष्ण ने दिया था, कि आप पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण ग्रेविटेशन के कारण जमीन पर गिर गए हैं। प्रत्येक शक्ति के अनुकूल न चलने पर वह नुकसान पहुंचाने वाली हो जाती है। इस प्रकार प्रत्येक शक्ति का उपयोग अनुकूलता और प्रतिकूलता पर निर्भर होता है।

अर्जुन पूछता है कि हे कृष्ण, मनुष्य के भीतर ऐसी कौन सी शक्ति है जो उसे बलात् बुरे कार्य करवाती है, यह सब कौन करवाता है कोई कहता है परमात्मा कोई कहता है शैतान। कृष्ण कहते हैं, परमात्मा को क्या प्रयोजन है। जैसे एक आदमी जमीन में गिरना नहीं चाहता, पर गिर जाता है। कृष्ण कहते हैं कि जीवन की ही शक्तियां बुरे कार्य करवाती हैं। मनुष्य के भीतर क्रोध है, वह भी जीवन का अनिवार्य तत्व है, यूं कहें कि क्रोध मनुष्य के शरीर के भीतर नेगेटिव (फोर्स) तत्व है, जो विनाश की शक्ति है। प्रेम हमारे भीतर निर्माण की शक्ति है, और विवेक हमारे भीतर बैलेंसिंग पावर है। जो आदमी विवेक को छोड़कर सारी शक्ति क्रोध में लगा देगा वह न चाहते हुए भी नर्क की ओर जाने लगेगा। जो सारी शक्ति प्रेम की ओर लगा देगा वह स्वर्ग की ओर जाने लगेगा। उसके जीवन में सुखी ही सुख होगा। और जो आदमी सुख–दुरूख दोनों में यात्रा करता है वह अपने जीवन को बैलेंस कर, मोक्ष को प्राप्त करता है।

इनके अतिरिक्त तीन शब्द और समझना जरूरी है :– स्वर्ग, नर्क और मोक्ष। स्वर्ग में वो जाता है जो अपने भीतर रजस विधायक शक्तियों की अनुकूल चलता है। नर्क में वह जाता है जो तमस को अपने भीतर लेकर चल चलता है। मोक्ष में वह जाता है जो दोनों को सत्व रूप में संतुलित करके परा हो जाता है, अतीत हो जाता है।

कृष्ण कहते हैं कि शक्तियां हैं, जिनके बिना जीवन नहीं जिया जा सकता है। इसीलिए हे अर्जुन कौन तुझे धक्का देता है, ऐसा मत पूछ, बल्कि यह समझ की धक्का तेरे शरीर के भीतर से कैसे निर्मित होता है। क्रोध, काम, मोह, लोभ, अहंकार के प्रति तू अतिशय झुक जाता है। तो जिस कर्म को तू नहीं चाहता वह भी तुझे करना पड़ता है। उदाहरण यदि कामवासना मन को जकड़ ली, यह कहना सही नहीं है, अपितु सही तो यह है कि तुमने ही अपने मन को कामवासना पकड़ने देते हो। ध्यान रहें, कामवासना तुम्हारे बिना पकड़ाए तुमको नहीं पकड़ती है। उससे निकलने की एक सीमा होती है, और सीमा के बाद, उसे रोकना मुश्किल हो जाता है। इस प्रकार हर चीज की एक सीमा होती है।

अतः हमारी प्रत्येक वृत्ति की सीमाएं होती है जहां तक हम उन्हें रोक सकते हैं, और जहां से फिर हम उन्हें नहीं रोक सकते हैं। मेरे मन में एक विचार उठा, विचार से शब्द बना मेरे भीतर, शब्द हैं, यदि मैं उन शब्दो को किसी से न कहूं, तो उसे मैं रोक सकता हूं, और यदि मेरे मुँह से शब्द निकल गए तो फिर मैं उन्हे नहीं रोक सकता। जो शब्द नहीं निकला वह एक सीमा में है, परंतु मुँह से शब्द निकालते ही बाहर की बात हो गयी। फिर उसे वापस नहीं लाया जा सकता, एक सीमा के बाद। काम, क्रोध लोभ मोह की एक जगह है जहां से वापस लौट सकते है, लेकिन बाहर निकलते ही उन्हे वापस नहीं लौटाया जा सकता। काम एक जगह है जहां से वापस लौट सकता है, लेकिन उसके बाहर निकल जाने पर फिर वह वापस नहीं लौट सकता। उस सीमा तक जहां से काम वापस लौट सकता है जैसे ही उसे तुम बाहर निकलने में सहयोग करते है और जब वह वापस नहीं लौटता तब तुम चिल्लाते हो कि कौन मुझे धक्का दे रहा है परवश बलात् रूप में यह कार्य कौन करवा रहा है।

एक जगह है जहां से हर वृत्ति मानव के हाथ में होती है, लेकिन जब तुम उसे उकसाते हो कि तुम्हारा पूरा शरीर और पूरा यंत्र उसको जकड़ लेता है, फिर तुम्हारी बुद्धि से बाहर की बात हो जाती है, तो फिर तुम कहते हो नहीं–नहीं, फिर भी घटना घट के रहती है, और मनुष्य कहता है ये बुरे काम कौन करवा रहा है। जबकि मनुष्य नहीं करना चाहता हैं। वास्तविकता यह है कि इन्हें कोई नहीं करवाता, मनुष्य के शरीर की ही भीतरी शक्ति ये सब करवाती है, लेकिन अंतिम निर्णय आपका ही होता है।

कृष्ण कहते हैं कि किसी को इतनी फुर्सत नहीं, है तुम्हें गलत कार्य कराने के लिए। काम, युद्ध, लड़ाई–झगड़ा में ले जाने के लिए। ये प्रकृति के ही नियम है। यदि इन नियमों को तुम समझ लेते हो, और समता एवं संतुलन को उपलब्ध होते हो, अनासक्ति एवं साक्षीभाव को उपलब्ध होते हो, विवेक एवं श्रद्धा को उपलब्ध होते हो तो, तुम्हें कोई फिक्र करने की जरूरत नहीं। फिर सब कुछ भी जो परमात्मा पर निर्भर होगा। लेकिन तुम समता एवं अनासक्ति को उपलब्ध हुए बिना अपने भीतर अनासक्ति को पालते रहते हो, कार्य विपरीत होने पर, जब आग भड़क कर मकान को ध्वस्त करने लगती है, तब तुम कहते हो कि मैं नहीं चाहता कि आग लगे, पर आग कैसे लगी। तुम ने अपने भीतर की चिंगारी फैंकी वह चिंगारी ही आग लगा दी है।

आपने बीज बोया जमीन, हवा, पानी, प्रकाश आदि सूक्ष्म रूप अपना काम करना शुरू कर देते हैं। अतः सारी दुनिया से काम, क्रोधादि को ताकत देने वाले तत्व सहयोग करना आरंभ कर देते हैं। प्रेम बोया, क्रोध बोया या फिर साक्षीभाव बोया वाह्य परिस्थितियां उसे संतुलित करना आरंभ कर देती हैं। कृष्ण कहते हैं हे अर्जुन तू जिसका बीज बो देता है वह शक्ति सक्रिय होकर काम करना शुरू कर देती है। चुंकि सृष्टि का संचालन तीनों गुणों से ही होता है।

अर्जुन कृष्ण से पूंछता है कि तमस् गुण मनुष्य को ईश्वर ने दिया है उसके पीछे क्या उद्देश्य है– कृष्ण कहते हैं ईश्वर का कोई उद्देश्य नहीं होता। उद्देश्य की भाषा सदैव मनुष्य की रही है। उद्देश्य तो उसका होता है जिसे भविष्य में कुछ पाना हो। जैसे एक कुम्हार एक घड़ा बनाते है कुम्हार का घड़ा बनाने का उद्देश्य है उसे बाजार में बेचना है। वहीं दूसरी ओर एक व्यक्ति चित्र बनाता है चित्रकार का चित्र बनाने का उद्देश्य नहीं है, अपितु उसका आनंद है। उसे कोई प्रतिष्ठा सम्मान मिलेगा या नहीं। चित्र बना लेने में उसका आनंद निहित है।

परमात्मा द्वारा जगत् निर्माण का कोई उद्देश्य से नहीं अपितु उसका आनंद है। इस प्रकार आनंद हमेशा ही उद्देश्य विहीन होता है। एक मां अपने बेटे को जन्म देकर बड़ा करती है यदि उससे पूछा जाए कि बेटे को किस उद्देश्य लिए बड़ा की हो, यदि मां कहती है कि मुझे बेटे से नौकरी–पेशा करना है, तो वह नहीं अपितु कोई फैक्ट्री होगी, अगर मां होगी तो वह कहेगी कैसा गलत सवाल पूछ रहे हो, यह तो मेरा आनंद है।

परमात्मा के लिए सृष्टि आनंद है। उसका आनंद सृष्टि कृत्य है, इसीलिए कोई उद्देश्य नहीं। आदमी में तमस् क्यों रहता है, तमस् शब्द को हमेशा गलत अर्थ में लेते रहे हैं, तमस् कोई बहुत बुरी चीज नहीं है, तमस् अपने आप में बुरी चीज नहीं है। तमस् में पूरी तरह से भर जाना गलत है। जैसे जहर भी अपने आप में बुरा नहीं है। कभी जहर भी बीमारी में दवा का काम करता है। कहा जा सकता है जहर क्यों बनाया, जहर खाकर व्यक्ति मरते हैं, लेकिन जहर अपने से किसी को नहीं मारता। जहर तो दवा बनाकर व्यक्ति को कई बार जीवन दान देता है। लेकिन किसी आदमी ने जहर ही जहर खा लिया तो वह मर जाएगा। अमृत भी मात्रा से अधिक खाले तो, मौत हो सकती है। अमृत भी मात्रा में खाना चाहिए। जीवन में नियम है, कोई नियम बुरा या भला नहीं।

बिना तमस् के जगत् अस्तित्व में नहीं हो सकता, उसके अस्तित्व में होने के लिए कोई अवरोध शक्ति चाहिए ही चाहिए। लेकिन कोई आदमी सिर्फ अवरोध शक्ति पर ही निर्भर रहे तो खतरा निश्चित है। क्योंकि जीवन के सचालन में दूसरी दो शक्तियां भी चाहिए। श्रेष्ठतम् मनुष्य के स्वास्थ्य की विशेषता यह है कि जिस पर तीनों शक्तियां संतुलित हो। उसी क्षण में आदमी बाहर निकल जाता है और परमात्मातीत हो जाता है। जब तक आदमी इधर–उधर भटकता है जैसे नर्तक अपने शरीर में हमेशा संतुलन करता है। इन तीन गुणों को जो भी व्यक्ति संतुलित कर लेता है वह परम पद को प्राप्त हो जाता है।

कृष्ण का पूरा योग क्षमता–योग है, जो संतुलन का पर्याय है। जिंदगी एक संतुलन है इसके जरा इधर–उधर हुए कि आप समाप्त हुए। इसमें प्रकृति अपना काम नीचे खड़ी होकर करती है। जीवन के ये तीन अनिवार्य तत्व हैं, जो कम नहीं हो सकते। तीनों गुणों के बिना सृष्टि खो जाएगी। अगर आप तमस् के द्वारा रजस् को साधते रहे, जब तमस् बढ़ जाए तो रजस् की ओर झुक जाए। और जब रजस् बढ़ जाए तो तमस् की ओर झुक जाए। दोनों को साधते रहे और जब दोनों बिल्कुल सध जाए तो आपकी वर्टिकल यात्रा सत्व की ओर शुरू होगी। फिर तीनों को संतुलित करना पड़ेगा, जो और गहरा है। दो को साधना आसान है, दो के बीच सधेगे तो सत्व में समा जाएंगे, जो सत्व में पहुंच गया जिसे साधु कहते हैं। जिसने दो को साध लिया, जो तमस् और रजस् के बीच संतुलित हो गया उसका नाम साधु है। जो तमस् रजस् और सत्व के बीच सध गया उसका नाम सन्त है, जो बहुत अनूठी बात है। जब कोई व्यक्ति तीनों गुणों को साधता है तो केंद्र में पहुंच जाता है, जिसे त्रिकोण कहते हैं। जो तीनों शक्तियों का द्वार है, वह खाली जगह जहां से व्यक्ति परमात्मा/ब्रह्म में प्रवेश कर जाता है। इस तरह पहले दो के बीच जाकर साधु बने, तीनों को संतुलित करने में के कारण सन्त बने। जिस दिन कोई भी मनुष्य तीन के बीच सधा, उस दिन वह बनना बन्द हो जाता है, और परमात्मा में प्रवेश हो जाता है, उस दिन प्रकृति के तीनों गुणों के बाहर मनुष्य हो जाता है, इसीलिए प्रकृति त्रिगुणा है और परमात्मा है त्रिगुणातीत वह तीनों के बाहर है।

संदर्भ सूची :–

1. गीता।
2. महाभारत।
3. संस्कृत का साहित्य संस्कृत साहित्य का इतिहास–बलदेव उपाध्याय।
4. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र– डॉ आनंद श्रीवास्तव।
5. कौटिल्य अर्थशास्त्र।
6. वाल्मीकि कालीन भारतीय समाज एवं संस्कृति अच्युतानंद घिल्डियाल।
7. संस्कृत साहित्य का इतिहास बलदेव उपाध्यायदेव उपाध्याय।
8. संस्कृत साहित्य प्राचीन भारत का साहित्य एवं सांस्कृतिक इतिहास डॉक्टर निरंजन सिंह योग मनी।
9. संस्कृत साहित्य का इतिहास आचार्य देवी शंकर मिश्रा डॉ राज किशोर।

ईमेल, dileep8226070942@gmail.com

ईमेल, drmlchoudhry@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 98-105

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पञ्चतत्वों की साधना–मानव के व्यावहारिक जीवन में

दिलीप कुमार बागरे, जनभागीदारी शिक्षक (अंग्रेजी साहित्य)
डॉ. मुन्ना लाल चौधरी, सहायक प्राध्यापक (संस्कृत)
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिवनी (म. प्र.)

हिंदू धर्म में प्रकृति की रचना सजीव और निर्जीव के रूप में है। सभी वस्तुएं मुख्यतः पांचतत्वों से मिलकर बनी होती है, जिन्हें प्रकृति के पञ्चतत्व कहते हैं। अन्त में सभी वस्तुएं इन्हीं पांचतत्वों में समा जाती हैं। ये पांचतत्व है क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर हैं। इन पांचतत्वों से ही मिलकर प्रत्येक चराचर के जीव का निर्माण होता है। परन्तु हर जीव में इनकी मात्रा भिन्न–भिन्न होती है, इनके मिलने से एक निर्जीव देह के लिए परमात्मा के स्वरूप अर्थात् आत्मा का होना परमावश्यक है। जब इस देह में आत्मा प्रवेश हो जाती है तब वह सजीव हो जाती है तथा जब आत्मा देह को त्याग देती है तो वह निर्जीव होकर, इन्हीं पांच शक्तियों में मिल जाती है। प्रकृति के पांच शक्तियों में ये पञ्चतत्व ही आते हैं जिनके अलग–अलग अर्थ है।

पञ्चतत्वों के द्वारा मनुष्य शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक विकास के साथ ही कई प्रकार के रोगों का समाधान किया जाता है। ये पञ्चतत्व जब तक मानव शरीर में सन्तुलित रहते हैं तो जीव पूर्णतः स्वस्थ रहता है लेकिन ज्यों ही ये तत्व असन्तुलित होते हैं तो हरेक प्राणी निर्बल, निश्तेज, आलसी तथा रोगी होने लगता है। अतः स्वास्थ्य को निरोगी रखने के लिए, इन तथ्यों को शरीर में उचित मात्रा में रखने का सतत् प्रयत्न करना चाहिए। वेदान्त दर्शन में पञ्चतत्वों के पञ्चीकरण की सम्यक् विवेचना मिलती है **'पञ्चीकरणं त्वाकाशादिपपञ्चस्वेकैकं द्विधा समं विभाज्य तेषु दशसु भागेषु प्राथमिकान् पञ्चभागान् प्रत्येकं चतुर्धासमं विभाज्य तेषां चतुर्णा भागानां स्वस्वद्वितीयार्धभागपरित्यागेन भागान्तरेषु संयोजनम्'**।[1] भारत की ऋषि परम्परा में इन्हीं पञ्चतत्वों को संयमित कर, शारीरिक विकारों से बचते रहते थे, क्योंकि मानव शरीर में जब रोगों का आक्रमण होता था, तब इन्हीं पञ्चतत्वों की सहायता से रोग निवारण कर, दीर्घायु प्राप्त करते थे।

1. पृथ्वी–तत्व :–

पृथ्वी से तात्पर्य हमारे शरीर की त्वचा व कोशिकाओं से है, जिससे हमारे बाहरी शरीर के आवरण का निर्माण होता है। यह हमारे शरीर का भार भी दर्शाता है। इसका वर्ण पीत है। हमारे शरीर की गन्ध पृथ्वी से निर्धारित होती है। यह हमारे अन्दर अहंकार का भी परिचायक है। शरीर में इसकी स्थिति जांघों से की जाती है। हमारे शरीर के हाड–मास, कोशिका, त्वचा इत्यादि पृथ्वी तत्व के अन्तर्गत हैं। आशय यह कि हमारे शरीर की दिखने और महसूस होने वाली अधिकतर चीजों का निर्माण पृथ्वी तत्व से हुआ है। गुरुत्वाकर्षण बल और चुम्बकीय गुण भी पृथ्वी तत्व की विशेषता है। जो हमें पृथ्वी पर स्थिर रखती हैं, और हमें अपना भार महसूस

कराती है।

पृथ्वी केवल ग्रह ही नहीं अपितु **'माता भूमिः पुत्रौहं पृथिव्याः'**[2] की भावना अथर्ववेद में मुखरित है। पृथ्वी में आकाश, वायु, अग्नि, और जल सभी तत्व विद्यमान होने के कारण इस पर चराचर की उत्पत्ति सम्भव होती है। पृथ्वी सभी की जन्मदात्री होने के कारण सबकी माता है। विश्व भरण पोषण करने के कारण विश्वम्भरा, विश्वरूपा काम–दुग्ध, विश्वगर्भा, सुखदायिनी, आकर्षणवती, गतिशीला, ध्रुवा आदि पृथ्वी के विशेषण अथर्ववेद में मिलते हैं। राजा पृथु ने गोरुपधारणी धरती/वसुन्धरा से औषधियों का दोहन लोकहित में किया था। पृथु नाम के विशेषण से यह पृथ्वी कहलाती है। जिसका मूल तत्व मिट्टी है। जो प्रत्येक प्राणी के भौतिक शरीर के आधार है। भौतिक शरीर मूलरूप से मिट्टी, हवा, पानी, अग्नि और आकाश से मिलकर बनता है। पृथ्वी की माटी सब की मूल स्थूल और स्थिर तत्व है। यदि ऊर्जा तन्त्र और चक्र की बात करें, तो पृथ्वी तत्व मूलाधार है, अतः पृथ्वी तत्व हमारे भौतिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलू के लिए काम करता है। अगर पृथ्वी तत्व चराचर के स्वास्थ्य हेतु सहयोग न करे तो फिर विश्व में जीवन सम्भव नहीं है। मनुष्य की आकांक्षाएं और इच्छाएं पृथ्वी के अभाव में पूरी नहीं हो सकती हैं।

पृथ्वी तत्व के अद्भुत फायदे हैं, पृथ्वी तत्व में विष को खींचने की अद्वितीय शक्ति होती है। मनुष्य अपने शरीर में मिट्टी बांधकर फोड़ा–फुंसियां तथा अनेक प्रकार के असाध्य चर्म–रोग दूर किए जाते हैं। हर समय पृथ्वी से एक प्रकार की गैस निकलती है जिसको शरीर में आकर्षित करना बहुत लाभदायक होता है। प्रातःकाल नंगे पैर टहलने से पैरों से पृथ्वी का सम्पर्क होता है, जिससे पैरों द्वारा शरीर के विष पृथ्वी खींच लेती है। ब्रह्म मुहूर्त में नंगे पांव टहलने से पृथ्वी से निकलने वाली वायु को, शरीर सोख लेता है। यह लाभ प्रातः काल ही होता है क्योंकि शेष समय तो पृथ्वी से हानिकारक वायु ही निकलती रहती हैं, जिससे बचने के लिए जूता आदि पहनना चाहिए। प्रातःकाल नंगे पैर टहलने के लिए स्वच्छ और हरी घास वाली जगह तलाश लेनी चाहिए। घास के ऊपर जमी हुई नमी, पैरों के अतिरिक्त मस्तिष्क को ठण्डा रखती है। इसीलिए उद्यान, खेल के मैदान में प्रतिदिन नंगे पर टहलना चाहिए, साथ ही यह महसूस करते रहना चाहिए कि मैं पृथ्वी की जीवनी शक्ति को अपने पैरों द्वारा खींचकर अपने शरीर में भर रहा हूं और पृथ्वी मेरे शरीर के विषों को खींचकर मुझे निरोग बना रही है। हफ्ते में एक–दो बार मृतिका स्नान से शरीर के भीतरी और त्वचा के विष खींच जाते हैं और त्वचा कोमल एवं चमकदार बन जाती है।

प्राचीन काल में ऋषि मुनि जमीन में गुफा बनाकर रहते थे, इससे वे हमेशा स्वस्थ रहते थे क्योंकि मिट्टी उनके शरीर के दूषित पदार्थों को खींच लेती थी और भूमि से निकलने वाली वाष्प द्वारा देह का पोषण भी होता रहता था। ऋषि–मुनियों की समाधि के लिए गुफाएं ही सर्वोपरि स्थान है। तपस्वी भूमि पर ही शयन करते हैं। बच्चे जो प्रकृति के अधिक समीप है, वे पृथ्वी के महत्व को जानते हैं, भूमि पर खेलना, लेटना अधिक पसंद करते हैं। पशु अपनी थकान मिटाने के लिए जमीन पर लौट लगाकर पृथ्वी की पोषक शक्ति प्राप्त करते हैं। तीर्थ यात्रा एवं धार्मिक कार्य हेतु नंगे पैर चलने का विधान है। इन प्रथाओं का उद्देश्य धार्मिक अनुष्ठानों से पृथ्वी का महत्व स्पष्ट है। इस प्रकार पृथ्वी अपनी पोषक शक्ति द्वारा सभी को लाभान्वित करती है।

2. जल–तत्व :–

जल का अर्थ है हमारे शरीर में विद्यमान हरेक द्रव्य पदार्थ, जो शीतलता को दर्शाता है। इससे हमारे

जीवन में संकुचन आती है। शरीर में इसकी स्थिति पैरों से होती है। इसका वर्ण श्वेत है। हमारे शरीर में किसी भी भोज्य पदार्थ का स्वाद जानने की शक्ति जल तत्व से ही आती है। जल बुद्धि का परिचायक है। शरीर के सभी तरल पदार्थ पानी, रक्त, एंजाइम या कोई अन्य तत्व जल के अन्तर्गत ही आते हैं। शरीर में खून नसों के द्वारा पूरे शरीर में फैलता है। जल तत्व शरीर का संचालक है जो सभी पोषक तत्वों और ऊर्जा के वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

'जलमेव जीवनम्'। जल संरक्षण आज की प्राथमिक आवश्यकता है कालिदास ने रघुवंश में जल की कुशल क्षेम का वर्णन किया है **'शिबानि वस्तीर्थजलानि कच्चित्'**[3] उन नदियों का कल्याणकारी जल मंगलमय तो है जिसमें आप प्रतिदिन स्नान और तर्पण आदि पुनीत कार्य सम्पन्न करते हैं। वेदों में भी जल के महत्व का वर्णन है। अथर्ववेद के ऋषि द्वारा पृथ्वी से शुद्ध जल प्रदान करने की प्रार्थना की गई है। मानव शरीर में जल की सर्वाधिक मात्रा 60% है, और अन्य तत्व 10% होते हैं। मानव शरीर में अन्य तत्वों की अपेक्षा जल का महत्व सर्वोपरि है। शरीर में जल की मात्रा कम हो जाने पर शरीर सूखने, नाड़ियां जकड़ने लगती है, हड्डियां निकल आती है, खून गाढ़ा हो जाता है, प्यास और खुश्की आदि के कारण व्यक्ति रोगग्रस्त हो जाता है। जल शरीर को शीतलता प्रदान करता है इसीलिए कहा जाता है कि **'जल ही जीवन है'**। अतः प्रतिदिन शरीर की आवश्यकता अनुसार पानी पीना चाहिए। ताजे जल के रासायनिक पदार्थों से शरीर का पोषण होता है। जल की पर्याप्त पूर्ति के कारण शरीर के भीतर जो विकृतियां होती है, वह पसीना, मलमूत्र आदि के रूप में शरीर से बाहर निकलते हैं। जैसे जल से पौधे पोषित होकर चेतन्य होते हैं और अभाव में सूखने लगते हैं। यदि उचित मात्रा में जल प्राप्त होता रहे तो शरीर की दृढ़ता बनी रहती है। हमारे शास्त्रों में पानी पीने की विधि का सम्यक् उल्लेख मिलता है, कितना भी प्यास लगी हो एकदम से एक सांस में पानी कभी नहीं पीना चाहिए। पानी दूध की तरह घूट–घूट कर पीना चाहिए, प्रत्येक घूट के साथ यह आभास करते जाना चाहिए कि अमृत तुल्य जल में जो मधुरता और शक्ति है उसे मैं अपने अन्दर खींच रहा हूं। इस भावना के साथ पिया हुआ पानी दूध के समान गुण कारक हो जाता है। जल रोग निवारण में भी महत्वपूर्ण है। जैसे स्नान स्वास्थ्य को तरोताजा रखता है, मुरझाई हुई चीज जल के प्रभाव से हरी–भरी हो जाती है, उसी प्रकार स्नान करने से शरीर। शरीर साफ करना ही स्नान उद्देश्य नहीं है, वरन जल में मिली हुई विद्युत शक्ति, ऑक्सीजन हाइड्रोजन आदि अमूल्य तत्वों को शरीर द्वारा सींचना है। इसीलिए सदैव ताजा और स्वच्छ जल से स्नान करना चाहिए। सुबह का स्नान ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। सम्भव न होने पर दोपहर के पहले अवश्य स्नान कर लेना चाहिए। मध्याह्न के बाद का स्नान लाभदायक नहीं होता। गर्मी के दिनों में संध्या को भी स्नान किया जा सकता है।

3. अग्नि–तत्व :–

अग्नि तत्व हमारे शरीर की ऊर्जा से है, जो शरीर को सुचारू रूप से संचालित करने में सहायक है। शरीर में इसकी स्थिति कन्धों से है। इसका वर्ण लाल होता है। देखने की शक्ति का विकास अग्नि तत्व से ही होता है। हमारे विवेक के निर्माण में अग्नि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हमारे शरीर को जीवित रखने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है लेकिन यदि अग्नि उस भोजन को पचाएगा नहीं तो उससे ऊर्जा कैसे मिलेगी, ऐसी में भोजन ग्रहण करना निरर्थक हो जाएगा। अग्नि तत्व का कार्य शरीर में भोजन को पचाकर ऊर्जावान बनाए रखना होता है, जिससे हमें ऊर्जा शक्ति की प्राप्ति होती है।

जीवन को बढ़ाने और विकसित करने का काम अग्नि का है, जिसे हम गर्मी कहते हैं। अग्नि के अभाव जीवन असम्भव है। हम जीवित हैं या नहीं इसकी सूचक हमारे भीतर की अग्नि है। शरीर गर्म या फिर ठण्डा है, अग्नि ही इसकी निर्धारक होती है। धरती पर जीवन सूर्य की शक्ति से संचालित होता है। अग्नि के प्रतिनिधि सूर्य के उपासक होते हैं। अतः आज समस्त विश्व सौर ऊर्जा के महत्व को स्वीकार रहा है। प्रश्नोपनिषद् में कहा गया है कहा गया है कि **'प्राण प्रजा नां उदयति एष सूर्यः[4]'** यह सूर्य प्रजा मात्र के प्राण के रूप में उदित हो रहा है। **अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं प्रतिरूपो बभूव[5]'** पवित्र जल और अग्नि अपने आप में परिशुद्ध होते हैं। महाकवि भवभूति ने कहा है **'तीर्थोकञ्चन वहिन्श्च शान्तायः शुद्धिमर्हतः[6]।**

सूर्य में कई वैज्ञानिक रहस्य छुपे हुए हैं। जैसे सूर्य को अर्ध्य चढ़ाना, जलाशय में खड़े होकर सूर्य जाप आदि धार्मिक क्रियाएं स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हैं। स्नान करके गीले शरीर से प्रातः कालीन सूर्य के दर्शन कर, जल का अर्ध्य देना चाहिए। सूर्य दर्शन के पश्चात नेत्र बंद करके ध्यान करना चाहिए और मन में यह भावना होनी चाहिए कि, हे सूर्य देव आपका तेज मेरे शरीर में प्रवेश कर नस–नस को प्रफुल्लित करे। सूर्य चिकित्सा सूर्य किरणों से रोगों के निदान की पद्धति है। इन मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनुसार मनुष्य के तेज में वृद्धि होती है और नेत्र रोग, रक्त विकार तथा चर्म रोग दूर होते हैं।

पञ्चतत्वों में अग्नि तत्व, हमारे शरीर में सबसे कम मात्रा में मौजूद है, फिर भी हमारे शरीर की सारी क्रियाएं अग्नि तय करती है जैसे भूख और प्रजनन से जुड़ी जठराग्नि, मन और बुद्धि से जुड़ी चित्ताग्नि, तत्वों से जुड़ी भूताग्नि और परम तत्व शून्य से जुड़ी सर्वाग्नि। हमारे शरीर में मौजूद अग्नि कई रूपों में है। जठराग्नि से आशय है पेट या पाचन प्रक्रिया की अग्नि, यानी आपके पेट में यदि थोड़ी भी अग्नि नहीं होगी तो आप आप जो खाना खाते हैं उसे पचा नहीं पाएंगे। भोजन को पचाने में जठराग्नि ईंधन के रूप में काम करती है। जठराग्नि से ही पाचन प्रक्रिया से ऊर्जा मिलती है, जठराग्नि को यदि अच्छा ईंधन मिलता रहा है और यदि यह अच्छी तरह पोषित है तो यह प्रजनन अग्नि भी बन जाती है। क्योंकि पाचन और प्रजनन दोनों ही जठाराग्नि पर निर्भर करते हैं। यदि आपकी जठराग्नि ठीक है, तो आपकी प्रजनन अग्नि भी अच्छा काम करेगी, और अगर हम अच्छी तरह से खाएंगे–पियेंगे नहीं तो हमारी प्रजनन क्षमता भी अच्छी तरह से काम नहीं करेगी।

शरीर के भीतर मौजूद दूसरी आग चित्ताग्नि कहलाती है, यह मन और बुद्धि के उस पार का आयाम है। चित्त शरीर के भीतर मौजूद प्रज्ञा अथवा बुद्धि है, जो हमारे भौतिक रूप से परे है। हमारा शारीरिक स्वरूप जो अनुवांशिक देन है, इसके विपरीत चित्त प्रज्ञा का वह आयाम है, जो याददाश्त को प्रभावित नहीं करता। प्रज्ञा की अग्नि कई स्तरों पर सामने आती है, इसका पहला उदाहरण बुद्धिमान होना है। चित्ताग्नि समग्र रूप से प्रज्वलित नहीं होगी तो बुद्धि कमजोर व प्रभावहीन होगी। चित्ताग्नि अच्छी तरह से काम कर रही है तो चित्बुद्धिमानी के तौर पर निखार कर सामने आएगा, भले ही हम बुद्धि के दूसरे आयाम तक पहुंचने की स्थिति में ना हो, अगर आपकी चित्ताग्नि प्रखरता से काम कर रही है तो आपकी रुचि भोजन, कामवासना, सम्भोग एवं शरीर की दूसरी चीजों से हटने लगेगा।

मानव शरीर के अन्दर तीसरी आग है भूताग्नि। यह अग्नि मानव शरीर में यदि अच्छी तरह से काम कर रही है तो फिर शरीर और मन खास मायने नहीं रखते, मनुष्य की दृष्टि शरीर वह मन की हरकतों से हटकर बुनियादी पहलू की तरफ जाने लगेगा। मनुष्य जठराग्नि पर नियंत्रण करता है तो वह एक स्वस्थ और मजबूत

शरीर का मालिक होगा, और यदि चित्तग्नि पर नियंत्रण करता है तो अपने मन को कई तरीके से इस्तेमाल करना सीख लेगा। उसी तरह मानव भूताग्नि पर नियंत्रण सीख लिया तो अपने जीवन प्रक्रिया की महारत हासिल कर लेगा। शरीर की सीमा बहुत ही स्पष्ट और सीमित है जबकि मन की सीमा असीमित हैं। आप दुनिया को किस दृष्टि से देखते हैं, यह आपके मन की सीमा में आएगा, मनुष्य का जैसे–जैसे ज्ञान बढ़ता है, उसकी मानसिक सीमाएं भी विस्तृत एवं विशाल होती जाती हैं। और वह एक अनन्त सीमा विहीन अस्तित्व हो उठाएंगे, क्योंकि पञ्चतत्वों का खेल पूरी सृष्टि में हर तरफ संचालित है।

इन तीनों से परे अग्नि सर्वाग्नि है। विज्ञान के अनुसार इस सृष्टि का पांच फीसदी से भी कम हिस्सा का भौतिक अस्तित्व है। आशय यह है कि हम सृष्टि की भौतिक संरचना को पांच प्रतिशत ही जान पाएं हैं। सर्वाग्नि उस आयाम को स्पर्श करती है, जहां कोई तत्व, कोई सृष्टि नहीं होती, जहां कोई भौतिक प्रकृति नहीं होती। जो साधक जीवन की इस प्रक्रिया तक पहुंचाना चाहता है उसकी रुचि जठराग्नि चित्ताग्नि या भूताग्नि में नहीं होगी। उसका पूरा ध्यान सर्वाग्नि पर होता है, क्योंकि यह परम अग्नि है। जठराग्नि प्रत्यक्ष और स्पष्ट है, चित्ताग्नि अपेक्षाकृत कम स्पष्ट होती है लेकिन फिर भी वह मौजूद है। यद्यपि भूताग्नि दिखाई या महसूस नहीं होती, फिर भी वह मौजूद होती है, तथापि ध्यान सिर्फ सर्वाग्नि पर होना ही, परम अग्नि है। जिसकी प्रकृति एक शीतल अग्नि है। इस प्रकार सर्वाग्नि परम योगी को मुश्किल से महसूस होती है, लेकिन इसके बिना कुछ भी सम्भव नहीं, यह बुनियादी और परम अग्नि है, जिसमें सभी अग्नियां शामिल होती हैं।

4. वायु तत्व :–

वायु हमारे शरीर में गतिशीलता का परिचायक है, जिससे हमारे शरीर में वेग या गतिशीलता का निर्माण होता है। शरीर में इसकी स्थिति नाभि से होती है। इसका वर्ण नीला या भूरा होता है। वायु की प्रकृति अनिश्चित होती है। हमारे शरीर में स्पर्श करने की शक्ति व उसकी अनुभूति वायु तत्व से होती है। जिस जीव में प्राण है उसमें वायु तत्व पाया जाता है। जब किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तब हम सबसे पहले यह देखते हैं कि उसकी सांसे चल रही है या नहीं, यदि उसकी सांसें बन्द हो जाती हैं अर्थात् शरीर में वायु तत्व नहीं रहा इसका मतलब यह कि वह मनुष्य जीवित नहीं रहा। वायु तत्व हमारे शरीर को प्राण वायु (ऑक्सीजन) के रूप में विद्यमान रहता है।

मनुष्य वायु में जन्म लेता है और जीवन भर वायु ग्रहण करता हुआ वायु में ही विचरण करता है। वायु संसार के समस्त प्राणियों का जीवन आधार तथा चेतना शक्ति है। मनुष्य में प्राण वायु या ऑक्सीजन का अभाव ही मृत्यु है। अतः शुद्ध वायु का संरक्षण अभिवर्धन और संचय करना हमारे ऋषि भली–भांति जानते थे। ऋग्वेद के मरुत् सूक्त में वायु देवता को पृणीत करने का उपाय है। उपनिषदों में सृष्टि प्रक्रिया को समझाते हुए कहा गया है कि आकाश से वायु उत्पन्न हुआ – **'आकाशाद्वायुः वायोरग्निः[7]।** समस्त प्राकृतिक तत्वों में पृथ्वी, जल, अग्नि की अपेक्षा वायु अत्यन्त सूक्ष्म और व्यापक है, इसलिए उसके गुण और प्रभाव भी अधिक हैं। अन्न और जल के अभाव में मनुष्य जीवित रह सकता है, परन्तु वायु के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता। शरीर में अन्य तत्वों के विकार उतने खतरनाक नहीं होते जितने वायु विकार होते हैं। शरीर के जिस अंग पर वायु विकृत होती है उस अंग में तीव्र वेदना होती है और मनुष्य अपनी शारीरिक शक्ति को देता है। वायु ही प्राण है इसीलिए **'ऑक्सीजन'** प्राणवायु है, और इसी पर जीवन की निर्भरता मानी जाती है। सांस रुकने पर, व्यक्ति के पेट फूलते

ही मृत्यु हो जाती है। लोग स्वच्छ वायु सेवन के लिए समय निकालते हैं, जहां की हवा खराब होती है वहां नाना प्रकार की बीमारियां और महामारियां फैल जाती है। इसीलिए बुद्धिमान व्यक्ति वहां रहना पसन्द करते हैं जहां की वायु शरीर के लिए शाश्वत लाभदायक होती है। प्राणायाम करने वाले ऋषि जानते हैं कि विधि पूर्वक वायु साधना से उन्हें शारीरिक लाभ होता है। निःसंदेह वायु का स्वास्थ्य से अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। वायु प्रयोग से हम अपनी बिगड़ी सेहत ठीक कर सकते हैं। हमें शारीरिक पोषण के लिए अनेक तत्वों से भोजन प्राप्त होता है लेकिन भोजन का अधिकांश भाग की पूर्ति वायु द्वारा ही होती है।

जो वस्तुएं सूक्ष्म है, वही स्थूल है तथा वे ही सूक्ष्म स्थूल रूप में वायुमण्डल में भ्रमण करती हैं। रोगी तथा योगी बहुत समय तक बिना खाए पिए जीवित रह सकते हैं, क्योंकि उनको स्थूल भोजन न मिलने के बाद भी वायु रुपी भोजन मिलता रहता है। इस कारण वायु द्वारा प्राप्त होने वाली खुराक न मिलने पर मनुष्य की क्षण मात्र में मृत्यु हो जाती है। इसीलिए हवा का जितना स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है उतना भोजन का नहीं। डॉक्टर क्षय आदि असाध्य रोगियों को पहाड़ों पर जाकर ष्हवा पानीष बदलने की सलाह देते हैं, क्योंकि दवाईयों की अपेक्षा उत्तम वायु में अधिक पोषक तत्व मौजूद होते हैं।

अनन्त आकाश से वायु द्वारा प्रतिदिन प्राण तत्वों को खींचने के लिए भारत के तत्वदर्शी ऋषियों ने प्राणायाम की बहुमूल्य प्रणाली का आविष्कार किया है। प्राणायाम फेफड़ों की कसरत है। प्राणायाम करने से फेफड़े मजबूत और रक्त शुद्ध होता है। प्राणायाम द्वारा अखिल आकाश में से अत्यन्त बहुमूल्य पोषक पदार्थों को खींचकर शरीर को स्वस्थ बनाया जा सकता है। इस हेतु स्नान के उपरान्त एकान्त में पद्मासन में, मेरुदण्ड सीधा कर, नेत्रों को आधा खुला रखें, और धीरे–धीरे नाक द्वारा सांस खींचना आरंभ करें और इच्छा शक्ति के साथ यह विश्वास रखें कि विश्व व्यापी प्राण भण्डार में से मैं स्वास्थ्य दायक प्राणवायु को सांसों से खींच रहा हूं और वह प्राण वायु मेरे रक्त प्रवाह से नाड़ी तन्तुओं से प्रवाहित होता हुआ सूर्य चक्र में इकट्ठा हो रही है। इस आभास को ध्यान द्वारा चित्र वत् देखने का प्रयत्न करें, अभ्यास पूरा होने पर आपको ऐसा अनुभव होगा कि रक्त की गति तीव्र हो गई है और मेरे समस्त शरीर की नाड़ियों में एक प्रकार की स्फूर्ति और विद्युत शक्ति दौड़ रही है। इस प्राणायाम को लगातार करने से अनेक शारीरिक और मानसिक फायदा का अनुभव स्वयं प्राप्त होगा।

5. आकाश तत्व :–

आकाश का तत्व अनन्त है, जो हमारा शारीरिक संतुलन बनाए रखता है, इसी के द्वारा हमारे शरीर में शब्दों व वाणी का निर्माण होता है। इसका वर्ण काला है शरीर में इसकी स्थिति मस्तिष्क हैं। हमारी वासना व सम्वेग का आधार आकाश तत्व ही है। आकाश से तात्पर्य हमारे शरीर का रिक्त स्थान एवं मन है। मन को ही आकाश तत्व की संज्ञा दी गई है। इसका महत्व समझाने के लिए हमको मन को समझना होगा। मन हमारे शरीर में विचारों का एक समूह है, लेकिन कुछ लोग इस आत्मा का पर्यायवाची मानते हैं। जबकि आत्मा परमात्मा का एक अंश है, आत्मा को नियंत्रित नहीं किया जा सकता जबकि मन को नियंत्रित किया जा सकता है। जिस प्रकार आकाश के अनन्त की कोई सीमा नहीं होती उसी प्रकार मन की भी कोई सीमा नहीं होती। मन एक पल में कहीं से कहीं पहुंच सकता है। आकाश अपने आप में अनन्त शक्तियों को समेटे हुए है, ठीक उसी प्रकार मन भी अथाह ऊर्जा का भण्डार है। जैसे आकाश में कभी बादल, कभी धूल, तो कभी वह साफ नजर आता है, ठीक उसी प्रकार हमारा मन भी परिस्थितियों के अनुसार कभी खुश तो कभी दुखी और कभी सामान्य रहता है।

आकाश हमारा पिता है। जो नित्य और विभु है। जिसकी छत्रछाया में प्रत्येक प्राणी अपना जीवन व्यतीत करता है। यह शून्य है जो सब में व्याप्त है। अणु–परमाणु इसकी सत्ता हैं। **'आपः द्यावा पृथ्वी अन्तरिक्ष सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुश्च[8]'**। जैसे माता–पिता अपने शिशु का पालन पोषण और रक्षण करते हैं वैसे ही पृथ्वी और आकाश सम्पूर्ण विश्व का भरण पोषण और रक्षण करते हैं :– **उरूव्यचसा महिनीअसश्चता माता-पिता च भुवनानि रक्षत[9]।** आकाश को पांचवा ही नहीं अपितु यह सृष्टि का अहम् तत्व है। शेष चारों तत्व इसी के सहारे हैं। अतः आकाश बुनियादी तत्व है। असीम आकाश की गोद में ये चारों तत्व खेल–खेलते हैं।

हम सौरमण्डल के एक गोल चक्र में घूमते हुए भी पृथ्वी ग्रह पर बैठे हुए हैं। यदि पृथ्वी ग्रह अपनी जगह पर बनी हुई है तो उसकी वजह केवल आकाश है। क्योंकि आकाश हमें स्थिर किए हुए हैं आकाश ही इस पृथ्वी का सौरमण्डल है, आकाश आकाश–गंगा और पूरे ब्रह्मांड को अपनी जगह में थामे हुए है।

पञ्चतत्वों में मिट्टी, पानी, हवा और आग प्रत्यक्ष महसूस होते हैं, वैसा आकाश नहीं परन्तु इन सबकी अपेक्षा शक्ति संपन्न क्रियाशील और प्रभावकारी आकाश ही है। आकाश का अर्थ कोई हवा, बादल या शून्य मानता है, जबकि आकाश एक ऐसा सूक्ष्म पदार्थ है जो हर पदार्थ में न्यूनाधिक मात्रा में व्याप्त है। अंग्रेजी में इस तत्व को Space कहते हैं यह Space ही आकाश है।

रेडियो द्वारा ब्रॉडकास्ट किए हुए शब्द Space तत्व में लहरों के रूप में चारों ओर फैल जाते हैं। रेडियो यन्त्र से उन लहरों को पड़कर दूर स्थान में भी सुना जाता है। केवल शब्द ही नहीं अपितु विचार और विश्वास भी आकाश में लहरों के रूप में बहते रहते हैं। विचारों के अनुरूप ही हमारी मनोवृत्तियां होती हैं और उसी के अनुरूप इकट्ठा होकर हमारे पास आ जाते हैं। जिस प्रकार एक ही समय में विभिन्न प्रोग्राम ब्राडकास्ट होते हैं परन्तु रेडियो के स्टेशन नम्बर पर लगी प्रोग्राम सुई से वही प्रोग्राम सुनाई पड़ता है। इसी प्रकार जैसी हमारी रुचि/इच्छा होती है उसी के अनुसार हमें आकाश से विचार, प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त होते हैं। सृष्टि के आदि से लेकर अब तक असंख्य मनुष्यों के अनगिनत विचार हैं जो ब्रह्मांड में आज तक नष्ट नहीं हुए हैं। ये विचार अपने अनुरूप मनुष्य मनोभूमि के अनुरूप विचार और विश्वासों के समूह में इकट्ठा हो जाते हैं। विचारों की प्रेरणा से ही कार्य होते हैं **'जो जैसा सोचता है वैसा ही काम करता है'** इसीलिए आकाश तत्व के लाभदायक विचारों को आकर्षित करने के लिए प्राणायाम के बाद का समय सही होता है।

हिंदू धर्म में ईश्वर को भगवान की संज्ञा दी गई है जो इन्हीं पञ्चतत्वों को दर्शाता है। यदि भगवान शब्द को तोड़ा जाए तो ये ही पञ्चतत्व निकालकर आते हैं इनमें "भ"–भूमि, "ग"–गगन, "व"– वायु, "अ"– अग्नि तथा "न"– नीर है। इन पांच अक्षरों का योग सृष्टि है, और विग्रह प्रलय है। हिंदू धर्म में भगवान हमारे निर्माण का कारक है। मानव शरीर में इन पञ्चतत्वों का समावेश होता है, जिसकी मात्रा भी निश्चित है। इनमें से किसी एक की मात्रा असन्तुलित होते ही रोग की उत्पत्ति होती है, फलस्वरुप मनुष्य बीमार पड़ जाता है, फिर उस रोगी को योग, आयुर्वेद या दवाईयों की सहायता से उस तत्व को सन्तुलित करने का प्रयास करते हैं ताकि फिर से शरीर का संचालन सुचारु रूप से हो सके। ये पञ्चतत्व मिलकर मानव शरीर का निर्माण करते हैं परन्तु उसे जीवित नहीं कर सकते, जीवन के लिए परमात्मा के अंश "आत्मा" की आवश्यकता होती है। जब आत्मा उस शरीर का त्याग कर देती है, तब वह शरीर पुनः निर्जीव हो जाता है, जिसमें फिर आत्मा का प्रवेश नहीं हो सकता। इसीलिए हिंदू धर्म में दाह संस्कार की प्रथा है, जिसके अनुसार मृत व्यक्ति का अंतिम संस्कार करके इन्हीं

पञ्चतत्वों का में मिला दिया जाता है।

आज विज्ञान भी स्वीकारता है कि आकाश में खास तरह की बुद्धि होती है, यह आकाशीय बुद्धि मानव के साथ उसके विचारों के अनुरूप व्यवहार करती है। मनुष्य अनजाने में इस व्यापक बुद्धि की प्रेरणा से ही कार्य करता है। इस प्रकार जो जैसा सोचता है वैसा कार्य भी करता है। सद्भावों के कारण ही यह इहलोक और परलोक में आनन्द मिलता है। उपरोक्त पांच तत्वों की साधना देखने में छोटी और सरल है, परन्तु इनका लाभ असीमित और अनन्त हैं। इनकी सम्यक् साधना से अनेकों मानसिक और आध्यात्मिक लाभ प्राप्त होते हैं। वेद पुराण भारतीय दर्शन और पाश्चात्य दर्शन में विभिन्न ऋषियों ने इन तत्वों को देवता मानकर उनका स्तवन किया है। भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शन में पञ्च तत्वों का महत्व का वर्णन मिलता है। आध्यात्मिक दार्शनिक और वैश्विक वैज्ञानिकों ने भी इन तत्वों की उपेक्षा नहीं की है। अतः सारांश रूप में यह पञ्चतत्व मानव शरीर को सन्तुलित कर वैश्विक प्रकृति और पर्यावरण को निरापद करने में प्रत्यक्ष उत्तरदाई हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. वेदान्त दर्शन आचार्य सदानन्द।
2. माता भूमिः पुत्रौहं पृथिव्याः।
3. कालिदास ने रघुवंश में जल की कुशल क्षेम का वर्णन किया है 'शिबानि वस्तीर्थजलानि कच्चित्।
4. :प्राण प्रजा नां उदयति एष सूर्यः।
5. अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं प्रतिरूपो बभूव'।
6. तीर्थोकञ्चन वहिन्शच शान्तायः शुद्धिमर्हतः।
7. आकाशाद्वायुः वायोरग्निः।
8. आपः द्यावा पृथ्वी अन्तरिक्ष सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुश्च।
9. उरूव्यचसा महिनीअसश्चता माता–पिता च भुवनानि रक्षत।

ेमेल, dileep8226070942@gmail.com

ईमेल, drmlchoudhry@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 106-117

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

माध्यमिक स्तर के बच्चों में भावात्मक बुद्धि का प्रभाव

डॉ. हेमा तिवारी

सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग, श्याम शिक्षा महाविद्यालय, सक्ती (छ. ग.)

सारांश :-

यह अध्ययन माध्यमिक स्तर के बच्चों में भावात्मक बुद्धि के स्तर और उसके प्रभावों का विश्लेषण करता है। भावात्मक बुद्धि का अर्थ है अपनी और दूसरों की भावनाओं को पहचानने, समझने और नियंत्रित करने की क्षमता। किशोरावस्था के दौर में, जब बच्चे शारीरिक, मानसिक और सामाजिक बदलावों से गुजर रहे होते हैं, तब उनकी भावात्मक बुद्धि का विकास उनके समग्र व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि जिन बच्चों में भावात्मक बुद्धि अधिक विकसित होती है, वे न केवल तनाव और दबाव को बेहतर तरीके से संभाल पाते हैं, बल्कि वे बेहतर सामाजिक संबंध भी स्थापित करते हैं और अपनी शैक्षणिक जिम्मेदारियों को भी प्रभावी ढंग से निभाते हैं। भावात्मक बुद्धि बच्चों के आत्मविश्वास, सहानुभूति, और समस्या–समाधान कौशल को बढ़ाती है, जो उनके मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक व्यवहार के लिए लाभकारी साबित होती है।

अतः यह अध्ययन सुझाव देता है कि शिक्षा के दौरान बच्चों की भावात्मक बुद्धि को विकसित करने के लिए विशेष प्रशिक्षण और गतिविधियाँ शामिल की जानी चाहिए। इससे न केवल बच्चों का शैक्षणिक प्रदर्शन सुधरेगा, बल्कि उनका व्यक्तित्व भी अधिक संतुलित और सकारात्मक होगा।

बीज शब्द – भावात्मक बुद्धि, माध्यमिक स्तर, बच्चों का विकास, सामाजिक कौशल, शैक्षणिक प्रदर्शन, मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य।

प्रस्तावना :-

भावात्मक बुद्धि (Emotional Intelligence) वह क्षमता है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी और दूसरों की भावनाओं को पहचानने, समझने, नियंत्रित करने और प्रभावी रूप से व्यक्त करने में सक्षम होता है। यह बुद्धि न केवल व्यक्तिगत विकास में सहायक होती है, बल्कि सामाजिक, शैक्षणिक और व्यावसायिक जीवन में भी इसका महत्त्व बहुत अधिक है।

विशेष रूप से बच्चों और किशोरों के जीवन में भावात्मक बुद्धि का विकास उनके मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक संबंधों, और समग्र व्यक्तित्व के विकास के लिए अत्यंत आवश्यक माना जाता है। माध्यमिक स्तर के बच्चे किशोरावस्था के दौर से गुजर रहे होते हैं, जो शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक बदलावों का संवेदनशील समय होता है। इस अवधि में बच्चे विभिन्न प्रकार की चुनौतियों और दबावों का सामना करते हैं, जिनमें शैक्षणिक तनाव, सामाजिक दबाव, और आत्म– पहचान से जुड़ी समस्याएँ शामिल हैं।

ऐसे में भावात्मक बुद्धि उनके लिए एक सुरक्षा कवच की तरह काम करती है, जो उन्हें तनाव को संभालने, सकारात्मक सोच बनाए रखने और सामाजिक संबंधों को बेहतर बनाने में मदद करती है।

शैक्षणिक क्षेत्र में पारंपरिक बुद्धिमत्ता (IQ) के साथ–साथ भावात्मक बुद्धि (EQ) का महत्व भी तेजी से बढ़ रहा है। कई अध्ययनों ने यह दर्शाया है कि भावात्मक बुद्धि वाले छात्र बेहतर नेतृत्व क्षमता, सहानुभूति, और समस्या समाधान कौशल विकसित करते हैं, जो उनकी सफलता में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इसके अतिरिक्त, भावात्मक बुद्धि बच्चों को आत्म–नियंत्रण, सहकारी व्यवहार, और सकारात्मक सोच की ओर प्रेरित करती है, जो उनके संपूर्ण विकास के लिए अनिवार्य है।

इस अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक स्तर के बच्चों में भावात्मक बुद्धि के स्तर का मूल्यांकन करना और यह समझना है कि यह बुद्धि उनके शैक्षणिक प्रदर्शन, सामाजिक व्यवहार और मानसिक स्वास्थ्य पर किस प्रकार प्रभाव डालती है। साथ ही, अध्ययन शिक्षा प्रणाली में भावात्मक बुद्धि के विकास के लिए आवश्यक कदमों और नीतियों पर भी प्रकाश डालेगा।

अध्ययन का उद्देश्य :–

- माध्यमिक स्तर के बच्चों में भावात्मक बुद्धि के स्तर का मूल्यांकन करना।
- भावात्मक बुद्धि का बच्चों के शैक्षणिक प्रदर्शन और सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव जानना।
- यह समझना कि भावात्मक बुद्धि किस प्रकार बच्चों के मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य और संबंध निर्माण में सहायक होती है।
- शिक्षा में भावात्मक बुद्धि को बढ़ावा देने के लिए सुझाव देना।

माध्यमिक स्तर के बच्चों की स्थिति :–

माध्यमिक स्तर (कक्षा 6 से 10) का समय बच्चों के जीवन में अत्यंत संवेदनशील होता है। इस समय वे शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक रूप से अनेक बदलावों का अनुभव करते हैं। इस अवस्था में यदि बच्चों की भावात्मक बुद्धि का उचित विकास नहीं होता, तो वे तनाव, चिड़चिड़ापन, आत्म–विश्वास की कमी और सामाजिक अलगाव जैसी समस्याओं का सामना कर सकते हैं।

छात्रों के लिए भावनात्मक बुद्धिमत्ता क्यों महत्वपूर्ण है?

भावनात्मक बुद्धिमत्ता छात्रों के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उन्हें स्वयं की और दूसरों की देखभाल करने में मदद करती है। इन कौशलों को मजबूत करके, शिक्षार्थी अपनी जरूरतों का बेहतर आकलन कर सकते हैं, दूसरों की देखभाल कर सकते हैं, और साथियों व बड़ों के प्रति सम्मान प्रदर्शित कर सकते हैं, जिससे सीखने के माहौल में संघर्ष और गलतफहमी कम हो जाती है।

भावनात्मक बुद्धिमत्ता के क्या लाभ हैं?

भावनात्मक बुद्धिमत्ता के लाभ मानव जीवन भर फैले रहते हैं। व्यक्तिगत मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक जीवन की गुणवत्ता बेहतर हो सकती है, लेकिन कार्यस्थल के अनुभव, शैक्षणिक कार्य और व्यापक समाज के साथ दिन–प्रतिदिन की बातचीत भी कहीं अधिक संतोषजनक हो सकती है।

ईआई का इतिहास :–

परंपरागत रूप से, कई मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक अनुभूति और भावना को अलग–अलग क्षेत्रों के रूप में देखते थे, जिसमें भावना उत्पादक और तर्कसंगत सोच के लिए खतरा पैदा करती थी। क्या आपको कभी कहा गया है कि अपनी भावनाओं को अपने फैसलों के आड़े न आने दें? जुनून और कारण का यह पृथक्करण प्राचीन ग्रीस (लियोन्स, 1999) तक जाता है। इसके अतिरिक्त, 20वीं सदी के मध्य के विद्वानों ने भावनाओं को मानसिक रूप से अस्थिर करने वाली शक्तियों के रूप में समझाया (यंग, 1943)। फिर भी, पूरे इतिहास में ऐसे निशान हैं जहाँ भावना और अनुभूति के प्रतिच्छेदन पर सैद्धांतिक रूप से सवाल उठाए गए हैं। 350 ईसा पूर्व में, प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने लिखा था, ''कुछ लोग अगर उन्होंने पहले महसूस किया और देखा कि क्या आ रहा है और पहले खुद को और अपनी गणना करने की क्षमता को जगाया है, ये वही अंतर्क्रियाएँ हैं जो हमें ''मजबूत'' होना और अपनी भावनाओं को छिपाए रखना सिखाती हैं। तो, हम भावनात्मक बुद्धिमत्ता (EI) तक कैसे पहुँचे– एक वैज्ञानिक सिद्धांत जो दावा करता है कि सभी व्यक्तियों में भावनाओं के माध्यम से ''गणना करने की क्षमता'' तक पहुँच होती है?

सोच को सुगम बनाने के लिए भावनाओं का उपयोग :–

संज्ञानात्मक गतिविधियों को बढ़ाने और विभिन्न परिस्थितियों के अनुकूल ढलने के लिए भावनाओं का उपयोग करना, भावनात्मक बुद्धिमत्ता का दूसरा घटक है। इस क्षेत्र में कुशल लोग समझते हैं कि कुछ भावनात्मक अवस्थाएँ लक्षित परिणामों के लिए दूसरों की तुलना में अधिक अनुकूल होती हैं। कॉन्सर्ट के टिकटों को लेकर निराशा महसूस करना एक मददगार मानसिकता हो सकती है, खासकर जब आप फुटबॉल खेलने या कुश्ती मैच शुरू करने वाले हों।

निराशा से जुड़े एड्रेनालाईन के उच्च स्तर आपकी ऊर्जा और शक्ति को बढ़ा सकते हैं, जिससे आपको प्रतिस्पर्धा करने में मदद मिल सकती है। हालाँकि, यही भावनाएँ आपके स्कूल की मेज पर बैठकर बीजगणित के प्रश्न हल करने या निबंध लिखने की क्षमता में बाधा डाल सकती हैं।

भावनाओं की समझ :–

भावनात्मक आत्म–चेतना में भावनात्मक अवस्थाओं के बीच अंतर करने की क्षमता, साथ ही उनके विशिष्ट कारणों और प्रक्षेप–पथों को समझने की क्षमता भी शामिल है। उदासी या निराशा की भावनाएँ किसी व्यक्ति या वस्तु, जैसे आपके कॉन्सर्ट के टिकट, के खो जाने से उत्पन्न हो सकती हैं। अधिकांश मानकों के अनुसार, बारिश में खड़े रहना केवल एक मामूली झुंझलाहट

है। हालाँकि, भारी भीड़ में घंटों बारिश में इंतजार करने से चिड़चिड़ापन या निराशा हो सकती है। जब कोई व्यक्ति लाइन में आगे आकर आपके योग्य टिकट ले लेता है, तो यह महसूस करना कि आपके साथ अन्याय हुआ है, आपकी अप्रियता को क्रोध और आक्रोश में बदल सकता है।

इस क्षेत्र में कुशल लोग इस भावनात्मक प्रक्षेप–पथ से अवगत होते हैं और उन्हें इस बात का भी गहरा बोध होता है कि कैसे कई भावनाएँ मिलकर एक नई भावना उत्पन्न कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, हो सकता है कि आप उन लोगों के प्रति तिरस्कार महसूस करें जो लाइन में आपसे आगे निकल गए। हालाँकि, तिरस्कार की यह भावना केवल क्रोध से उत्पन्न नहीं होती। बल्कि, यह क्रोध और घृणा का मिश्रण है क्योंकि इन लोगों ने, आपके विपरीत, नियमों का उल्लंघन किया है। नकारात्मक भावनाओं के बीच सफलतापूर्वक भेदभाव करना भावना की समझ से संबंधित एक महत्वपूर्ण कौशल है, और यह अधिक प्रभावी भावना प्रबंधन (फेल्डमैन बैरेट, ग्रॉस, क्रिस्टेंसन, और बेनवेन्यूटो, 2001) की ओर ले जा सकता है।

EI के मिश्रित और विशेषता मॉडल :–

क्षमता मॉडल के विपरीत, मिश्रित मॉडल ईआई की एक व्यापक परिभाषा प्रदान करते हैं जो मानसिक क्षमताओं को व्यक्तित्व लक्षणों जैसे आशावाद, प्रेरणा और तनाव सहिष्णुता के साथ जोड़ती है। दो सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले मिश्रित मॉडल बॉयट्जिस–गोलेमैन मॉडल (बॉयट्जिस एंड साला, 2004) और भावनात्मक–सामाजिक बुद्धिमत्ता का बार–ऑन मॉडल (बार–ऑन, 2006) हैं। बॉयट्जिस–गोलेमैन मॉडल ईआई दक्षताओं को चार समूहों में विभाजित करता है : आत्म–जागरूकता, आत्म–प्रबंधन, सामाजिक जागरूकता और संबंध प्रबंधन। इसी तरह, बार–ऑन मॉडल ईआई के पांच मुख्य घटक प्रदान करता है। अंतःवैयक्तिक कौशल, पारस्परिक कौशल, अनुकूलनशीलता, तनाव प्रबंधन और मनोदशा।

बच्चों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता की पहचान के 10 संकेत :–

भावनात्मक बुद्धिमत्ता की पहचान आपके बच्चे की विभिन्न परिस्थितियों में प्रतिक्रियाओं पर ध्यान देने से शुरू होती है। ये सूक्ष्म संकेत उनके प्राकृतिक कौशल को निखारने या उन्हें प्रशिक्षित करके उन्हें नए सिरे से विकसित करने के आपके उद्देश्य में और मदद करेंगे। बच्चों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता की पहचान करने के 10 सबसे आम संकेतों की सूची यहां दी गई है।

1. दूसरों के प्रति गहरी सहानुभूति :–

सहानुभूति का प्रदर्शन बचपन से ही शुरू हो जाता है जब आप अपने बच्चों के साथ बातचीत शुरू करते हैं। आपके शब्दों और कार्यों पर उनकी विभिन्न प्रतिक्रियाएँ उनकी भावनात्मक बुद्धिमत्ता को प्रेरित करती हैं। उदाहरण के लिए, जब आप अपने बच्चे के साथ पी–का–बू खेलते हैं, तो आपका बच्चा मुस्कुराता है, या जब आप रोने की नकल करते हैं, तो आपका बच्चा सहानुभूति या दुःख महसूस करता है, इत्यादि।

बच्चों में सहानुभूति को समझना :–

फल्म या शो देखते समय अपने बच्चों की प्रतिक्रियाओं पर ध्यान देना आपके बच्चे में सहानुभूति की गहराई को समझने का एक बड़ा संकेत है। साथ ही, देखें कि आपका बच्चा स्कूल में अपने संघर्षों को कैसे संभालता है या रोजमर्रा की जिंदगी में दूसरों की भावनाओं और जरूरतों को कैसे समझता है।

गतिविधि – अपने बच्चों को कुछ निस्वार्थ स्वैच्छिक गतिविधियों में शामिल करें जैसे गरीबों को खाना खिलाना, आवारा जानवरों की देखभाल करना, दूसरों की मदद करना, आदि, ताकि उन्हें सहानुभूति समझने में मदद मिल सके।

सावधानी – हालाँकि सहानुभूति एक अच्छी बात है, लेकिन सुनिश्चित करें कि आपका बच्चा आसानी से प्रभावित होने से बचना सीखे।

संकेत जिनसे पता चलता है कि आपका बच्चा दूसरों की भावनाओं से जुड़ सकता है।

- वे दूसरों के प्रति सहानुभूति रखेंगे और अपने संसाधन साझा करने में कोई हिचकिचाहट नहीं दिखाएंगे।
- वे अशाब्दिक संकेतों को आसानी से समझ लेंगे। उदाहरण के लिए, अगर आप उदास हैं, तो वे आपके पास आकर पूछेंगे, क्या आप ठीक हैं?।
- वे एक अच्छे टीम खिलाड़ी और स्वस्थ सामाजिक कौशल का प्रदर्शन करेंगे।
- वे हमेशा अपने किसी अकेले सहपाठी को अपने खेल–दिवस या पार्टियों में आमंत्रित करेंगे।
- वे अच्छे श्रोता और संवाद करने वाले होंगे।

2. भावनाओं को नियंत्रित करने की क्षमता :–

बच्चों में भावनात्मक रूप से बुद्धिमान होने का तमगा पाने के लिए यह सबसे महत्वपूर्ण लक्षणों में से एक है।

भावनात्मक आत्म–नियमन कैसे काम करता है?

एक देखभालकर्ता के रूप में, यह जरूरी है कि आप अपने बच्चे की भावनाओं पर ध्यान केंद्रित करें और उनसे पूछें कि उनका दिन कैसा रहा। क्या गलत हुआ? वे कैसा महसूस कर रहे हैं और क्यों? इत्यादि। उनकी भावनाओं के बारे में ऐसे सवालों से उन्हें चुनौती देकर, वे उन्हें समझना सीखते हैं।

साथ ही, उन्हें अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए एक बिना किसी निर्णय के अवसर प्रदान करें और उन्हें अपनी भावनाओं और उनके पीछे के कारणों को चिह्नित करने के लिए प्रेरित करें।

सावधानी – याद रखें कि उनकी भावनाओं को चिह्नित करें, न कि उन्हें, क्योंकि इससे उनमें अपने बारे में कुछ नकारात्मक भावनाएँ पैदा हो सकती हैं।

उदाहरण के लिए, यदि आप अपने बच्चे को लगातार रोने वाला बच्चा कहकर संबोधित करते हैं, तो वे इसे स्वीकार करना शुरू कर देंगे, भले ही वे रोने वाले न हों। इससे बाद में उनके आत्म–सम्मान पर असर पड़ सकता है।

- बच्चों को अपने भावनात्मक आवेगों को नियंत्रित करना सिखाना।
- अपनी भावनाओं को समझना और उन्हें नियंत्रित करने की कोशिश करना दो बहुत अलग बातें हैं, और यहीं उन्हें आपकी मदद की आवश्यकता हो सकती है।
- उन्हें अपनी भावनाओं को नियंत्रित करना सिखाएँ।
- उल्टे क्रम में 1 से 10 तक गिनना।
- तीन या उससे ज्यादा गहरी साँसें लेना।

- जर्नलिंग।
- कच्चे हाथों से पेंटिंग करना।
- टहलने जाना, दौड़ना या प्रकृति में बाहर खेलना।

ध्यान :–

गतिविधि – उदास, खुश, क्रोधित और उदासीन भावनाओं वाला एक DIY इमोशन बोर्ड बनाएँ और उन्हें पूरे दिन में महसूस की गई भावना के नीचे एक टिक लगाने के लिए कहें। ऐसा हर हफ्ते करें और सोने से पहले हर रोज अपनी भावनाओं के पीछे के कारण के बारे में बात करने की कोशिश करें। साथ ही, अपने अनुभव, चुनौतियाँ और प्रेरणाएँ साझा करने से उन्हें अपनी जीवन परिस्थितियों के अनुसार अपनी भावनाओं को नियंत्रित करने में मदद मिलेगी।

3. आत्म–जागरूकता :–

यह आत्म–नियमन का पूर्वाभास है। बच्चों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता की पहचान करने के लिए भावनाओं के प्रति आत्म–जागरूकता बहुत महत्वपूर्ण है।

आत्म–जागरूकता क्या है?

आत्म–जागरूकता से तात्पर्य अपनी भावनाओं, धारणाओं, विचारों, इच्छाओं और उन्हें महसूस करने के पीछे के कारण को समझने की क्षमता से है। बच्चे दूसरों की भावनाओं को तभी समझ पाएँगे जब वे अपनी भावनाओं को समझना सीख जाएँगे। इसलिए, आत्म–जागरूकता एक महत्वपूर्ण उपकरण है।

उदाहरण के लिए, यदि आपका बच्चा आपसे कोई खिलौना खरीदने के लिए जिद कर रहा है और आप मना कर रहे हैं, तो वह क्रोधित हो जाता है। जब आप उसकी इस भावना को स्वीकार करते हैं, तो वह भविष्य में दूसरों के क्रोध को मान्य करेगा। इससे उसकी भावनात्मक बुद्धिमत्ता को बढ़ावा मिलेगा।

भावनात्मक विकास के लिए यह क्यों महत्वपूर्ण है?

- आत्म–जागरूकता को प्रोत्साहित करने से आत्म–नियमन, आत्म–लचीलापन, प्रेरणा और आशावाद जैसे कई अन्य कारकों के द्वार खुलते हैं।
- बच्चों को प्रतिक्रिया देने से पहले कुछ देर सोचने के लिए प्रेरित करें। इससे उन्हें अपनी भावनाओं की प्रकृति को ठीक से समझने में मदद मिलेगी।
- इससे न केवल उनमें धैर्य का विकास होगा, बल्कि उनके संज्ञानात्मक और सामाजिक कौशल भी निखरेंगे।
- जो व्यक्ति अपनी वास्तविक भावनाओं का आकलन कर सकता है, उसे उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता वाला माना जाता है क्योंकि वह अपनी भावनाओं के मूल स्रोत को समझता है।
- आत्म–जागरूकता भी प्रामाणिकता में निहित है, इसलिए बच्चों को अपनी वास्तविक भावनाओं को समझने के लिए खुद के प्रति ईमानदार और सच्चे बने रहने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

गतिविधि – अपने बच्चे को एक व्यक्तिगत डायरी रखने और अपने दिन के बारे में विस्तार से लिखने के लिए प्रोत्साहित करें, या अगर वे अभी छोटे हैं, तो सोने से पहले उनसे बात करें। यह समझना उनकी

दिनचर्या बना दें कि वे कैसा महसूस कर रहे हैं। इससे न केवल उन्हें अपनी भावनाओं का आकलन करने में मदद मिलेगी, बल्कि वे स्वतंत्र भी बनेंगे।

सावधानी – देखभाल करने वालों के रूप में, ध्यान दें कि जब आपका बच्चा गुस्सा, दुखी या खुश होता है, तो उसकी प्रतिक्रिया कैसी होती है। क्या वह नखरे दिखा रहा है, चुप है, या अकेले बैठकर स्थिति से निपटने की कोशिश कर रहा है, आदि? इस समय उनके साथ धैर्य और प्रेम से पेश आने का ध्यान रखें क्योंकि वे अभी भी सीखने की प्रक्रिया में हैं।

4. भावनाओं को स्वस्थ तरीके से व्यक्त करना :–

हमने अक्सर देखा है कि लोग छोटी उम्र से ही बच्चों की भावनाओं को दबा देते हैं, जैसे लड़के रोते नहीं या लड़कियाँ ऐसा नहीं करती, या जब उन्हें सखती के कारण अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की अनुमति नहीं होती, आदि।

- इन शब्दों का उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि वे अपनी वास्तविक भावनाओं को छिपाना सीख जाते हैं।
- भावनाओं का संचार शब्दों से करें, न कि कर्मों से
- उन्हें भावनात्मक अभिव्यक्ति के स्वस्थ तरीकों से अवगत कराना बहुत जरूरी है।
- उन्हें अपनी भावनाओं को बातचीत के जरिए सुलझाने के लिए प्रेरित करना जरूरी है, न कि नखरे दिखाने या चीजें फेंकने, चीखने–चिल्लाने, बहस करने, लड़ने, खुद को नुकसान पहुँचाने आदि जैसे तीव्र भावनात्मक विस्फोट करने के लिए।
- चूँकि उन्हें कभी भी खुलकर और सही ढंग से अपनी बात कहने का मौका नहीं दिया गया, इसलिए वे भविष्य में दूसरों के साथ भी यही दोहराते हैं।
- इसका उनके भविष्य के रिश्तों और मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा।
- छोटी उम्र में स्वस्थ अभिव्यक्ति का महत्व।
- बच्चों को अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए एक आरामदायक जगह प्रदान करने से आपको अपने उदाहरण देकर या उनसे बात करके उनकी भावनाओं को नियंत्रित करने में मदद मिलेगी।
- इससे उन्हें भावनात्मक रूप से खुला और जागरूक रहने में मदद मिलेगी और भविष्य में किसी भी तरह के टकराव से बचने में मदद मिलेगी।
- छोटी उम्र में स्वस्थ अभिव्यक्तियाँ बच्चों को अपनी भावनाओं के प्रति ईमानदार रहने के लिए प्रेरित करेंगी।
- यह उनमें से किसी भी मानसिक पीड़ा, चिड़चिड़ापन, अवसाद, अकेलापन, आत्म–सम्मान की कमी आदि को भी दूर करेगा।

गतिविधि – अगर आपका बच्चा अपनी भावनाओं को व्यक्त करना नहीं समझता है, तो उसके साथ मिट्टी के आटे से खेलने का समय बिताएँ। मिट्टी को आकार देकर उससे बात करें। इससे न केवल उन्हें तनाव और चिंता से मुक्ति मिलेगी, बल्कि उनके सूक्ष्म मोटर और संवेदी कौशल भी विकसित होंगे। साथ ही, अपने बच्चों को सिखाएँ कि एक स्वस्थ रिश्ते के लिए ईमानदार बातचीत एक महत्वपूर्ण कुंजी है।

5. जिज्ञासा का उच्च स्तर :–

जिज्ञासा एक जीपीएस की तरह है जो आपको आपकी इच्छित मंजिल तक ले जाती है। यह बच्चों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता के सबसे महत्वपूर्ण लक्षणों में से एक है।

भावनात्मक परिपक्वता के संकेत के रूप में जिज्ञासा :–

- जो बच्चे स्वाभाविक रूप से जिज्ञासु होते हैं, वे अपने आस–पास हो रही चीजों के प्रति हमेशा खुले दिमाग से सोचने की कोशिश करते हैं क्योंकि उनका मानसिक संतुलन पहले से ही असीम और अनुकूलनशील होता है।
- जिज्ञासा उनमें भावनात्मक परिपक्वता का भाव पैदा करती है, जिससे वे दूसरों को समझने के लिए प्रेरित होते हैं।
- उदाहरण के लिए, अगर कोई उदास है, तो आप उसे तब तक नहीं समझ सकते जब तक आप उसके व्यवहार या भावनाओं के बारे में जिज्ञासु न हों।

जिज्ञासा और भावनात्मक बुद्धिमत्ता के बीच संबंध :–

जिज्ञासा आत्म–जागरूकता, आत्म–चिंतन, आत्म–नियंत्रण, समस्या–समाधान क्षमता, सहानुभूति, सामाजिक कौशल और विकास की मानसिकता को बढ़ावा देती है। ये सभी मिलकर भावनात्मक बुद्धिमत्ता को परिभाषित करते हैं।

उदाहरण के लिए, जिज्ञासा आपके बच्चों को ष्आप ठीक नहीं लग रहे हैंय क्या सब ठीक है?'' जैसे प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करेगी। या ''तुमने ऐसा क्यों किया?'' या ष्क्या तुम्हें लगता है कि इससे निपटने का यही सही तरीका है?'' आदि। उनके व्यवहार पर आपकी ऐसी ही प्रतिक्रिया उनके लिए दूसरों से ऐसे ही सवाल पूछने की प्रेरणा का स्रोत बनेगी, जिससे उनमें भावनात्मक बुद्धिमत्ता विकसित होगी।

गतिविधि – कहानी पढ़ने, शो या फिल्म देखने के बाद अपने बच्चों से पात्रों के स्वभाव के बारे में सवाल पूछने की कोशिश करें। इससे उन्हें दूसरों की भावनाओं के पीछे के कारणों को समझने में मदद मिलेगी, और इस तरह वे वास्तविक जीवन में भी वही भावनाएँ अपने अंदर समाहित कर पाएँगे। आप उन्हें खुद से यह पूछने की आदत डालने के लिए भी प्रोत्साहित कर सकते हैं, ''मुझे ऐसा क्यों लग रहा है?'' और सटीक उत्तर पाने के लिए इसे अपनी डायरी में लिखें। इससे उन्हें अपनी भावनाओं को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलेगी।

6. अच्छे सामाजिक कौशल :–

- उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता वाला व्यक्ति अपने सहानुभूतिपूर्ण स्वभाव के कारण हमेशा सामाजिक कौशल में अद्भुत होगा।
- मजबूत सामाजिक संपर्क भावनात्मक बुद्धिमत्ता (EI) को कैसे दर्शाते हैं।
- सामाजिक कौशल सामाजिक परिस्थितियों जैसे खेल, टीम प्ले या गतिविधि, परिवार के साथ अच्छा समय बिताना, या रोजमर्रा की जिंदगी में बातचीत आदि के बेहतर संपर्क से विकसित होते हैं।
- ध्यान दें कि आपका बच्चा खेलते, पढ़ते, स्कूल आदि में अपने साथियों या दूसरों के साथ कैसा व्यवहार करता है। उस पर कड़ी नजर रखें और उसे बताएँ कि वह कहाँ सुधार कर सकता है।

- इससे उसे रोजाना आत्मचिंतन और अपनी भावनाओं को नियंत्रित करने में मदद मिलेगी, जिससे उसकी भावनात्मक बुद्धिमत्ता बढ़ेगी।

गतिविधि – अपने बच्चे के दोस्तों को आमंत्रित करके और उनके लिए एक–दूसरे के साथ बातचीत करने और मिलकर काम करने के लिए विभिन्न समूह और व्यक्तिगत गतिविधियों का आयोजन करके एक प्ले–डेट की योजना बनाएँ। इससे उनके सामाजिक, संज्ञानात्मक, धैर्य और टीम–प्लेयर कौशल में वृद्धि होगी।

अपने बच्चे को रिश्ते बनाने के लिए प्रोत्साहित करना :–

- कभी–कभी, आप देख सकते हैं कि हालाँकि आपका बच्चा भावनात्मक रूप से बुद्धिमान है, लेकिन शर्मीलेपन के कारण, वह सामाजिकता में असमर्थ है, जिससे उसके आत्म–सम्मान को ठेस पहुँच सकती है।
- इसलिए, नियमित रूप से खेलने, समूह गतिविधियों और सामाजिक समारोहों की योजना बनाने से आपके बच्चे को अपने कम्फर्ट जोन से बाहर निकलने और अपने आस–पास के लोगों को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलेगी।
- अच्छे सामाजिक कौशल वाले बच्चे किसी भी परिस्थिति में आसानी से खुद को ढाल लेते हैं, और अगर यह स्वाभाविक नहीं है, तो सामाजिक परिस्थितियों के लगातार संपर्क से इसका अभ्यास किया जा सकता है।

7. समस्या-समाधान क्षमताएँ :–

- बच्चों में यह कौशल उनके सहानुभूतिपूर्ण स्वभाव से विकसित होता है।
- भावनात्मक बुद्धिमत्ता और विश्लेषणात्मक सोच
- उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता वाले बच्चे प्रतिक्रिया देने से पहले हमेशा सोचते हैं और किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले दूसरों की भावनाओं को समझने की कोशिश करते हैं। यह उनकी विश्लेषणात्मक सोच को दर्शाता है।
- इससे न केवल उन्हें किसी भी संघर्ष से बचने में मदद मिलेगी, बल्कि उनके समस्या–समाधान कौशल में भी वृद्धि होगी।

उदाहरण के लिए, आपके बच्चे को एक समूह परियोजना दी जाती है, जहाँ किसी गलतफहमी के कारण, वे परियोजना में एक महत्वपूर्ण बात शामिल करने से चूक गए। उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता वाला बच्चा बिना सोचे–समझे बहस करने के बजाय बातचीत करके, विवादों को सुलझाकर और समाधान ढूँढ़कर बात करना पसंद करेगा। यह कौशल भविष्य में उन्हें एक अच्छा टीम खिलाड़ी बनने में भी मदद करता है।

बच्चे संघर्षों का सामना कैसे करते हैं और उनका समाधान कैसे करते हैं?

- भावनात्मक रूप से बुद्धिमान व्यक्ति दूरदर्शी होता है और इसलिए वह हमेशा समस्या के बजाय संभावित समाधानों पर ध्यान केंद्रित करता है।
- वे हमेशा किसी भी समस्या के प्रति धैर्य, आशा, आशावाद और सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।

गतिविधि – अपने बच्चे को विभिन्न विचार–मंथन गतिविधियों में शामिल करें, जिससे वे स्वाभाविक रूप

से किसी बाधा के परिणामों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय उससे बाहर निकलने का रास्ता खोजने की ओर अग्रसर होंगे।

8. अनुकूलनशीलता और लचीलापन :–

- उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता का एक लक्षण नकारात्मक अहंकार से जुड़ा है। इसका अर्थ है बदलती जीवन परिस्थितियों के प्रति कम जिद।
- आपका बच्चा नई परिस्थितियों के साथ कितनी अच्छी तरह तालमेल बिठा पाता है?
- जीवन परिवर्तन और रूपांतरणों से भरा है, जिसके लिए बढ़ते रहने की एक अदम्य इच्छा की आवश्यकता होती है। इसके लिए नए स्कूल, नई जगह, पारिवारिक गतिशीलता में बदलाव आदि जैसी नई परिस्थितियों के अनुकूल और लचीला होना आवश्यक है।

कुछ प्रमुख लक्षणों में शामिल हैं :–

- कुछ नया सीखने की जिज्ञासा।
- परिवर्तन के प्रति आशावादी।
- सकारात्मक सामना करने की क्षमता।
- नई चीजों को आजमाने की इच्छा।

कुछ बच्चे स्वाभाविक रूप से ऐसे ही पैदा होते हैं, जबकि अन्य को नएपन के साथ तालमेल बिठाने के लिए उन्हें आकार देना पड़ता है।

लचीलापन एक महत्वपूर्ण भावनात्मक कौशल क्यों है?

- जब बच्चा लचीला होता है, तो वह भावनात्मक रूप से लचीला होता है और जानता है कि अपने सामने मौजूद परिस्थितियों के अनुसार अपने तनाव और चिंता को कैसे प्रबंधित किया जाए।
- अपने बच्चे को लगातार नए खेलों, गतिविधियों, दोस्तों और परिवेश से परिचित कराने से उसे लचीला बनने में मदद मिलेगी।
- लचीलापन असहजता से उपजता है। इसलिए, यह जरूरी है कि आप अपने बच्चे को उसके आरामदायक दायरे में ही रहने से रोकें।
- अनुकूलनशीलता और लचीलापन उनमें धैर्य, सहानुभूति, समस्या–समाधान और टीम वर्क का विकास करते हैं, जिससे उन्हें जीवन भर मदद मिलती है।

गतिविधि – अपने बच्चे को विभिन्न जानकारीपूर्ण टीवी शो, फिल्में, गतिविधियाँ, भ्रमण, यात्राएँ आदि के माध्यम से विभिन्न व्यंजनों, खेलों, दुनिया भर के धर्म, संस्कृति और जीवनशैली के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानकारी देकर बदलाव के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण के लिए तैयार करें।

9. दूसरों के प्रति करूणा :–

- संक्षेप में, करुणा का अर्थ है गतिशील सहानुभूति।
- करुणा और सहानुभूति के बीच अंतर।
- करुणा और सहानुभूति के बीच का अंतर केवल क्रिया में अंतर है।

- सहानुभूति का अर्थ है दूसरों की धारणाओं, विचारों और भावनाओं को समझना, जबकि करुणा का अर्थ है उनकी मदद करने के लिए कुछ करना।
- बच्चे बचपन से ही सहानुभूति के लक्षण दिखाना शुरू कर देते हैं जब वे दूसरों को अपने खिलौने या नाश्ता देते हैं, दुखी होने पर दूसरों को दिलासा देते हैं, अकेले बच्चे को दोपहर के भोजन पर बुलाते हैं, जरूरतमंदों की मदद करते हैं, आदि।

करूणा ने भावनात्मक गहराई कैसे प्रदर्शित की?

करुणा दिखाने वाला बच्चा उच्च भावनात्मक समझ का प्रतीक है क्योंकि वह दूसरों की स्थिति को समझने और उनकी समस्याओं का समाधान निकालने में सक्षम होता है। इससे बच्चों को टीमवर्क कौशल, परोपकारिता, मानवता, आशावाद, उम्मीद आदि विकसित करने में मदद मिलती है। लगातार अभ्यास उन्हें यह समझने में मदद करता है कि कैसे उनका छोटा सा प्रयास एक दिन बड़ा बदलाव ला सकता है। हालाँकि उनकी सहानुभूति और करुणा उनके जीवन के अनुभवों के साथ बढ़ती है, लेकिन उनकी नींव बचपन से ही रखनी चाहिए। एक देखभालकर्ता के रूप में, यह आपकी जिम्मेदारी होनी चाहिए कि आप अपने बच्चों में बचपन से ही सहानुभूति और करुणा की भावना जगाएँ। यह भी याद रखें कि बच्चे वही सीखते हैं जो वे देखते हैं। इसलिए, यह जरूरी है कि आप उनके आदर्श बनें।

गतिविधि – उन्हें पेड़ लगाने, स्वच्छता के प्रति जागरूकता फैलाने, गरीबों या आवारा जानवरों की मदद करने, ऊर्जा बचाने आदि जैसे सामाजिक कार्यों में शामिल करें। ये सचेतन गतिविधियाँ न केवल उनमें जिम्मेदारी की भावना विकसित करती हैं, बल्कि उन्हें आने वाली पीढ़ियों की बेहतरी के प्रति भी जागरूक बनाती हैं।

10. **नेतृत्व गुण :–**

क्या आपका बच्चा किसी गतिविधि की योजना बनाने में पहल करता है? क्या आपका बच्चा संघर्षों का समाधान करने वाला और शांतिप्रिय है? क्या आपने अपने बच्चे को अपनी उदासी या गुस्से पर काबू पाते और दूसरों के नजरिए को समझने की कोशिश करते देखा है?

- तो बधाई हो! आपके घर में एक नन्हा नेता है।
- बच्चों में उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता उनके दैनिक जीवन में उनके नेतृत्व गुणों से जुड़ी होती है।

शिक्षा में भावात्मक बुद्धि का स्थान :–

आज की शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं रह सकती। भावात्मक बुद्धि को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाना आवश्यक है। इसके लिए शिक्षकों को बच्चों के साथ संवेदनशील व्यवहार करना होगा और विद्यालयों में भावनात्मक जागरूकता, सहानुभूति, संवाद कौशल और तनाव प्रबंधन जैसी गतिविधियों को शामिल करना चाहिए।

निष्कर्ष :–

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि व्यक्ति का व्यवहार ही उसे सफल बनाता है, और यह उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता के लक्षण में गहराई से निहित है। भावनात्मक बुद्धिमत्ता अलग–अलग राय, धारणा, विचार और भावनाओं वाले विभिन्न समूहों के लोगों के साथ काम करने का मार्ग प्रदान करती है और उन्हें एक साथ काम करने का

सहज अनुभव प्रदान करती है। यह कौशल आमतौर पर सरकार, खुफिया एजेंसियों, व्यवसायों आदि में आधिकारिक पदों पर आसीन लोगों में देखा जाता है। देखभालकर्ता के रूप में, यह आपका कर्तव्य है कि आप अपने बच्चों की भावनात्मक बुद्धिमत्ता को बढ़ाएँ और उन्हें इस जटिल दुनिया को समझने के लिए तैयार करें, जिससे उनका जीवन आसान हो। आर फॉर रैबिट, एक देखभालकर्ता होने के नाते हमेशा से बच्चों के स्वस्थ विकास और वृद्धि में सहायक रहा है। यह सोशल मीडिया, व्हाट्सएप पेरेंटिंग समुदाय पर इसकी विभिन्न पहलों और सूचनात्मक पोस्टों, और माता–पिता को सुरक्षा और राहत की भावना देने वाले अद्भुत बेबी गियर और उत्पादों के माध्यम से संभव हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. https://study.com.translate.goog/academy
2. https://rforrabbit.com/blogs
3. https://nobaproject.com.translate.google

Email : drhematiwari83@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 118-122

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

सरगरा समाज के लोकगीतों में संस्कृति और समाज

भारती पंवार, शोधार्थी

डॉ. मरजीना, शोध पर्यवेक्षिका एवं विभागाध्यक्ष (कला संकाय)

मौलाना आजाद विश्वविद्यालय, जोधपुर।

सारांश :-

हमारे भारतवर्ष की आधारशिला भारतीय सनातन संस्कृति जो हजारों वर्षों के आक्रमण को झेलकर आज भी हमारे जीवन के आत्मविश्वास की शाश्वत धारा में प्रवाहमान है जो हमारे जीवन का मार्ग है। ये संस्कृति हमारे जीवन के त्योहारों और परम्पराओं में जीवंत है, यह हमारे विचारों में स्वतंत्र और समावेशी है तथा किसी एक की नहीं बल्कि विविधताओं में एकता की प्रेरणा देने वाली है। अतः इसी संस्कृति की आधारशिला पर देश और समाज समृद्धि करते है।

किसी भी समाज और संस्कृति में गहरा सम्बन्ध होता है, अपनी लोक परम्पराओं और लोक संस्कृति में रचा बसा एक समाज सरगरा भी है, जिसके लोकगीत न केवल मनोरंजन का साधन है बल्कि सरगरा समाज की ऐतिहासिक परम्पराओं, समृद्ध संस्कृति, सामाजिक मूल्यों और लोक जीवन का जीवंत दस्तावेज भी है ये लोकगीत सरगरा समाज के जीवन, धार्मिक आस्था, प्रकृति प्रेम, नैतिक मूल्यों और मातृभूमि के प्रति प्रेम व समर्पण के विभिन्न भावों को दर्शाती है। हम सरगरा समाज के लोकगीतों के माध्यम से समाज के विभिन्न पहलुओं में सामाजिक संरचना, धर्म, परिवार, नैतिकता, सामाजिकता, प्रकृति प्रेम, अध्यात्म, भक्ति व वीरता का विश्लेषण करेंगे साथ ही यह भी समझने का प्रयास करेंगे कि ये लोकगीत आधुनिक समय में भी प्रासंगिक है और सांस्कृतिक संरक्षण में इनका अमूल्य योगदान है।

मुख्य बीज :- संस्कृति, समाज, रीति रिवाज, वीरता, लोक परम्पराएँ, लोकगीत, सांस्कृतिक।

- सरगरा समाज के लोकगीत समाज की सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना का चित्रण करते हैं, यह केवल मनोरजन का साधन नहीं है।
- ये लोकगीत सामाजिक मूल्यों, संस्कृति, धार्मिक आस्था, नैतिकता आदि मूल्यों को प्रोत्साहित करते है साथ ही अपनी संस्कृति के संरक्षण के लिए तथा तत्कालीन और आधुनिक समाज दोनों के लिए प्रासंगिक व लोकहितकारी है।
- लोकगीत किसी भी समाज के सांस्कृतिक समन्वय, धार्मिक सहिष्णुता तथा परम्पराओं व पारिवारिक सहयोग एवं अन्य धर्म व संस्कृति के समन्वय भाव को दर्शाते है।

- लोकगीत संस्कृति के सरंक्षक होते हैं ये साहित्य, कला, समरसता, लोकानुभूति, सामाजिक एकता के साथ–साथ किसी भी समाज की संस्कृति का प्रतिबिम्ब होते है जो एक कंठ से दूसरे कंठ में प्रेषित होकर संस्कृति को संरक्षित करते है।
- संचार क्रांति के कारण आधुनिक समय में डिजिटल तथा विभिन्न सांस्कृतिक मंचो के माध्यम से लोकगीतों का सरंक्षण प्रचार तथा सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान विश्व पटल पर बनाना संभव है।

सरगरा समाज परिचय :–

सरगरा समाज राजस्थान की पावन भूमि पर अपनी संस्कृति को संरक्षित रखते हुए, अपने अस्तित्व की तलाश में निरन्तर संघर्ष करता हुआ एक विशेष जाति समूह है, सरगरा समाज की परम्पराएँ, रीति–रिवाज और लोकगीत न केवल सामाजिक पहचान बल्कि सांस्कृतिक जीवन के भी आधार स्तम्भ हैं। सरगरा समाज मुख्यतः भारत के विभिन्न राज्यों राजस्थान, गुजरात, मुम्बई, दिल्ली, मध्यप्रदेश के अलावा प्रवासी भारतीय के रूप में दुबई, कनाडा आदि देशों में भी निवास कर रहा है। हमारा देश विभिन्न धर्मो, संस्कृतियों का पोषक रहा है, यहाँ विभिन्न धर्मो ने अपनी संस्कृति व मान्यताओं को पुष्पित व पल्लवित किया है यहाँ की संस्कृति और गौरवशाली इतिहास विश्व प्रसिद्ध है, इसी संस्कृति के संरक्षक लोकगीत है। लोकगीत समाज और संस्कृति के अभिन्न अंग है तथा मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचरित होते है। जन्म, विवाह, मांगलिक कार्यों, रातिजोगा जागरण, भजन, कीर्तन आदि हर अवसर पर ये 'लोककंठ' को गुजायमान करके नवीन ऊर्जा का संचार करते है ये लोकगीत सिर्फ उत्साह या मनोरंजन तक सीमित नहीं है बल्कि अध्यात्म, भक्ति, प्रेम, कुटुम्ब स्नेह, सामाजिक शिक्षा, प्रकृति प्रेम, नैतिकता, सांस्कृतिक मूल्यों को सम्प्रेषित करके मानव कल्याण और अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम की धार्मिक आस्था के प्रबल माध्यम है।

सरगरा समाज के लोकगीतों में संस्कृति व समाज के तत्वों का गहन विश्लेषण करके लोकगीतों के महत्व को समझना है कि किस तरह यह हमारी संस्कृति का हमें ज्ञान कराते है।

सरगरा समाज, लोक संस्कृति को प्रतिबिम्बित करता ऐसा समाज है जिसने अध्यात्म भक्ति व मानव कल्याण की भावना को सर्वोपरि माना। सरगरा समाज के लोकगीतों में भोमिया जी को वीर जी कहा जाता है। राठौड़ी सरगरा, रणबंका वीर भी कहा जाता है। यह लोकगीत इतिहास, सामाजिक मूल्यों व संस्कृति को दर्शाते है शौर्य, सम्मान, प्रेम, भक्ति का जीवंत प्रमाण है लोकगीत जो मौखिक परम्परा में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होते है राव, भाट, चारण के मौखिक स्त्रोतों से लोक कथाओं, गाथा, दोहो, छंदो से किसी संस्कृति की मौखिक परम्पराओं का सांस्कृतिक रूप प्रतिबिम्बित होता है।

'चाँदणी चौदस रा भागीरथ, जन्मया जन्मया वार सोमवार।'

भागीरथ जन्म की जानकारी लोकगीत में मिलती है। भैरूजी की महिमा में कई गीतों से कुलरक्षक देवता बताया गया है, जहाँ नारी अपने ममत्व की दुहाई देकर कुलदीपक की आशा रखती है।

सरगरा समाज के लोकगीत में भक्त बनकर अध्यात्म अपनाकर भक्ति के मार्ग पर चलकर माताजी की आराधना सेवक बनकर करना उनकी पूजा करना लोकगीतों में दृष्टिगोचर होता है–

''**अब जागो म्हारा दीवला, कुलदेवी रे महल में।**''

माताजी की ज्योत लगाते हुए गाया जाता है।

''**कुंकू पत्री छाप दो लिख दो, सब देवताओं रो नाम।**''

मांगलिक कार्यो में कुंकू पत्री पर देवताओं का नाम लिखकर मंदिर में रखा जाता है ताकि बिना किसी बांधा के कार्य पूर्ण हो सके। लोकगीत विभिन्न अवसरो पर गाए जाते है जिनमें सरगराजी माताजी की सेवा करते है।यह गाया जाता है। हर मांगलिक अवसर पर शुभ कार्यों में नवीन कार्य की शुरूआत में, विवाह में बँधावा गाया जाता है जो सरगरा समाज की संस्कृति को दर्शाता है।

सरगरा समाज के वीर देवता के गीत गाए जाते है जिन्हें वीर देवता तथा भोमिया जी को भी वीर कहा जाता है।

भोमिया जी तलवारा री लगी धना धोर।

राठौड़ी सर्गरा शिष पड्या धड़ धुजिया।।

यहां ऐसे लोकगीत सरगरा समाज की मातृभूमि के प्रति प्रेम, वीरता तथा रणभूमि के युद्ध कौशल का पता चलता है, यहां भोमियाजी की पूजा करना, विवाह में जात लगाना, नवरात्री व अन्य मांगलिक अवसरों पर लोकगीत का गायन करना सरगरा समाज की संस्कृति का हिस्सा रहा है।

पाछे गिरो तो म्हारो कुल लाजे, लाजे-लाजे म्हारी मायरी।

झरणी रो दूध लाजे भय्या ने लाजे मेणिया।।

सरगरा समाज में वीरों की पूजा भोमिया जी के रूप में होती है माना जाता है कि युद्ध में पीछे हटने से अपनी माँ के दूध की लाज और भाईयों को उलाहना मिले इससे अच्छा युद्ध के मैदान में वीरगति को प्राप्त होना माना गया है। सरगरा समाज के लोकगीतों में प्रथम पूज्य विनायकजी का गीत, विरद की गार, मेहंदी, सावा गीत, पाट बैठाना, बंदोली, मायरा, तोरण के गीत, सात फेरों के गीत, सीख और जात देने के गीत सभी गीतों में सरगरा समाज के वैवाहिक रीति–रिवाजों की जानकारी मिलती है बंधावा गीतों में, रातिजोगा गीत में बायासा, भोमिया जी, रामदेव जी, केसरियाकवल, मोर्यध्वज, नारसिंग जेतल, पाबूजी, अंचलाजी खिवराणा, राउलमाल, काचमराणा, कस्तुरी, सीकमाता, कुकड़ा आदि कई लोकगीतों में सरगरा समाज की सांस्कृतिक व ऐतिहासिक जानकारी मिलती है। अतः धर्म, संस्कृति, रीति रिवाज परम्पराओं का ज्ञान हमें इन लोकगीतों के माध्यम से होता है। विवाह के रीति रिवाजों, लोक परम्पराओं से सामाजिक व सांस्कृतिक महत्त्व प्रतिबिम्बित होता है।

''**राठौड़ो सू आया, उगता सुरज बिड़ला**''।

इसमें सावा भेजने का लोकगीत है

'**म्हाने नारेला रा, रूख प्यारा लागे।**'

मांगलिक अवसरो पर बंधावा गीत है :–

विरदा आई, राठौड़ो रा आगणे, भाटियो री पोल सु, आओ विरदा बंधावा विरद।।

विरदा आने पर (सावा) गीत गाया जाता है कि राठौड़ सरगरा के यहाँ से भाटियों की पोल भाटी सरगरा

के यहाँ विरदा आई हे आओ हम सभी मिलकर विरदा का बंधावा करे, मांगलिक गीत गाए जाते है।

सोना रा सेवरिया बन्ना रा बाबोसा मुलावे

सेवरा (माला) पहनाते है तब गाया जाता है।

नेनकियों बाजोटियों मोतिडा सु जड़िया :–

पाट (बाजोट) पर बैठाने पर यह लोकगीत गाया जाता है, अलग–अलग अवसर पर हल्दी, मेहंदी, विनायक जी, कवारी जात, उखड़ी बंधावा, चंवरी, फेरे, डेरा, मामेरा, पगफेरा, जात लगाना आदि सभी अवसर पर अलग–अलग लोकगीत गाए जाते है जिससे इस समाज की समृद्ध संस्कृति व समाज की परम्पराओं का ज्ञान होता है। विभिन्न त्योहार, उत्सव, व्रत में भी कई लोकगीत गाए जाते है।

बाई गंवरा, बाई ईसर, वर आया पावणा :–

गणगौर के व्रत के समय गाया जाता है, सरगरा समाज की महिलाएँ ईसर, गणगौर की पूजा 16 दिन तक करती है व्रत, उद्यापन भी किया जाता है।

आई आई सावणीयारी तीज :–

तीज के अवसर पर सुहागिन महिलाओं द्वारा तलाई की पूजा करना, कथा करना, निर्जल रहकर व्रत करना, झूला झूलना, सातू का भोग लगाना, चांद को अर्ध्य देना आदि कार्यो से यह व्रत भी त्योंहार की तरह मनाया जाता है।

एकादशी का व्रत, तुलसी पूजन आदि विभिन्न अवसरों पर लोकगीत गाए जाते है। साथ ही श्री विष्णु जी को आराध्य मानकर अन्नत चतुदर्शी का व्रत करके पूजा की जाती है। लोकगीत गाए जाते है। सरगरा समाज में साधु संतो की वाणी जी से भक्ति, ज्ञान नैतिकता के साथ ही जीवन मूल्यों के ज्ञान की प्राप्ति होती है यहाँ नवलराम जी रामस्नेही संत (गागुड़ा) गुलाबदास जी (पलासनी), कस्तुरनाथ जी (हनुमान टेकरी) पीताम्बरनाथ जी, रामनाथ जी (खंद्रा), अन्नादास जी (जोधपुर), संग्रामदास जी (शंखावली), लक्षानंद जी, आदुराम जी, आत्माराम जी (अजमेर), मूलचंदजी मकवाना (चित्तौड़गढ़), मदननाथजी (आउवा), मांगुनाथ जी (देसुरी), फौजारामजी (सुमेरपुर) आदि कई सरगरा समाज के महात्मा व संत हुए जिन्होंने अपनी ज्ञान चर्चा, अमृत वाणी व नीति उपदेशों से सरगरा समाज को हमेशा लाभान्वित किया है।

सरगरा समाज के लोकगीत भजन, गुरुवाणी आदि इस समाज की सांस्कृतिक धरोहर तथा समृद्धि के प्रतीक है, जो इस समाज की संस्कृति को उसकी आत्मा को जीवंत रखते हुए उसे गौरानुभुति अनुभव कराते है। सरगरा समाज के लोकगीत इस समाज की सांस्कृतिक विरासत है। यह समाज आज भी अपनी जड़ों से जुड़ा हुआ है।

निष्कर्ष :–

सरगरा समाज के लोकगीत उनकी संस्कृति, समाज और इतिहास का आईना हैं। यह लोकगीत केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि जीवन के हर पल, उत्सव और संस्कृति के साक्षी हैं। इन्हें संरक्षित और प्रलेखित करना न केवल सरगरा समाज की पहचान को जीवित रखेगा, बल्कि भारत की सांस्कृतिक विरासत को

भी समृद्ध करेगा। अतः सरगरा समाज सामाजिक, सांस्कृतिक दृष्टि से एक समृद्धशील समाज है जिसके रीति रिवाज, परम्पराएँ, लोकगीत अध्यात्म भक्ति उस समाज के आधार स्तम्भ है जिसके कारण सरगरा समाज आज भी अपनी सांस्कृतिक विरासत को सहेजकर परस्पर अपनी पहचान बनाए हुए है।

संदर्भ :–

1. लोक साहित्य विज्ञान, डॉ. सत्येन्द्र।
2. राजस्थानी व्याकरण और साहित्य का विज्ञान, श्री सीताराम लालस।
3. राजस्थान के लोकगीत भूमिका, विजय शर्मा, रामसिंह, सूर्यकरण पारीक, नरोत्तमदास स्वामी।
4. सूर्यवंशी सगर राजपूत मराठा, रणजीत निवृत्ती ताम्हाणे।

ई–मेल – marjeenamarjeena9@gmail.com

ई–मेल – bhartipanwar81985@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 123-127

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

गीतांजलि श्री का कथा साहित्य : 'बेलपत्र' कहानी के विशेष संदर्भ में

कुमारी बबिता यादव, शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार।
डॉ0 पुष्पा कुमारी, शोध निर्देशिका
सुन्दरवती महिला महाविद्यालय, भागलपुर, बिहार।

शोध सारांश :-

गीतांजलि श्री ने अपने कई कहानियों तथा उपन्यासों में स्त्री को मुख्य बिन्दु बनाया है। स्त्री शब्द अपने आप में एक व्यापक शब्द है, जो अपने अंदर कई चेतनाओं, जागृति तथा त्याग भावना को समेटे हुए है।

एक ओर नारी को सम्मान तथा आदर के रूप में प्रस्तुत किया जाता है तो वहीं आज ही नहीं बल्कि ऐतिहासिक काल से स्त्री हीनभावना, दैन्यभाव तथा पुरूष प्रधान समाज में विलासिता और हेय की वस्तु ही रही है।

गीतांजलि श्री की कहानी ''बेलपत्र'' एक ऐसी ही कहानी है जो मनुष्य के जीवन में मौजूद भावनाओं और संबंधों को बेल के पत्तों के माध्यम से दर्शाती है। यह कहानी एक पत्र के इर्द–गिर्द घूमती है जो अपनी आस्था और परंपराओं के बीच जूझ रहा है। यह कहानी न केवल व्यक्तिगत यात्रा है' बल्कि यह भी दिखाती है कि हमारी मान्यताऐं और परम्पराऐं हमें कैसे प्रभावित करती हैं। 'बेलपत्र' कहानी में गीतांजलि श्री ने मनुष्य के जीवन के जटिल रिश्तों और भावनात्मक पहलुओं को उजागर किया है। कहानी में पात्र आस्था और परंपराओं के बीच फँसा हुआ है। बेल के पत्तों को एक प्रतीक के रूप में इस्तेमाल किया गया है जो मनुष्य के जीवन में आने वाली विभिन्न परिस्थितियों और भावनाओं को दर्शाता है। इस कहानी में गीतांजलि श्री ने दो विभिन्न धर्मों के युवक–युवती के प्रेम में पड़कर उनके वैवाहिक जीवन को दिखाया है। गीतांजलि श्री ने धर्म, जाति और परंपरा से उठकर दो प्रेमियों को बंधन में बँध जाने में जगदीश काका जो कि फातिमा को अंग्रेजी पढ़ाते थे का सहारा लिया जिन्होंने उन्हें आगाह किया कि विवाहोपरांत कैसी–कैसी मुश्किलें आने वाली हैं। 'बेलपत्र' कहानी की नायिका फातिमा और नायक ओम मुस्लिम और हिन्दु धर्म के अंतरधर्मीय विवाह तो किया परंतु जैसे–जैसे दिन बीतते हैं फातिमा को लगता है कि दूसरे धर्म में विवाह करने के कारण उसने अपनी पहचान खो दिया है और ओम उस पर अपना धर्म थोपकर उसकी पहचान छीन रहा है।

'बेलपत्र' कहानी में भी 'फातिमा और ओम' का एक दूसरे से विवाह करना दोनों की मर्जी थी परंतु फातिमा

को ओम की तुलना में ज्यादा त्याग करना पड़ा। वह अपने माता–पिता से तो अलग हुई ही, अपने ससुराल में भी उसे बहुत कुछ सहना पड़ा। यहाँ तक कि कभी–कभी ओम भी उसके नमाज पढ़ने और माता–पिता से मिलने पर गुस्सा हो जाया करता था। सिर्फ इसलिए कि वह एक स्त्री है। कहीं न कहीं आज भी स्त्रियों में पुरूष सत्ता का डर समाया हुआ है।

कहानी बेलपत्र के माध्यम से जीवन की गहराइयों को समझने में मदद करती है। कहानी पाठकों को यह सोचने पर मजबूर करती है कि हमारी मान्यताएँ और परम्पराएँ हमारे जीवन को कैसे प्रभावित करती हैं।

गीतांजलि श्री की लेखन शैली गंभीर, चिंतनशील और प्रेरणादायक है।

बीज शब्द :– परंपराओं, भावनात्मक, चेतनाओं, जागृति, दैन्यभाव।

प्रस्तावना :–

गीतांजलि श्री समकालीन महिला लेखिकाओं की श्रृंखला में एक बहुचर्चित लेखिका रहीं है।

समकालीन लेखन में उन्होंने अपनी एक अलग पहचान बनाई है। उनकी 'वैराग्य', 'अनुगूँज', 'मार्च', यहॉ हाथी रहते थे' और' प्रतिनिधि कहानियाँ, पाँच कहानी संग्रह हैं। उन्होंने कई बहुचर्चित उपन्यास भी लिखे।

उनके द्वारा रचित उपन्यास 'रेत समाधि' के लिए 2022 को अंतर्राष्ट्रीय बूकर पुरस्कार मिला है। यह हिन्दी साहित्य क्षेत्र के लिए गर्व की बात है। गीतांजलि श्री के साहित्य में नारी जीवन को केंद्र में रखते हुए आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, सांप्रदायिक वृद्धावस्था, पर्यावरण एवं मनोवैज्ञानिक आयामों पर चिंतन एवं सृजन परिलक्षित होता है। उनका कथा साहित्य काल्पनिक न होकर यथार्थ की भूमि पर स्थित है। उनकी ऐसी ही एक कहानी है– 'बेलपत्र' जिसका हम अवलोकन करेंगे।

गीतांजलि श्री का कथा साहित्य :–

हिन्दी साहित्य में महिलाओं का आगमन सठोत्तरी युग में नई सोच के साथ हुआ। महिलाओं ने घर की चार दीवारी से बाहर आकर सोचने का कार्य किया और साहित्य में अपने पद चिन्हों को कायम किया। ऐसे महत्वपूर्ण लेखिकाओं के क्रम में गीतांजलि श्री का अपना महत्वपूर्ण योगदान रहा है। नारी त्रासदी, उत्पीड़न, समाज में होने वाली धार्मिक पाखंडो को लेकर वास्तविक घटनाओं के आधार पर कहानी और उपन्यासों में रेखा ंकित किया है और साथ ही वृद्धावस्था आदि विषय इनके साहित्य का आधार रहा है। अपनी लेखनी में वे कुछ सीधे–सीधे नहीं कहतीं हैं। उनकी भाषा शैली गंभीर व गहरी है जिसे समझना पाठकीय सजगता की माँग करता है। नाम, दरार, वैराग्य, तितलियाँ, शांतिपीठ, चकरधिन्नी जैसी कहानियाँ इसके उदाहरण हैं। पाठक वर्ग इनके साहित्य को पढ़ने के बाद समय और संदर्भ का अनुमान लगा सकते हैं। इसलिए पाठक वर्ग इनके साहित्य के प्रति आकर्षित रहता है। यही एक लेखक की चाहत भी होती है।

बेलपत्र का कथानक :–

गीता ंजलि श्री की पहली कहानी 'बेलपत्र' का प्रकाशन 1987 ई0 में हंस पत्रिका में हुआ। इस कहानी में एक प्रगतिशील मुस्लिम स्त्री (फातिमा) एक हिन्दू युवक (ओम) से प्रेम विवाह करती है तो किस प्रकार समाज में व्याप्त सांप्रदायिकता के काँटे उसे जगह–जगह लहू लुहान कर देते हैं। समाज ने, परिवार के लोगों ने दोनों के विवाह का जबरदस्त विरोध किया था लेकिन इन्होंने सबको नजरअंदाज करके यह विवाह किया। दोनों ने प्रेम विवाह तो बहुत जोश में आकर किया लेकिन अब फातिमा घबराने लगी थी। उसे डर लग रहा था–समाज

से, हर व्यक्ति से।

जब फातिमा विवाह कर ओम के घर आयी तो उसकी माँ ने उसे सहर्ष बहू के रूप में स्वीकारा था और बेटी की तरह उसे प्यार दिया। माँ का प्यार पाने और उनके दिल में जगह बनाने के लिए फातिमा ने भी हर संभव कोशिश की थी, लेकिन माँ की मृत्यु के बाद वह खुद को बहुत अकेला महसूस करने लगी थी। उसे परिवार का प्यार चाहिए इसके लिए वह तरस जाती है। घर में काम करने वाली बाई, सब्जी लाने वाले व्यक्ति, धोबी, दुकानदार सब उसे ऐसे देखते हैं जैसे उससे कोई अपराध हुआ हो। वह अपनी पहचान के साथ–साथ अपनों को भी खो चुकी है। ''ओम मैंने समाज से लड़ाई की थी, वह मुझे बदनाम करें, मेरा बहिष्कार करें, मैं सब सह सकती हूँ पर माँ–बाप से अलग होना। ''उसे बाहरी दुनिया की अपेक्षा पारिवारिक परिस्थितियों से अधिक जूझना पड़ता है।

ओम और फातिमा धर्मनिरपेक्ष और मानवतावादी होकर जीने मरने की कसमें खाते हैं परंतु धर्म का ही हिस्टीरिया उनके भविष्य में दीमक की तरह लग जाता हैं। दुनिया के नकली, रीति–रिवाजों, धर्म–भेदों को तोड़ने के आदर्श ने उसकी शादी कारवाई थी। उस वक्त उस पर डटे रहने का विश्वास उसके मन में होता है पर शादी के बाद हवा की फुर्र–सा उड़ जाता है। फातिमा यथार्थ की जमीन पर उड़ जाती है। समाज किसी को बदलने नहीं देता, रिश्ते किसी को बदलने नहीं देते। वह फिर–फिर व्यक्ति को विवश करते हैं और इस विवशता को तोड़ना कठिन होता है।

आस्था और परंपरा :–

हिन्दी में गीतांजलि श्री ने अपने उपन्यास 'रेत समाधि' में यह रेखांकित करती हैं कि भारतीय भावना भारत की सरहद तक सीमित नहीं है, वह भारत की सरहद को पार कर अंतर्राष्ट्रीय आधार ग्रहण करती है। इसके लिए अस्सी साल की उम्र वाली वृद्धा का इतिहास हमारे सामने खोला जाता है। इसमें हिन्दू–मुसलमान भेदभाव की दीवार तोड़ने की प्रक्रिया संजीदगी से उकेरी गई है।

वैसे ही उनकी कहानी 'बेलपत्र' में हिन्दू–मुसलमान के बीच हुई शादी के फलस्वरूप उत्पन्न जीवन संघर्ष अंकित है। इस्लाम धर्म की फातिमा को हिन्दू धर्मावलम्बी पति के घर हिन्दू धर्मं के अनुष्ठानों के पालन करने के लिए प्रेरित किया जाने लगा। शादी के बाद पति अपने धर्म के आचरणों को बड़ी निष्ठा से पालन करने लगा, लेकिन वह फातिमा को उसके अपने धर्म का अनुसरण करने की अनुमति नहीं देता, बल्कि उसका घोर विरोध करता है। गीतांजलि श्री ने यह जाहिर किया है कि पुरूषसत्तात्मक व्यवस्था में अंतरधार्मिक अनुष्ठानों की गुंजाइश होती ही नहीं है। स्त्री अपने धर्म की आस्था और परंपरा से दूर होती चली जाती है।

'बेलपत्र' और स्त्री मनोविज्ञान :–

गीतांजलि श्री की कहानी 'बेलपत्र' स्त्री विमर्श पर आधारित है। इस कहानी में स्त्री अपने जीवन की जटिलताओं, भावनाओं, परंपराओं, समाज तथा परिवार से संघर्ष करती नजर आती है। गीतांजलि श्री का 'माई' उपन्यास इसका एक उत्कृष्ट उदाहरण पेश करता है। लेखिका इस कहानी के माध्यम से परंपराओं और रीति–रिवाजों के आड़ में महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों और शोषण का चित्रण किया है।

बेलपत्र के पात्र :–

'बेलपत्र' कहानी में फातिमा, ओम, जगदीश, काका और सन्नो चाची मुख्य पात्र हैं।

कहानी में फातिमा एक घायल जीव की तरह है जो समाज से डरती है और सन्नो चाची जो एक बार मजाक में कहती है कि वह आवाज सुनकर बता सकती है कि कौन सी आवाज हिन्दू की है और कौन मुसलमान की, कहानी में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जगदीश काका का योगदान कहानी के भावनात्मक और पांरपरिक पहलुओं को उजागर करने में महत्वपूर्ण है। वे उन मान्यताओं को दृढ़ता से पकड़े हुए हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। कहानी में ओम एक महत्वपूर्ण किरदार है जिससे स्त्री–पुरूष संबंधों, भावनाओं और संघर्ष को दर्शाया गया है।

बेलपत्र में संवाद योजना एवं कथोपकथन :–

गीतांजलि श्री की कहानी 'बेलपत्र' में संवाद योजना और कथोपकथन कहानी को जीवंत बनाती हैं। भाषा स्वाभाविक और वास्तविक होते हैं जो कहानी को अधिक प्रामाणिक बनाते हैं। कथोपकथन में सूक्ष्मता होती है, जो पात्रों के आंतरिक संघर्षों और भावनाओं को दर्शाती है। इस कहानी में अप्रत्यक्ष संवादों का भी उपयेाग किया जाता है, जहां पात्र कुछ कहते नहीं है, लेकिन उनके हाव–भाव और मौन से उनकी भावनाएँ व्यक्त होती हैं। कहानी में फातिमा का संवाद, ''मैं कुछ नहीं कर रही हूँ। उल्टा चोर कोतवाल को ———''यह दर्शाता है कि वह अन्याय के खिलाफ हैं और अपनी स्थिति को व्यक्त करने के लिए संघर्ष कर रही है। अन्य पात्रों के संवादों से उनकी धार्मिक मान्यताओं, सामाजिक अपेक्षाओं और व्यक्तिगत अनुभवों का पता चलता है। कहानी की संवाद योजना और कथोपकथन कहानी को गहराई और अर्थ प्रदान करता हैं।

बेलपत्र में वातावरण अथवा परिवेश :–

गीतांजलि श्री की कहानी 'बेलपत्र' में वातावरण और परिवेश एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह कहानी एक मिश्रित–धार्मिक जोड़े के प्रेम विवाह में सांप्रदायिक तनाव तथा अलगाव को उजागर करती है, जहां धार्मिक मान्यताऐं और रीति–रिवाज एक बड़ी बाधा बन जाते हैं।

पारिवारिक और सामाजिक चुनौतियों के साथ शहर का माहौल है जहां विभिन्न धर्मों और संस्कृतियों के लोग रहते हैं उनके बीच तनाव और अविश्वास भी मौजूद है। कहानी में वातावरण बहुत ही सजीव है और पाठक कहानी में खो जाता है।

बेलपत्र' में शैली और शिल्प :–

'बेलपत्र' में नारीवादी दृष्टिकोण एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो स्त्री–पुरूष संबंधों और सामाजिक अपेक्षाओं पर प्रकाश डालता है। कहानी में नारी पात्रों को पारंपरिक भूमिकाओं से परे, अपनी भवनाओं, इच्छाओं को व्यक्त करते दिखाया गया है, जो एक नारीवादी दृष्टिकोण का संकते है।

कहानी में स्त्री–पुरूष संबंधों को एक नए नजरिए से देखा जाता है। यह पारंपरिक 'पुरूष प्रधान' दृष्टिकोण से हटकर, स्त्री और पुरूष दोनों की भावनाओं और इच्छाओं को समान महत्व देता है। कहानी में, सामाजिक अपेक्षाओं और दवाबों को भी उजागर किया गया है, जो महिलाओं के जीवन को प्रभावित करते हैं। यह कहानी इन अपेक्षाओं पर सवाल उठाती हैं और महिलाओं को अपनी शर्तों पर जीवन जीने के लिए प्रेरित करती हैं। 'बेलपत्र' कहानी में गीतांजलि श्री का नारीवादी दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। यह कहानी न केवल महिलाओं के अधिकारों और स्वतंत्रता की वकालत करती है बल्कि यह भी दर्शाती है कि कैसे सामाजिक संरचनाएँ और अपेक्षाएं महिलाओं के जीवन को प्रभावित करती हैं।

निष्कर्ष :-

'बेलपत्र' कहानी में निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि यह कहानी मनुष्य के जीवन में मौजूद भावनाओं और संबंधों, विशेष रूप से आस्था, परंपरा और भावनात्मक जुड़ाव के महत्व को दर्शाती है। यह एक विचारोत्तेजक कहानी है जिसमें प्रेम भी है, आस्था और परंपरा के साथ संघर्ष भी है, एक व्यक्तिगत यात्रा भी है, जो पाठक को अपने जीवन के बारे में सोचने और अपनी मान्यताओं पर सवाल उठाने के लिए प्रेरित करती है।

संदर्भ संकेत :-

1. https://wwww.hindisamay.com
2. वही।
3. वही।
4. वही।
5. वही।

मो0 नं0 – 8709192044

ई–मेल – babita51177@gamil.com

मोबाईल नं0 – 7004531201

ई–मेल – pushpa201073@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 128-134

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मंजूर एहतेशाम के कथा साहित्य में धार्मिकता और पिछड़ापन : मध्य वर्ग के विशेष संदर्भ में

शमीम. पी, शोधार्थी,
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, यूनिवर्सिटी कॉलेज, तिरुवनंतपुरम, केरल–695304

मंजूर एहतेशाम हिन्दी, उर्दू अदब के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। एहतेशाम के व्यवहार एवं व्यक्तित्व में ही साहित्य व संस्कृति की. झलक दिखाई देती है। वह एक ऐसे समर्पित लेखक हैं जिनके व्यक्तित्व में मानवतावाद की झलक है। उनका किसी विचारधारा की ओर झुकाव उनके मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण है। इसलिए उनका मार्क्सवाद और गांधीवादी जैसे वैचारिक दृष्टिकोण उनकी विचारधारा रही है। मंजूर एहतेशाम का जन्म भोपाल में 3 अप्रैल 1948 को मध्यवर्गीय मुस्लिम परिवार में हुआ। साहित्य की ओर झुकाव बचपन से ही था। लेखक ने बारह वर्ष की उम्र से लिखना शुरू कर दिया था।

मंजूर एहतेशाम के लेखन का केन्द्र मध्यवर्गीय मुस्लिम समाज है। लेखक लेखन को साँस लेना जैसा कहते हैं। लेखन कर्म के विषय में स्वयं मंजूर एहतेशाम कहते हैं कि, ".....हम सब अपने–अपने इतिहास में विराजते हैं, सांझा समय की अलग–अलग अनुभूतियां हमारा प्यार, नफरत या लापरवाही सब के स्त्रोत कहीं अतीत में है, और जीते–जी जो उतना प्रत्यक्ष नहीं होता बहुत महत्वपूर्ण होते हुए भी लेखन कर्म का दायित्व, बिना शोर मचाए इसी को रेखांकित करना होता है.....।'[1] अर्थात् एक साथ व्यतीत किए गए समय के सबको अलग–अलग अनुभव होते हैं। इस अनुभव का वर्णन करना लेखन कर्म है। मंजूर एहतेशाम ने अनेक उपन्यासों और कहानियों के साथ नाटक साहित्य भी लिखा। लेकिन नाटक साहित्य उनकी स्वतन्त्र रचना न होकर उनके दोस्त सत्येन के साथ लिया गया है। उपन्यासों में 'कुछ दिन और', 'सूखा बरगद', 'दास्तान–ए–लापता', 'बशारत मंजिल', 'पहर ढलते', 'मदरसा' उपन्यास शामिल हैं। कहानियों में दो कहानी संग्रह लिखे गए हैं : 'तमाशा' तथा अन्य कहानियां और 'तसबीह'। नाटक साहित्य जिसके सह लेखक सत्येन हैं, वह हैं 'एक था बादशाह' और 'गौतम'।

धर्म समाज का अनिवार्य तत्त्व है। व्यक्ति अपने आन्तरिक और बाह्य व्यक्तित्व के विकास के लिए जिसे धारण करता है, वहीं धर्म कहलाता है। जीव, आत्मा और परमात्मा धर्म में स्वतः ही समाहित हो जाते हैं। इस प्रकार धर्म इस लोक और उस लोक से जुड़ जाता है। व्यक्ति आत्मा की शान्ति और ईश्वर प्राप्ति के लिए जो रीति नीतियां अपनाता है, वे धार्मिक रीतियाँ कहलाती हैं परन्तु कई बार व्यक्ति अज्ञानता, अंधविश्वास, स्वार्थ तथा संकीर्ण विचारों से वशीभूत होकर अनेक उन रीति–नीतियों को भी धर्म के नाम पर अपना लेता है, जिनका कि

धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता है। वह रीति–नीतियाँ धार्मिक रूढ़ियाँ कहलाती हैं और धर्म के स्वरूप को खण्डित करती है। धर्म के नाम पर प्रचलित ऐसी ही अनेक रूढ़ियों का चित्रण 'मंजूर एहतेशाम' ने अपने कथा साहित्य में किया है।

लगभग सभी समाजों में धार्मिक रूढ़ियों एवं पिछड़ेपन से लोग आहत है। भारतीय मध्यवर्गीय मुस्लिम समाज तो रूढ़ियों से जकड़ा हुआ है। हर तरफ रूढ़ियों का जाल सा बिछा है। हर कार्य को करते समय धर्म की दुहाई दी जाती है। धार्मिक बन्धनों के अनुसार ही निर्णय लिया जाता है। इन सभी बातों का वर्णन मंजूर एहतेशाम ने अपने कथा साहित्य में किया है।

'सूखा बरगद' उपन्यास में लेखक ने मध्यवर्गीय समाज की धार्मिक रूढ़ियों और उनके पिछड़ेपन का वर्णन किया है। रशीदा और सुहेल धार्मिक शिक्षा लेने के लिए फफ के घर जाते थे। फफू धार्मिक बातों को लेकर खासी पाबन्द थी। वह अपने घर में बने मदरसा में बच्चों को सिखाती थी, विस्मिल्लाह पढ़ खाने से पहले..... क्यों यह सिर का दोपट्टा कहाँ है तेरा, बेशर्म, शैतान नंगे सिरपर धप्प लगाता है.. ।'[2] इस प्रकार फफू के माध्यम से यह बात स्पष्ट होती है कि मध्यवर्गीय समाज धार्मिक रूढ़ियों से जकड़ा हुआ है। खाने से पहले ईश्वर का नाम पढ़ना, सिर पर हमेशा दुपट्टा होना, नंगे सिर रखने से ईश्वर सिर पर मारता है आदि धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। इन्हीं परम्परागत बातों को फफू संस्कार सोचकर सिखाती है। इस्लाम में तस्वीरें खिंचना गुनाह माना जाता है, "फफू इस विषय में बच्चों को समझाती हुई कहती है, जो मरदूद तस्वीरें बनाएगा, उसे मियामत के दिन उन तस्वीरों में जान डालना पड़ेगी और खुदा के अलावा क्या कोई किसी मुर्दा शैतान में जान डाल सकता है? यह सब गुनहगार हैं, चाहे तस्वीर बनाएँ या और इनका घर जहन्नुम है।'[3] अभिप्राय यह है कि जो तस्वीर बनाता या खिंचवाता है। महाप्रलय के दिन उसे उन तस्वीरों में जान डालकर जिंदा करना पड़ता है यह कार्य केवल ईश्वर का है। व्यक्ति ऐसा कार्य कैसे कर सकता है, अगर व्यक्ति ईश्वर का कार्य करता है तो वह गुनहगार होता है। इस प्रकार फफू उन्हें धार्मिक शिक्षा देती थी।

सुहेल फफू से सवाल करता है कि उनके मदरसे में अजान (नमाज के समय की सूचना जो मस्जिद की छत या दूसरी ऊँची जगह पर खड़े होकर दी जाती है।) क्यों नहीं दी जाती है। फफू उसे बताती है कि उनके मदरसे में कोई नमाज पढ़ने वाला नहीं है। सुहेल जब फफू को नमाज पढ़ने के लिए कहता है तो फफू कहती है, 'नमाज पढ़ने वाला जिसे इमाम कहते है। कोई औरत नहीं हो सकती, सुहेल के क्यों के जवाब में फफू उसे समझाती है कि, 'क्योंकि अल्लाह और उसके रसूल ने मना किया है, वैसे आमतौर पर मजहब में औरतों को मस्जिद में जाने से भी मना किया जाता हैं।'[4] इस प्रकार कहा जा सकता है कि धर्म में स्त्रियों को लेकर भी अनेक रूढ़ियाँ प्रचलित हैं, स्त्रियों का नमाज न पढ़ना, मस्जिद में न जाना जैसी धार्मिक रूढ़ियाँ मुस्लिम समाज के पिछड़ेपन को दर्शाती है।

होली और रमजान का एक ही दिन आने पर वह रंग पंचमी और अलविदा का जुमा (शुक्रवार) एक ही दिन पर आ गए। इसका परिणाम हुआ कि शहर में हिन्दू–मुस्लिम दंगा हो गया है। रशीदा इस दंगे का कारण बताती हुई कहती है, "जिसकी खाल पर होली का रंग लग जाएगा, वह जहन्नुम में जलेगा?'[5] तात्पर्य यह है कि इस्लाम धर्म के अनुसार रंगों का शरीर पर लगना सही नहीं है। रंग पंचमी के दिन किसी हिन्दू ने रंग किसी मुस्लिम पर लगा दिया और दंगे की शुरुआत हुई इस प्रकार रशीदा के माध्यम से इन छोटी–छोटी धार्मिक रूढ़ियों

का वर्णन किया है जो कभी–कभी झगड़े का कारण भी बनती है। सुहेल और रशीदा अपनी अम्मी के मायके जाने पर अपने अब्बू वहीद खान के साथ घर में रहते हैं। सुहेल उस समय आठवीं कक्षा में पढ़ रहा था। उसे किसे ने उसके अब्बू के बारे में बताया था कि उसके अब्बू ने सुअर खाया है। वह अपने अब्बू से इस विषय में बात करता है। सुहेल को अपने अब्बू से यह उत्तर मिला कि उन्होंने सुअर खाया है। इस पर सुहेल अपने अब्बू से कहता है, 'सुअर तो खाना हराम है। कैसा ही सुअर हो, हम उसे कैसे खा सकते है, इस प्रकार सुहेल के माध्यम से धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन करते हुए धार्मिकता का छोटे से बच्चे पर प्रभाव बताया गया है। सुहेल जिसकी उम्र बारह से तेरह वर्ष के लगभग है, जानता है कि धर्म के अनुसार सुअर खाना गलत बात है और अपने अब्बू को गलत समझता है'।[6]

वहीद खान वकील होता है। वह अपने पेशे को समाज द्वारा गलत कहे जाने पर उनकी धार्मिक रूढ़ियों या रूढ़िवादी सोच का वर्णन करता हुआ अपने बेटे सुहेल को समझाता है कि, "कहा जाता है ना, कि वकीलों की कमाई हराम की होती है। सच को झूठ और झूठ को सच साबित करना ही एक वकील का सबसे बड़ा हुनर समझा जाता है। खानदान के बुजुर्गों का यह खयाल था कि वकील ईमानदारी से कुछ कर ही नहीं सकता। कमाने के लिए उसे वह हरकतें करनी ही होंगी जो मजहब की नजर में हराम है।'[7] इस प्रकार वहीद खान अपने पेशे के माध्यम से मुस्लिम समाज के लोगों की सोच और धार्मिक रूढ़ियों में जकड़े लोगों के विचार को व्यक्त करता है।

'सूखा बरगद' उपन्यास में मध्यवर्गीय समाज की पिछड़ी हुई सोच का वर्णन किया गया है। रशीदा अमेरिका से आए परवेज और रेहाना से मिलने अपनी फफू के घर जाती हैं फफू उसके घर न आने की शिकायत करती है। परवेज रशीदा का साथ देता है। वह कहता है आदमी आपस में कम मिले–जुले पर दिल में प्यार होना चाहिए। परवेज कहता है, ष्यह क्या मिलना कि दिल में तो है, नहीं जबरन हाजिरी दे रहे है। ष्इस बात के जवाब में अपने दामाद परवेज को कहती है, "यह अमरीकी ख्यालात है मियाँ हम लोग अभी काफी पिछड़े हुए हैं, इसलिए इन्हें यहां लागू नहीं किया जा सकता।ष्8 स्पष्ट है कि मध्यवर्गीय समाज की मानसिकता में पिछड़ापन है जिसे फफू स्वयं बयान करती है।

'दास्तान–ए–लापता' उपन्यास में धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। जमीर अहमद खान दुल्हन चची द्वारा मध्यवर्गीय समाज की धार्मिक रूढ़ियों को उजागर किया गया है। दुल्हन चची जमीर अहमद खान से धार्मिक पुस्तक मांगती है। लेकिन उस पुस्तक के विचार उन्हें रूढ़िगत लगते है। उस पुस्तक में व्यक्त रूढ़िगत विचारों को बताती हुई दुल्हन चची कहती है, "अरे इस किताब में अल्लाह मियाँ से ज्यादा जिक्र तो शैतान का है। जो कुछ भी बंदा करता है, शैतान के बहकावे में आकर करता है। हर अमल की जिम्मेदारी शैतान के सिर है।'[9] स्पष्ट है कि व्यक्तियों की गलतियों का जिम्मेदार शैतान को ठहराया जाता हैं दुल्हन चची समाज की इन धार्मिक रूढ़ियों का खण्डन करती है। दुल्हन चची हज करने जाती है, आकर हज के सफर और वहां पहुँचे हज में लोगों की भीड़ और लोगों की श्रद्धा का वर्णन करती हुई कहती है, "वह धक्का–मुक्की और कुश्तम–पछाड़ा कि अल्लाह की पनाह और सब जान दिए दे रहे हैं, संगे–असवद का बोसा लेने के लिए।'[9] दुल्हन चची धार्मिक रूढ़ियों को बताती हुई कहती है कि हज करने वाले लोग काबा में संगे–असवद (काबे में रखा हुआ वह काला पत्थर जिसे मुसलमान पवित्र समझते हैं और हज करते समय चुमते है।) को चुम रहे थे। लोग उसे अपनी

धार्मिक आस्था और परम्परा का निर्वहन करने के लिए चुम रहे थे। दुल्हन चची इस धार्मिक रूढ़ि का खण्डन करती हुई कहती है, "एक बड़ा–सा काला पत्थर बोसा देने वाले दीवानों के थूक में लथपथ वहाँ जड़ा है। लोग उसे चूम रहे है, चाट रहे हैं, बस नहीं चल रहा, नहीं तो शायद चवा भी डालें। हमारे मुंह ये यूँ एक बालिश्त दूर रह गया था और हम उसे चूमने ही जा रहे थे कि उस चूक के देखकर ऐसी घिन आई कि हमसे अपना मुँह अलग कर लिया।'[10] इस प्रकार दुल्हन चची के द्वारा धार्मिक रूढ़ियों का खण्डन किया गया है।

'बशारत–मंजिल' उपन्यास में अली खान की पत्नी माहरू जमानी का भाई आरिफ चित्रकला का शौक रखता था। माहरू जमानी के पिता काजी कमालउद्दीन कहते थे कि वह पहले वह धार्मिक शिक्षा ग्रहण करें और कुरान कंठस्थ करें। लेकिन आरिफ के ड्राईंग और पेटिंग के शौक के कारण वह अपने पिता की दोनों इच्छाएँ पूरी न कर सकें। वह ड्राईंग में लैंडस्केप (धरातल) का चित्र बनाता था, परन्तु धीरे–धीरे उसने इंसानों के आकार वह चित्र बनाने शुरू कर दिए, तो काजी कमालुद्दीन ने एतराज करते हुए कहा, "मुसलमानों के लिए मूर्तिपूजा ही नही, मूर्ति बनाना भी हराम था, और इंसानों के आकार कागज कैन्वस पर बनाना या उनमें रंग भरना भी।'[11] स्पष्ट है कि काजी कमालुद्दीन धार्मिक रूढ़ियों के संवाहक है। उनके धर्म के अनुसार मूर्तिपूजा और मूर्ति बनाना अनुचित है और मानव की आकृति बनाना और उसमें रंग भरना भी इस्लाम धर्म में निषेध है।

बंदा अली खान अपनी माँ जहांआरा बेगम की याद में एक शानदार मस्जिद बनाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने एक मुस्लिम अंग्रेज आर्किटेक्ट से काम करवाया जिसने तुर्की में एक बड़ी और खूबसूरत मस्जिद बनवाई थी। रियासत के अधिकारी के हाथों से मस्जिद की आधारशिला रखी। बन्दा अली के इस कार्य को लेकर उसके अलीगढ़ आन्दोलन के साथियों ने उससे कहा कि उसे मस्जिद के बजाए स्कूल बनावाना चाहिए था। मुसलमानों को शिक्षा की जरूरत बताते हुए उन्होंने कहा था, "बुनियादी जरूरत मुसलमानों में आर्थिक स्थिति सुधारने की थी। इबादत तो इंसान अकेला भी कर सकता है जिसकी संभावना बड़ी से बड़ी मजबूरी में भी, मस्जिदों और मुल्लाओं की बड़ी संख्या देखते हुए नहीं थी। नई तालीम घर बैठे नहीं हासिल की जा सकती। शिक्षा के स्तर पर मुसलमान मुल्क में बाकी लोगों से बहुत पिछड़े हुए थे।"[12] स्पष्ट है कि मुसलमान देश में शिक्षा में बहुत पिछड़े हुए थे। इसलिए मुसलमानों को मस्जिद से ज्यादा स्कूल की आवश्यकता है। मस्जिद के निर्माण के स्थान पर स्कूल का निर्माण मुसलमानों के लिए आवश्यक है।

'मदरसा' उपन्यास में साबिर और उसकी मौसी के बेटे आमिर के बीच 'दलवई' नामक व्यक्ति को लेकर बहस होती है। आमिर दलवई को मुसलमानों का दुश्मन समझता है, क्योंकि अब्दुल हमीद दलवई ने अपने किसी लेख या भाषण में कहा था कि, "भारतीय मुसलमानों को पाकिस्तानपरस्त, रूढ़िवादी पिछड़े और इनसानियत ही नहीं, खुद अपना भी दुश्मन कहा गया था, और अपने अनुभव से बताया गया था कि वह कितने झूठे और दोगले थे।'[13] इस प्रकार मुसलमानों के संदर्भ में कही गई सच्ची बात आमिर को अच्छी नहीं लगती है। साविर आमिर को दलवई की बताई बातों पर विचार करता हुआ कहता है कि, "उसका जीवन अनुभव और उसके अनुरूप दृष्टिकोण था, और वह मुसलमानों की जिन्दगी की दौड़ में बहुत पिछड़ा हुआ, और ऐसा होने के लिए गलत बहाने तलाशता बयान करता पाया था।"[14] स्पष्ट है कि अब्दुल हमीद दलवई मुसलमानों की रूढ़िवादी विचारधारा और पिछड़ेपन का सच सामने लाता है, परन्तु लोग उसे स्वीकार करने को तैयार नहीं है। उन्हें दलवई मुसलमानों के दुश्मन लगता था।

साबिर अपने पिता के गांव बरेली जाता है। वहां फफू से पिता के शिक्षा सम्बन्धी विचार जो मुसलमानों को मदरसे में दी जाती थी के खिलाफ थे, उनका उद्देश्य था, 'वह एक मदरसा कायम करना चाहता था जिसने दीन को उस तरह दुनिया से जुदा न किया जाए कि वह एक–दूसरे के दुश्मन, या प्रतिद्वन्द्वी नजर आएं।'[15] स्पष्ट है कि मुसलमानों को दीनी (धार्मिक) मदरसों में जो शिक्षा दी जाती थी इसमें समाज कहीं शामिल नहीं होता था। अतः मुसलमानों के पिछड़ने का कारण शिक्षा का समाज से न जुड़ना भी है। वकील साहब, मरियम और साबिर आपस में बातचीत कर रहे हैं। वकील टॉलस्टॉय को लेकर बात करता है। वकील की आदत थी कि वह अपनी असफलताओं के लिए कोई बहाना ढूँढ लेता है। इस बात को समझाने के लिए साबिर मुसलमानों की पिछड़ी हुई सोच का उदाहरण देते हुए कहता है, "पत्थर के ऊँचे बड़े सतूनों को शैतान का नाम देकर उस पर पत्थर की कंकरियाँ बरसाकर, हज करने वाले खुद सारी जिन्दगी बेहोशो हवास किए गुनाहों का जिम्मेदार ठहराकर और खुद को बेगुनाह समझकर सन्तुष्ट हो जाते हैं।' जिस प्रकार मुसलमान हज में जाकर शैतान को पत्थर मारते है। अपने किए सारे गुनाहों का जिम्मेदार शैतान को ठहराते हैं और खुद को गुनाह करने पर भी बेगुनाह समझते हैं। इस प्रकार साविर ने मुस्लिम समाज की पिछड़ी मानसिकता का वर्णन किया है।

साबिर टेकरी पर मदरसा खोलना चाहता है। लेकिन टेकरी की जमीन के मालिक पाँच लाख रूपये मांग रहे थे। साबिर के पास इतने पैसे नहीं थे। पैसों की मोहल्लत बढ़ाने के लिए साबिर नेताओं के पास जाता है। पहले इमरान के पास फिर गनी मियाँ के पास जाता है। वह इस उम्मीद से जाता है कि ताकि टेकरी के जमीन के मालिक से गनी मियाँ बात कर कुछ मोहल्लत और दे दें। टेकरी के आसपास लोग कब्जा कर रहे थे। साबिर के लिए कब्जा करना मुश्किल था, उसके पास पैसे नहीं थे। गनी मियाँ उसे सलाह देते हैं, "मदरसे के बारे में सोचकर रह जाने के बजाय, अच्छा होता अगर आप टेकरी पर कोई मकबरा मजार बनाकर, उस पर हर जुम्मेरात को अगरबत्ती लोवान सुगलते रहते। फिर देखते कोई आपको वहां से कैसे बेदखल करता।'[16] स्पष्ट है कि गनी मियाँ का यह व्यग्य मध्यवर्गीय समाज के प्रति है, जो धार्मिक रूढ़ियों के कारण पिछड़े हुए हैं। धर्म के नाम पर लोग वहां कब्जा छोड़ सकते हैं, परन्तु प्रगति के नाम पर सभी रुकावट खड़ी करने को तैयार बैठे हैं। गनी मियाँ साबिर को धर्म की आड़ लेकर टेकरी की जमीन पर कब्जा करने को कह रहे थे।

'रिहाई' कहानी के माध्यम से भी धार्मिक रूढ़ि का वर्णन लेखक ने किया हैं कथावाचक की माँ धार्मिक विचारों वाली महिला थी अतः उनके विचारों में धार्मिक रूढ़ियाँ मौजूद थी। उसकी माँ खुशी के साथ विजयी मुस्कान को लिए हुए घर के बच्चों को बता रही थी कि, "बेसमझ, इतने छोटे मुर्गी के बच्चों को भी एहसास है कि अजान किबला रुख हो के देना चाहिए। अभी थोड़ी देर पहले अजान दे रहा था कि मुँह किवले की तरफ करके"।[17] अभिप्राय यह है कि वह धार्मिक रूढ़ियों से इतनी जकड़ी हुई है कि वह सोचती है कि अगर धार्मिक ग्रंथों में यह लिखा है कि अजान किबला (पश्चिमी दिशा) में होकर दी जाती है और मुर्गे का पश्चिमी दिशा में बाँग लगाना धर्म का प्रभाव है समाज धार्मिक रूढ़ियों में इतना जकड़ा है कि धर्म के आगे उनकी बुद्धि तार्किक दृष्टि से सोचना बंद कर देती है।

'तसबीह' कहानी में सजिदा रमजान में दी जाने वाली जकात (गरीबों में बांटे जाने वाले धन) के लिए घर में पैसा न होने पर अपने सोने की बाली बेच देती है। उससे मिले पैसों से आसपास के घरों से आए लोगों को जकात दी जाती है। साजिदा के पति के मना करने के बावजूद भी साजिदा जकात के पैसों का इन्तजाम

कर लेती है। जब साजिदा के पति को जकात देने के विषय में जानकारी मिलती है तो वह साजिदा पर गुस्सा करता है। साजिदा कहती है, "देखिए खुदा का हुक्म हम पर फर्ज है।' अभिप्राय यह है कि साजिदा को यह लगता है कि जकात देना ईश्वर का आदेश है, उसका पालन होना ही चाहिए इसके लिए चाहे कुछ भी करना पड़े। यह मुस्लिम वर्ग की रूढ़ियों और उसके पिछड़ेपन को बताता है। साजिदा को अपनी माँ के पास ले जाकर उसका पति धार्मिक रूढ़ियों का खण्डन करते हुए कहता है, "कोई मजहब आँखें बंद करके कुएं में कूदने को नहीं कहता, कोई नहीं कहता खुद भूखे रहकर दूसरों को भीख दो।'[18] इस तरह साजिदा के पति द्वारा मुस्लिम समाज में व्याप्त रूढ़ियों को खण्डन किया है।

इस तरह कहा जा सकता है कि मंजूर एहतेशाम ने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से मध्यवर्गीय समाज में व्याप्त धार्मिक रूढ़ियों और पिछड़ेपन का वर्णन किया है। धार्मिक रूढ़ियों और पिछड़ेपन का वर्णन करने के साथ उसका खण्डन भी किया गया। है। 'सूखा बरगद' उपन्यास में धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन ईश्वर के सम्बन्ध में बनायी गई धारणा, स्त्रियों को लेकर बनाए गए कानून, मजहब में निषेध की गई बातों पर दंगे फसाद करना, और स्वयं अपने समुदाय की पिछड़ा कहने के सन्दर्भ में वर्णित है। 'दस्तान–ए–लापता' गलत कार्यों का जिम्मेदार शैतान को ठहराया जैसे धार्मिक रूढ़िवादिता का वर्णन है। धार्मिक स्थलों में जाने के लिए होड़ प्रत्येक मुसलमान फर्ज समझता है। 'बशारत मंजिल' उपन्यास में मौलवी के माध्यम से मुस्लिम समाज के लोगों का धार्मिक रूढ़ियों के कारण उनके पिछड़ने का वर्णन किया गया है। 'मदरसा' उपन्यास में धार्मिक रूढ़ि के साथ मुसलमानों के पिछड़ेपन को दर्शाया गया है। धर्म के नाम पर समाज से अपने कार्य निकालने वाले लोगों का भी वर्णन है। 'रिहाई', और 'तसबीह' कहानियों के माध्यम से धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। मध्यवर्गीय समाज को दुनिया के साथ चलने वाली शिक्षा की आवश्यकता है। तभी वह अपने समुदाय के इतर दूसरे समुदाय को समझ सकते हैं और उन्नति की ओर बढ़ सकते हैं। उनका दीनी तालीम पर केन्द्रित होना उन्हें धार्मिक रूढ़ियों के जाल में उलझाता जाता है। अतः लेखक ने पात्रों के माध्यम से कथा–साहित्य में वर्णित रूढ़ियों का खण्डन कर उन्हें व्यवहारिकता के स्थान पर लाने का प्रयास किया है। धर्म को तार्किक कसौटी पर कसकर उसके विचारों को ग्रहण करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अन्यथा (स.) कृष्ण किशोर, अक्तूबर–दिसम्बर 2012, पृ. 44
2. मंजूर एहतेशाम, सूखा बरगद, पृ. 19
3. वही, पृ. 18
4. वही, पृ. 21–22
5. वही, पृ. 44
6. वही, पृ. 55
7. वही, पृ. 55
8. वही, पृ. 66
9. मंजूर एहतेशाम, दासतान–ए–लापता, पृ. 42

10. वही, पृ. 43
11. मंजूर एहतेशाम, बशारत मंजिल, पृ. 48
12. वही, पृ. 52
13. मंजूर एहतेशाम, मदरसा, पृ. 235
14. वही, पृ. 239
15. वही, पृ. 270
16. वही, पृ. 272
17. मंजूर एहतेशाम, संपूर्ण कहानियाँ, पृ. 134
18. वही, पृ. 28

मो. 7356108164
ई–मेल : shameemriyas78@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 135-139

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण व जीवनशैली का तुलनात्मक अध्ययन

रवि वर्मा, शोधकर्ता

डॉ. संगीता अग्रवाल, शोध निर्देशिका

एसोसिएट प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

वर्तमान शोध में शोधकर्ता ने स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण व जीवनशैली का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के रूप में 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया है। जिसमें श्रीगंगानगर जिले तक सीमित रखा गया है। जिसमें 300 ग्रामीण व 300 शहरी विद्यार्थियों को लिया गया है। इस शोध के लिये सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। आंकड़ों के एकत्रीकरण के लिये मानकीकृत उपकरण का उपयोग किया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकीय विधियों के रूप में मध्यमान, मानक विचलन, टी–मूल्य एवं सह–सम्बन्ध का प्रयोग किया गया है। विश्लेषण में पाया गया है कि स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की आधुनिकीकरण व जीवनशैली में सार्थक अंतर पाया जाता है।

प्रस्तावना :–

आधुनिकीकरण के कारण लोगों की जीवनशैली में काफी बदलाव आया है। यह एक ऐसी दुनिया बन गई है जहाँ यदि आप धूम्रपान/शराब नहीं पीते हैं तो आप फैशन से बाहर हैं, जहां बच्चे छेड़खानी करते हैं और लड़कियों पर नकारात्मक टिप्पणी करते हैं, जहां परिप्रेक्ष्य और पकड़े इंसान की कीमत तय करते हैं आजकल लोग बहुत स्वार्थी हो गए हैं। आधुनिकीकरण के कारण लोगों की जीवनशैली में बदलाव एक कभी न खत्म होने वाली प्रक्रिया है जब तक तकनीकी प्रगति होती रहेगी।

आधुनिकीकरण :–

आधुनिकीकरण की विशेषताएं हैं – सबसे पहले पारम्परिक समुदायों की गिरावट आधुनिकीकरण को चिन्हित करती हैं। जिसके परिणामस्वरूप प्राथमिक समूहों के बीच बातचीत के महत्व में नाटकीय गिरावट आती है और स्कूलों में सहपाठियों जैसे माध्यमिक समूहों के बढ़ते उद्भव को बढ़ावा मिलता है। दूसरे समाज अधिक नौकरशाही युक्त होता जाता है और अंतःक्रिया को औपचारिक संगठनों द्वारा आकार दिया जाता है। नतीजतन, रिश्तेदारी और पड़ौस के पारम्परिक सम्बन्ध कम हो जाते हैं और समाज के सदस्यों में अनिश्चितता और असहायता की भावना विकसित होने लगती है। तीसरा धार्मिक समस्याऐं गति खोने लगती हैं। जैसे–जैसे जीवन आधुनिक होने लगता है लोगों को लगने लगता है कि उन्होंने अपने जीवन पर नियंत्रणा खो दिया है, इसलिए प्रतिक्रिया स्वरूप उन्होंने नए धार्मिक समूहों नए धार्मिक समूहों और समुदाय की स्थापना की।

जीवनशैली :–

जीवनशैली का मतलब लोगों के जीने के तरीके से है। जिसमें उनकी आदतें, दृष्टिकोण और व्यवहार शामिल है। स्वस्थ जीवनशैली अपनाने से कई लाभ हो सकते हैं जैसे बीमारियों के जोखिम को कम करना मानसिक स्वास्थ्य और कल्याण में सुधार और दीघार्यु में वृद्धि। जीवन की अच्छी गुणवत्ता का आनंद लेने व स्वास्थ्य समस्याओं को रोकने के लिए स्वस्थ जीवनशैली बनाए रखना महत्वपूर्ण है। नियमित व्यायाम, पौष्टिक आहार व पर्याप्त नींद एक संतुलित जीवनशैली की आधारशिला है।

अध्ययन का महत्व :–

आधुनिकीकरण व वैश्वीकरण के इस युग में विद्यार्थियों के लिए शिक्षा, महिलाओं की स्थिति, विवाह, ईश्वर में आस्था आदि के प्रति अपनी सदियों पुरानी मान्यताओं को लेकर अपनी जिद्दी और रूढ़िवादी सोच को बदले। सामाजिक सांस्कृतिक कारकों को ध्यान में रखते हुए जीवन के नये मानदण्डों के प्रति अपनी आने वाली पीढ़ियों के दृष्टिकोण को ग्रहणशील बनाना होगा। हमारे दैनिक जीवन में आधुनिकीकरण की उपयोगिता को कोई भी नजरअंदाज नहीं कर सकता, विशेषकर इस बात को यह मनुष्य के जीवन को कितना आसान बनाता है। दूसरी ओर आधुनिक जीवन शैली अधिकांश विकसित देशों की स्वास्थ्य स्थिति को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक बनती जा रही है। आधुनिकीकरण के चक्कर में हमारे विद्यार्थी अपनी संस्कृति भुलते जा रहे हैं। रात को देर से सोना, मोबाइल फोन का अत्यधिक उपयोग, अजीबों–गरीब कपड़े पहनना आदि बुरी आदतों में विद्यार्थियों की स्वस्थ जीवनशैली को प्रभावित किया है। इससे हम कह सकते हैं विभिन्न आधुनिक जीवनशैली पैटर्न विद्यार्थियों के स्वास्थ्य को शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक रूप से प्रभावित करते हैं। इस प्रकार वर्तमान अध्ययन आधुनिकीकरण का छात्रों की जीवनशैली व भावनात्मक क्षमता पर प्रभाव एक विनम्र प्रयास है।

समस्या कथन :–

''स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण व जीवनशैली का तुलनात्मक अध्ययन।''

शोध के उद्देश्य :–

1. स्नातक स्तर के विद्यार्थियों को आधुनिकीकरण का लिंग व स्थान के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की जीवनशैली का लिंग व स्थान के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ :–

1. स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में लिंग व स्थान के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है।
2. स्नातक स्तर के विद्यार्थियों की जीवनशैली में लिंग व स्थान के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है।

शोध में प्रयुक्त विधि :–

प्रस्तुत शोध में प्रयुक्त विधि – इस अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया व विद्यार्थियों से जानकारी एकत्र की गई।

उपकरण :–

1. आर.एस. सिंह – आधुनिकीकरण मापनी।
2. एस.के. बावा व एस. कौर – जीवनशैली मापनी।

अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी :–

1. मध्यमान।
2. मानक विचलन।
3. टी–टेस्ट।

तथ्यों का विश्लेषण :–

परिकल्पना संख्या 1 :–

स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में लिंग व स्थान के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है।

1.1 स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी – 1

विद्यार्थी	विद्यार्थी संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी–मूल्य	.05	.01
ग्रामीण	300	141.33	15.54	15.21	अस्वीकृत	अस्वीकृत
शहरी	300	1.60.09	14.81			

प्रस्तुत सारणी में स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में सार्थक अंतर पाया जाता है। शोधकर्ता द्वारा डाटा के विश्लेषण के पश्चात् ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान 141.33 व 160.09 प्राप्त हुआ और मानक विचलन 15.54 व 14.81 प्राप्त हुआ। प्राप्त मध्यमान व मानक विचलन के आधार पर टी–मूल्य ज्ञात किया गया। प्राप्त टी–मूल्य 15.21 था जो कि सार्थकता के स्तर .05 के मान से ज्यादा था व .01 के सारणी मान से ज्यादा था। इस आधार पर परिकल्पना को अस्वीकृत किया जाता है और यह कहा जा सकता है कि स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में सार्थक अंतर पाया जाता है।

परिकल्पना संख्या 2 :–

स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के जीवनशैली में लिंग व स्थान के आधार पर सार्थक अंतर नहीं है।

1.1 स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के जीवनशैली में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी – 2

विद्यार्थी	विद्यार्थी संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी–मूल्य	.05	.01
ग्रामीण	300	162.87	14.32	1.90	स्वीकृत	स्वीकृत
शहरी	300	165.11	14.48			

प्रस्तुत सारणी में स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के जीवनशैली में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है। शोधकर्ता द्वारा डाटा के विश्लेषण के पश्चात् ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान 162.87 व 165.11 प्राप्त हुआ और मानक विचलन 14.32 व 14.48 प्राप्त हुआ। प्राप्त मध्यमान व मानक विचलन के आधार पर टी–मूल्य ज्ञात किया गया। प्राप्त टी–मूल्य 1.90 था जो कि सार्थकता के स्तर .05 के मान से ज्यादा

था व .01 के सारणी मान से ज्यादा था। इस आधार पर परिकल्पना को स्वीकृत किया जाता है और यह कहा जा सकता है कि स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के जीवनशैली में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

निष्कर्ष :–

परिकल्पना 4.1 :–

स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

निष्कर्ष :–

परिकल्पना संख्या 1 का सांख्यिकीय विश्लेषण करने से निष्कर्ष निकलता है कि स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में सार्थक अंतर पाया जाता है। ग्रामीण विद्यार्थी, शहरी विद्यार्थियों की तुलना में आधुनिकता को कम अपनाते हैं। आधुनिकीकरण से सम्बन्धित टी–मूल्य का प्राप्त मान सार्थकता के दोनों स्तरों 0.01 तथा 0.05 के सारणीमान से ज्यादा प्राप्त हुआ। अतः निर्मित परिकल्पना को सार्थकता के दोनों स्तरों 0.01 तथा 0.05 पर अस्वीकृत किया जाता है व कहा जा सकता है कि स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के आधुनिकीकरण में असमानता है।

परिकल्पना 5.1 :–

स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की जीवनशैली में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

निष्कर्ष :–

उपरोक्त परिकल्पना के परीक्षण से ज्ञात होता है कि स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की जीवनशैली में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता। क्योंकि जीवनशैली से सम्बन्धित प्राप्त मान सार्थकता के दोनों स्तरों 0.01 व 0.05 के सारणीमान से कम प्राप्त हुआ है। अतः निर्मित परिकल्पना को सार्थकता के दोनों स्तर पर स्वीकृत किया जाता है व कहा जा सकता है कि स्नातक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की जीवनशैली में समानता पाई जाती है।

शैक्षिक उपयोगिता :–

1. **छात्र परामर्श व मार्गदर्शन :–**

(1) बदलती जीवनशैली के कारण, छात्रों में तनाव, प्रतिस्पर्धा व भावनात्मक असंतुलन व भावनात्मक असंतुलन बढ़ रहा है।

(2) यह शोधकार्य शैक्षिक संस्थानों में काउंसलिंग सेल व मेटोरिंग प्रोग्राम को व प्रभावी बनाने में सहायक हो सकता है।

2. **अनुसंधान एवं नीतिगत योगदान :–**

(1) यह अध्ययन शिक्षा नीति निर्माताओं को संकेत देगा कि नई शिक्षा प्रणाली में 21वीं सदी के कौशल (Life Skills, Emotional Management) को शामिल किया जाए।

(2) समाजशास्त्र, मनोविज्ञान व शिक्षा के शोधकर्ताओं को नए शोध के लिए आधार मिलेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अली मीफताकु (2019) – द इम्पैक्ट ऑफ मार्डनाइजेशन आन कम्यूनिटी सोशल लाइफ, पेज नं. 189–194
2. ई. रोसना (2015) – मार्डनाइजेशन इन द परस्पैक्टिव ऑफ सोशल चेंज, पेज नं. 67–85
3. सी. ईग्गलेहर्ट (2007) – मार्डनाइजेशन द ब्लैकवैल एनक्लोपीडिया ऑफ सोशयोलाजी।
4. युसुफ (2021) – मार्डनाइजेशन ऑफ सोशल चेंजेस इन नमला वीलेज, जे. सोशल साइंस, पेज नं. 84–96
5. ए.आर. मैजिस्ट्रा (2022) – द इम्पैक्ट ऑफ मार्डनाइजेशन इन एजूकेशन, इकानोमिक्स, सोशल एण्ड कल्चरल सैक्ट्ररस, जे. ऑफ सोशल साइंस, पेज नं. 15–20

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 140-145

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

विनय कुमार के जीवनवृत्तात्मक उपन्यासों का साहित्यिक उत्कृष्टता की दृष्टि से मूल्यांकन

डॉ. राजकुमार

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी–विभाग

जनता विद्या मन्दिर गणपतराय रासीवासिया महाविद्यालय, चरखी दादरी (हरियाणा)–127306

शोध सारांश :–

विनय ने महाभारत की पौराणिक कथाओं का गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ एवं उनकी साहित्यिक उत्कृष्टता को हमारे समक्ष प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। उनकी कृतियों में महाभारत की कथाएँ केवल दो राजघराने के संघर्ष की कथा बनकर नहीं रह जाती हैं, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी कहानी बन जाती है। इसके अतिरिक्त इस महाकाव्य के साहित्य से मानव जीवन में किस प्रकार निरन्तर उत्कृष्टता का संचार एवं विकास होता है, इसकी सुन्दर अभिव्यक्ति की गई है। इन कथाओं के गहन रहस्यों को अनेक कथाओं, उपाख्यानों और घटनाओं द्वारा वर्णित किया गया है, जो व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर जीवन की अनेक समस्याओं और द्वन्द्वों का स्पष्ट समाधान प्रस्तुत करती हैं।

मुख्य शब्द :– उपन्यास, स्वाभिमान, वास्तविकता, पौराणिकता, उत्कृष्टता।

पूर्ण शोध पत्र :–

विनय ने महाभारत की कथा पर कुल अठारह औपन्यासिक कृतियों की रचना की और उनकी ये औपन्यासिक कृतियाँ लोकप्रिय भी हुई। इनके संस्करण बार–बार प्रकाशित होते रहे। विशेष बात यह रही है कि उन्होंने अपनी इन औपन्यासिक कृतियों की रचना में बहुत अधिक समय नहीं लिया। इन रचनाओं में उनको कितना परिश्रम करना पड़ा, इसका अनुमान और कल्पना करना कठिन है। उन्होंने महाभारत से सम्बन्धित अधिकांश ग्रंथों का अध्ययन किया और उनमें अपना अनुभव समाहित किया। महाभारत के कथानक में पौराणिक आख्यान मिलते हैं। यदि किसी देश या जाति को सदा के लिए दास बनाना हो तो उसका पौराणिक आधार ही समाप्त कर दिया जाए। इससे वह देश या जाति शीघ्र स्वाभिमान शून्य हो जाएगी। जिस देश या जाति का स्वाभिमान ही न हो तो उसे पराजित करना और दास बनाना आसान होता है। जाति या देशवासियों की गिनती राष्ट्र का मूल आधार नहीं होता; बल्कि देश अथवा जाति का स्वाभिमान ही राष्ट्र का मूल एवं सार्वभौमिक आधार होता है, जिसके धरातल पर वह सुदृढ़ होकर सतत् उन्नति की राह पर आगे बढ़ता है। जाति या देशवासियों के अखण्ड स्वाभिमान के आधार पर ही राष्ट्र स्थायीत्व प्राप्त करता है।

चाहे ऐतिहासिकता हो अथवा पौराणिकता तथ्यों को ज्यों का त्यों रखा जाना, तथ्यता के नाम पर शुष्क,

असंबद्ध तथा ज्यादातर निजी तथ्यों को एकत्रित करके पेश करना वास्तविक ऐतिहासिकता अथवा पौराणिकता नहीं होती। ''यदि वास्तविकता से कहा जाए तो सत्यता यह है कि ऐतिहासिक अथवा पौराणिक घटनाओं का निर्जीव रूप में घटित होना अस्वीकार्य होता है। वे शुष्क रूप में, असंबद्ध रूप में तथा निर्जीव रूप में कभी घटित नहीं हो सकती। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि सुदूरवर्ती होने के कारण हम वहाँ तक पहुँच पाने में असफल रहे हैं।''[1]

ऐतिहासिकता या पौराणिकता का एक अन्य पहलू भी हैं। वे वर्तमान के प्रकाश में ही दिखाई पड़ जाती हैं। वर्तमान की किरणों की अनुपस्थिति में वे अस्पष्ट तथा धूमिल बनी अनजान और अज्ञात बनी पड़ी रहती हैं।[2] सुप्रसिद्ध साहित्यकार राजेन्द्र यादव ने ठीक ही कहा है– ''हम कभी इतिहास या पुराण नहीं लिखते सिर्फ वर्तमान लिखते हैं।''[3] जहाँ तक प्रश्न इतिहास और पुराण के अन्तः सम्बन्ध का है, वह आसानी से प्रकट हो सकता है और हुआ भी है। उसमें देश और काल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग रहता है। जैसे–जैसे देशकाल का अहसास नजर से दूर होने लगता है तो इतिहास अपने आप पुराण बनने लगता है। उसी प्रकार यदि किसी पौराणिक कथा के ऐतिहासिक स्वरूप तक पहुंचना हो तो उसके देश काल जनित अंश को पहचान लीजिए, सम्पूर्ण विवरण अपने आप ऐतिहासिक लगने लगेगा। इतिहास लिखना पुराणों को इतिहास और इतिहास को पुराणों में बदलते जाने की प्रक्रिया है।[4] देशकाल के बन्धनों से मुक्त हो जाने पर ही इतिहास एकदम पुराण का रूप धारण करने लगता है।

विनय ने महाभारत की पौराणिक कथाओं का गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ एवं उनकी साहित्यिक उत्कृष्टता को हमारे समक्ष प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। उनकी कृतियों में महाभारत की कथाएँ केवल दो राजघराने के संघर्ष की कथा बनकर नहीं रह जाती है. बल्कि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी कहानी बन जाती है। इसके अतिरिक्त इस महाकाव्य के साहित्य से मानव जीवन में किस प्रकार निरन्तर उत्कृष्टता का संचार एवं विकास होता है, इसकी सुन्दर अभिव्यक्ति की गई है। इन कथाओं के गहन रहस्यों को अनेक कथाओं, उपाख्यानों और घटनाओं द्वारा वर्णित किया गया है, जो व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर जीवन की अनेक समस्याओं और द्वन्द्वों का स्पष्ट समाधान प्रस्तुत करती हैं।

विनय की औपन्यासिक कृतियों को ऊपर वर्णित सत्य से अलग नहीं किया जा सकता। उनमें समकालीनता तथा कालातीतता का सहज समन्वय उपस्थित करने की चेष्टा की गई है। यह सर्वविदित है कि अम्बिका, अम्बालिका तथा अम्बा तीनों बहिनों का भीष्म ने बलपूर्वक हरण किया था। अम्बिका तथा अम्बालिका ने विचित्रवीर्य की शरण स्वीकार कर ली थी। वे उनकी भार्या बन चुकी थी।[5] बची अम्बा। वह भीष्म से कुछ कहने से पूर्व सत्यवती से न्याय की गुहार लगाती है, ''माँ! आप तो सबकी माँ हैं, आप तो अन्याय नहीं होने देंगी, मैंने विवाह पूर्व ही मन से कौशल नरेश शाल्व को अपना पति मान लिया है। मैं स्वयंवर में भी उन्हीं को पति रूप में चुनती। मेरे पिता की भी यही सम्मति थी। अतः मन से एक पुरूष को पति मान लेने के बाद भारतीय नारी के नाते किसी अन्य से मेरा विवाह धर्म विरूद्ध हो जाएगा।''[6] इस पर सत्यवती भीष्म से कहती है वह अम्बा को स्वीकार कर लें। परन्तु भीष्म कहते हैं, ''मैंने सुन लिया है माता, इनसे कहा दो कि ये अपनी इच्छानुसार कौशल नरेश के पास जा सकती है, मुझे कोई आपत्ति नहीं और यदि यह बात मझे स्वयंवर के समय मालूम हो जाती तो मैं इन्हें यहाँ लाने का कष्ट न देता।''[7] यह वातावरण को अधिकाधिक रोचक, साहित्यिक रागोत्प्रेरक बना देता

है। कौशल नरेश के यहाँ अम्बा को आशा के विपरीत अपमान से साक्षात्कार करना पड़ा क्योंकि भीष्म से पराजित शाल्व स्वयं अपने अपमान बोध में जल रहा था। उसने अम्बा को लौट जाने को कह दिया। निराश अम्बा लौट आई। क्या विडम्बना थी उसके लिए कि कौशल ने उसे स्वीकार नही किया, काशी से उसका हरण हुआ और जिस व्यक्ति ने हरण किया वह पहले से ही अखण्ड ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा कर चुका है।[8] प्रतिज्ञाबद्ध होने के कारण भीष्म निरूपाय थे और दूसरी और उन्हें अम्बा की मांग अस्वाभाविक भी नहीं लग रही थी। अम्बिका और अम्बालिका के नियोग स्वीकार करने का रहस्य व्यास अच्छी प्रकार समझते थे कि एक तो नियोग बिना समर्पण के बलात्कार से कम नहीं और दूसरे उससे उत्पन्न सन्तति के मानस पर किस तरह का प्रभाव पड़ेगा। यह स्थल भी साहित्यिक आकर्षण उत्पन्न करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि दोनों स्थलों पर कालातीतता के साथ–साथ समकालीनता का भी यथोचित स्थान है। सत्यवती ने अपने पुत्र व्यास के समक्ष राज्य के भार के धर्म संकट के बारे कहा और अपने भाई की विधवाओं से अपने पौरूष से पुत्र प्रदान करने का आदेश दिया।

अम्बिका ने जब यह सुना तो वह पहले भय से कांप गई, लेकिन बाद में राज्यसिंहासन के प्रश्न पर वह माँ की बात मानने को बाध्य हो गई। अम्बिका जब महर्षि व्यास के समीप पहुँची तो देखते ही अपनी आँखें बन्द कर ली। इसी कारण उसके यहाँ धृतराष्ट्र ने जन्म लिया।[9] इस असफलता के बाद एक पुष्ट स्वस्थ पुत्र के लिए दोबारा अम्बालिका को भेजा गया। वह महर्षि को देखते ही भय से पीली पड़ गई। उसके गर्भ से पीलिया रोग से ग्रस्त पांडू पैदा हुए। इस प्रकार दोनों ही प्रयास पूरी तरह समर्थ युवराज न दे सके, तो सत्यवती ने एक बार और प्रयास की दृष्टि से व्यास जी को तैयार किया और अम्बिका को भेजने के लिए कहा। अम्बिका और अम्बालिका दोनों ही डरी हुई थी। अतः उन्होने स्वयं न जाकर चुपचाप दासी को भेज दिया। इस बार दासी के गर्भ से विदुर ने जन्म लिया।[10] सत्यवती ने इसे ही अम्बिका और अम्बालिका के भाग्य की सीमा मानकर सन्तोष किया।

महाभारत की एक अन्य विचित्रात्मक परन्तु सत्यता से परिपूर्ण घटना का वर्णन किया जाये तो वह गांधारी का नेत्रहीन धृतराष्ट्र से विवाह है। गांधारी का जब इस सत्य से साक्षात्कार हुआ तो उसने अपने पतिव्रत धर्म को निभाने के उद्देश्य से अपने नेत्रों पर भी पट्टी बांधकर अपना जीवन निर्वाह का कठिन निर्णय ले लिया। जब गांधारी के भ्राता कुमार शकुनि को इसका पता चला तो वह कांप उठा। वह स्वयं को इस सदमे में उबारने में किसी प्रकार भी सफल नही हो रहा था। वह अपनी बहिन गाधारी की वस्तुस्थिति को सोचकर रह–रहकर सिहर उठता था, ''यह भी भला कोई तर्क हुआ कि जन्मांध पति पाकर खुद को भी दृष्टिहीन कर लो? नहीं, नहीं, गांधारी। यह सर्वथा उचित नहीं।''[11] शकुनि की इस सोच एवं विचाराधारा को आज की नारी की स्वतन्त्रता की दबी हुई गूंज कहने में किसी प्रकार की अनुपयुक्तता नहीं है, यही तो कालातीतता एवं समकालीनता का सर्वथा यथोचित समन्वय कहलाता है। इसी प्रकार की सफलता में ऐतिहासिक कृति की सफलता निहित रहती है। शकुनि तो शकुनि है, जो दूसरों की प्रत्येक बात और सोच में कोई न कोई तर्क निकाल लेता है और उस घटना तथा बात की व्याख्या अपने तरीके से कर देता है। यहाँ भी शकुनि अपनी बहिन गांधारी की इस घटना में भी भीष्म की कूटनीति की खोज करता है। इसका लाभ यह हुआ कि गांधारी अपने भाई शकुनि को हस्तिनापुर में अपने पास रोके रखने की अनुमति प्राप्त करने में धृतराष्ट्र की सहमति को मुहर लगवा लेती है।

गांधारी ने सबसे पहले दुर्योधन को जन्म दिया। गांधारी और धृतराष्ट्र को एक सौ पुत्र हुए। दुर्योधन के

जन्म के समय चारों ओर अशुभ और अमंगल सूचक घटनायें घटने लगी। इस पर धृतराष्ट्र की चिन्ता बढ़ना स्वाभाविक था। विदुर ने उसके बारे में भविष्यवाणी की कि दुर्योधन कौरव वंश का नाश करने वाला होगा, क्योंकि यह दुरात्मा है। इसीलिए तत्काल ही इसे त्याग देना चाहिए। परन्तु मोहवश धृतराष्ट्र ने विदुर के परामर्श की उपेक्षा कर दी और जीवन भर दुर्योधन की समस्त इच्छाओं को पूरा करता रहता है।

विनय की रचना शैली में अनूठेपन का परिचय भी मिलता है। कई स्थानों पर वर्णन रागात्मक बन पड़े हैं, जो किसी को भी मंत्र मुग्ध करने के लिए पर्याप्त है। गंभीर तर्कप्रधान एवं रागोत्प्रेरक उदाहरण यथा, ''भगिनी! पूर्णतः सरल होना आनन्दायक होने के साथ–साथ पूरी तरह जटिल हो जाना भी है। कुछ समय बीतने को भावनाहीन हो जाने के बाद उस क्रिया में भी वही आनन्द आएगा जो कभी तुम्हें गांधार के उद्यानों में तितलियों और फूलों से खेलते हुए आया करता था।''[12] जहाँ तक रागोत्प्रेरक सूक्तियों की उपस्थिति का प्रश्न है, विनय की औपन्यासिक कृतियों में स्थान–स्थान पर इनका सामना हो जाता है। ये सूक्तियाँ मानव स्वभाव की बारीकी को अभिव्यक्त करती दृष्टिगोचर होती हैं और साथ ही साथ ये सूक्तियाँ अभिव्यक्त कवित्वपूर्ण रागोत्प्रेरक रूप धारण करके उपस्थिति होती हुई दिखाई देती है यथा :–

1. जया ने मेरी तरफ फिर उस तरह देखा जैसे उसकी चंचलता और मुस्कान मेरे भीतर के भाव आंदोलन के साथ जुड़कर सत्य का एक आकार बनाने लगी हो। और मैं उससे चमत्कृत हो गई हूँ।[13]
2. सुगन्धित स्नान कराके दासी ने गांधारी को दर्पण के समक्ष लाकर खड़ा कर दिया। उसके ही आकार का दर्पण। उसकी छवि को उसे ही दिखा रहा था। पानी की कुछ बून्दे उस समय भी उसके केशों से झर रही थी। शरीर दर्पण की तरह स्वच्छ था। कान्ति फूट रही थी। लगता था जैसे किसी ने नन्हा सा सूर्य मेरी देह में बन्द कर रखा था।[14]
3. मुझे अपने रूप से ही ईर्ष्या हुई। मैं न जाने कितनी देर तक अपने आपको निहारती रही एकटक, अपलक।[15]
4. मुस्कान के जाने कितने पल बह गए बासन्ती हवा के झौंके की तरह। एक स्वप्न लगता था जैसे वंशी की धुन में अभी–अभी नहाकर आया हो।[16]

विनय की भाषा सजीवता एवं सरसता प्रदान करने वाली है। भाषा में सजीवता एवं सरसता का समावेश करने के लिए लोकोक्तियों एवं मुहावरों के साथ–साथ भावाभिव्यंजक शब्दों के प्रयोग के साथ–साथ लोक में लोकप्रिय तथा प्रचलित शब्दों का प्रयोग आवश्यक होता है, क्योंकि यह भाषा को सरसता तथा सजीवता प्रदान करने का एक अन्य प्रमुख सम्बल भी होता है। इसमें डॉ० विनय की अच्छी पकड़ रही है। उनकी भाषा में ये सभी विशेषताएं उपलब्ध होती हैं :–

1. इन्द्र ने यह समाचार सुना तो दंग रहा गया। तब नारद जी ने भगवान के माहात्म्य का गान किया तो आखें खुली।[17]
2. दुर्योधन और उनके मामा शकुनि की ईर्ष्या प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही थी। वह हर पल उनका पीछा करती रहती थी। हस्तिनापुर साम्राज्य व गद्दी को शोभित करने वाले वीर मारे–मारे जंगलों में फिर रहे थे।[18]
3. पाण्डव सेना दूसरी बार बहुत बुझी–बुझी लौट रही थी और श्री कृष्ण के द्वारा संचालित रथ के घोड़ों की

टापों में जैसे मृदंग बज रहे थे। शिविर के अन्तः पुर में यह सूचना चंचला की तरह फैल गई कि भीम के पुत्र घटोत्कच कर्ण के द्वारा मारे गए।[19]

4. एक बार वन में विचरण करते हुए द्रौपदी ने पतझर देखा था। वे लोग जहाँ गए थे वहाँ पूरी पृथ्वी सूखे पत्तों से अटी थी। तभी पार्थ ने अग्नि बाण से सारे पत्तों को जला दिया।[20]

5. जीवन–मरण, सुख–दुख, लाभ–हानि तथा प्रिय–अप्रिय में जिस की समान वृत्ति है, जो किसी भी पदार्थ की इच्छा नहीं रखता, किसी की अवहेलना नहीं करता, जिसमें आसक्ति दूर हो गई है, धर्म, अर्थ काम का परित्याग कर दिया है और आकांक्षाओं से रहित है। ऐसे जीव को मुक्त समझना चाहिए और उसे ही सनातन पर ब्रह्म परमात्मा प्राप्त होते हैं।[21]

6. हाय ब्राह्मणों! मुझे धिक्कार है। मैं क्रूर कर्मी, महापापी अपने पिता का हत्यारा हूँ। बताओं मेरे लिए कौन–सा प्रायश्चित है।[22]

7. वत्स। क्षत्रीय धर्म के अनुसार तुमने पूरा पराक्रम दिखाया है, जाओ, अब घर जाओ। तुम अभी बालक हो और यह घोड़ा हमने मित्रता के विस्तार के लिए छोड़ा है, किसी का वध करने के लिए नहीं।[23]

जब किसी स्थान पर किसी विशेष परिस्थिति या समकालीनता की आवश्यकता से अधिक प्रधानता की स्थिति उभर कर सामने आती है, तब ऐसे स्थलों पर कालातीतता का अखण्ड रूप सामने नहीं आता, बल्कि उसका खण्डित स्वरूप ही सामने आता है। इसके समर्थन में महाभारत से सम्बन्धित तत्सम्बन्धी उल्लेख का सहारा लिया गया है। यथा–''आह! क्या भाग्य है मेरे। देव ने मेरी एक स्वप्निल आकांक्षा को जीवित रखने का मार्ग भी नहीं छोड़ा। कुरूकुल का ज्येष्ठ पुत्र जन्म ले चुका है। मैं दो वर्ष से गर्भवती होने का भ्रम पालती रही। मेरी कौख में स्पन्दनहीन पत्थर पलता रहा। मैं अकारण इसका भार वहन करती रही।[24] गान्धारी यह सोचकर आत्म ग्लानि से युक्त हो गयी कि सभी प्रयत्नों के बाद भी वह एक बालक की माँ न बन सकी। इसी आवेश में उसने अपनी कौरव पर एक तीव्र प्रहार किया। उस प्रहार से गान्धारी की कौख में पलते भ्रूण को आघात लगा। गान्धारी का स्वास्थ्य बिगड़ गया। महर्षि व्यास ने उसका उपचार किया। उन्होंने उसे सौ पुत्रों की माता होने का आर्शीवाद दिया। शायद महादेव ने भी और व्यास ने उस वरदान को दोहरा कर दिया था।[25]

विनय की भाषा शैली में कहीं–कहीं कटु यथार्थ वर्णन के समय रचना में अद्भुत रोचकता का समावेश हो गया है। परन्तु वे चित्र स्वाभाविक हैं, जिन्हें वैज्ञानिक कहा जा सकता है– महाराज पांडू के सन्तानोत्पत्ति के अयोग्य होने के कारण कुन्ती एवं माद्री ने नियोग विधि द्वारा विभिन्न देवताओं के वीर्यांश से सन्तानोत्पत्ति की। देवी कुन्ती ने बड़ी उतावली के साथ धर्म देवता से युधिष्ठिर, बायुदेव से भयंकर पराक्रमी भीम, इन्द्रदेव से अर्जुन को जन्म दिया।[26] माद्री ने कुन्ती के आग्रह पर अश्विनी कुमार का चिन्तन किया। चिन्तन के समय वह यह भूल गई कि अश्विनी कुमार एक देवता का नाम नहीं है यह देवता युगल है। इसीलिए जब मन्त्र के आह्वान से अश्विनी कुमार आए तो उसके सहवास से नकुल और सहदेव उत्पन्न हुए। ये दोनों कुमार अश्विनी कुमार से भी अधिक सुन्दर और आकर्षक थे।[27]

विनय ने अपनी औपन्यासिक कृतियों में साहित्यिक उत्कृष्टता का पूर्ण रूपेण निर्वाह किया है। इन कृतियों के अनेक पात्रों के चरित्र चित्रण में उत्कृष्टता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है, जो उनकी भाषा शैली को निखारती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. नरेन्द्र कोहली और रामकुमार भ्रमर के महाभारत मूलक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन, शोध–प्रबन्ध, बसन्त कुमार, पृ0 150
2. कोहली नरेन्द्र (1975), प्रच्छन्न, प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ0 71
3. वही, पृ0 71
4. नरेन्द्र कोहली और रामकुमार भ्रमर के महाभारत मूलक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन, शोध–प्रबन्ध, बसन्त कुमार, पृ0 151
5. वही, पृ0 161
6. डॉ0 विनय (2020), महाभारत के अमर पात्र : भीष्म पितामह, Publisher Diamond Books, New Delhi, पृ0 27
7. वही, पृ0 27
8. वही, पृ0 27
9. वही, पृ0 48
10. वही, पृ0 48
11. डॉ0 विनय (2020), महाभारत के अमर पात्र : गांधारी, Publisher Diamond Books, New Delhi, पृ0 23
12. वही, पृ0 34
13. वही, पृ0 22
14. वही, पृ0 22
15. वही, पृ0 22
16. वही, पृ0 22
17. डॉ0 विनय (2020), महाभारत के अमर पात्र : श्रीकृष्ण, Publisher Diamond Books, New Delhi, पृ0 18
18. वही, पृ0 22
19. डॉ0 विनय (2020), महाभारत के अमर पात्र : द्रौपदी, Publisher Diamond Books, New Delhi, पृ0 109
20. वही, पृ0 121
21. डॉ0 विनय (2020), महाभारत के अमर पात्र : अर्जुन, Publisher Diamond Books, New Delhi, पृ0 119
22. वही, पृ0 129
23. वही, पृ0 131
24. डॉ0 विनय (2020), महाभारत के अमर पात्र : दुर्योधन, Publisher Diamond Books, New Delhi, पृ0 08
25. वही, पृ0 131
26. डॉ0 विनय (2020), महाभारत के अमर पात्र : कुन्ती, Publisher Diamond Books, New Delhi, पृ0 34
27. वही, पृ0 34

सम्पर्क सूत्र–9416161142, Email – rajkumargarg1967@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 146-150

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

The Significance of India's Income Tax Act, 2025 : An In-Depth Examination

Dr. Anish Yadav

Associate Professor in Commerce, Govt. College, Narnaul.

Abstract :

The introduction of the Income Tax Act, 2025 represents a major overhaul of India's tax legislation, replacing the long-standing 1961 framework. This paper explores the implications of the new law in terms of legal modernization, administrative streamlining, and its broader economic influence. Key features include the adoption of a simplified tax year structure, formalization of the new tax regime with defined slab rates, and the elimination of outdated exemptions to reduce disputes and improve compliance. The Act also embraces digital-first processes and introduces clear definitions for emerging financial instruments such as Virtual Digital Assets (VDAs), aligning India's tax system with international norms. Through data analysis and stakeholder perspectives, the study assesses how these reforms promote transparency, fairness, and ease of filing. It further examines how revised tax provisions affect financial behavior, particularly among middle-income earners and younger taxpayers. The findings suggest that the Act enhances taxpayer confidence, increases disposable income, and encourages informed financial planning. The paper concludes with recommendations for public education and future policy refinements to support inclusive and sustainable economic development.

Key Words : Legal Modernization, Virtual Digital Assets, Prompt Reforms

Overview :

India's taxation framework is experiencing a major shift with the introduction of the Income Tax Act, 2025, which supplants the long-standing Income-tax Act of 1961. This legislation, formally known as the Income-tax Bill, 2025, was presented in the Lok Sabha and subsequently passed, receiving the President's approval to become law. It is scheduled to come into force on April 1, 2026. Spanning 536 sections organized into 23 chapters and accompanied by 16 schedules, this Act represents the first comprehensive revision of direct tax regulations in more than 60 years. Its core aim is to update the tax system, streamline processes, curb disputes, and accommodate the demands of a digitalized

economy. This aligns with a strategic approach focused on making taxation more straightforward, cohesive, dispute-minimal, practical, transparent, adaptable, and effective.

The importance of this Act is particularly evident in the context of economic recovery following global disruptions, where simplifying business operations and ensuring clear fiscal policies are essential for progress. It preserves fundamental tax structures and options while implementing systemic improvements that affect personal taxpayers, corporations, foreign entities, and charitable organizations. This piece delves into the primary modifications, their effects, and the wider economic implications.

Goals and Systemic Enhancements :

The Income Tax Act, 2025, emerged from the need to address the complexities built up over years of modifications to the 1961 Act, which had grown to include excessive sections and led to frequent legal challenges. The updated law trims the section count significantly, removes obsolete elements, and uses clearer wording for better understanding. A notable innovation is the adoption of a single "Tax Year" framework, which merges the former "Previous Year" and "Assessment Year" concepts, facilitating easier tax preparation and management.

The legislation grants the government authority to develop digital-based systems for assessments, investigations, and revenue collection, promoting efficiency through technology while maintaining accountability. These initiatives require parliamentary review for transparency. Furthermore, it broadens the scope of tax officials to access online platforms like email systems, social networks, and digital investment profiles during investigations, strengthening oversight in the virtual realm but prompting questions about data privacy.

In terms of global adherence, the Act provides guidance on interpreting treaties by referencing other national laws for undefined terms, aiding international companies in avoiding dual taxation. In essence, these updates seek to clarify ambiguities, lessen administrative loads, and create a more open environment.

Principal Modifications in Tax Rules :

Tax Brackets and Benefits for Personal Taxpayers :

Although tax rates for individuals and companies stay the same during the transition period (FY 2025-26), the optional new system under the Act features straightforward brackets: no tax on earnings up to INR 400,000, escalating to 30% for amounts over INR 2.4 million. The tax relief under Section 87A is boosted to INR 60,000 (or the full tax amount if smaller), resulting in no tax for incomes up to approximately INR 12.75 lakh for employed individuals, not including certain gains like short-term capital profits. Salaried workers see their standard allowance increase from INR

50,000 to INR 75,000, offering support against inflation.

Allowances for lump-sum pension withdrawals now extend to non-salaried individuals, and interest on loans for pre-built rented homes is clearly permitted. Rules for taxing unoccupied properties are refined to avoid conflicts, and while refunds for delayed returns are generally eliminated, exceptions for valid reasons promote punctual submissions.

Effects on Enterprises and Partnerships :

Enterprises gain from loosened rules on related-party pricing, the revival of deductions under Section 80M for dividends between companies to prevent multiple taxation, and synchronization of small business classifications with relevant laws. The Alternate Minimum Tax is abolished for partnerships, and rules for offsetting losses are made simpler, permitting adjustments across various business types. No tax is collected at source for overseas education payments, and pre-approvals for zero withholding are reintroduced, enhancing liquidity for independent workers and small operations. Administrative improvements, such as lower fees for advance decisions and integrated filing systems, decrease operational expenses.

For virtual currencies, the Act refreshes regulations to match the expansion of cryptocurrencies and digital holdings, largely maintaining prior structures.

Rules for Foreigners and Charities :

Foreign taxpayers encounter few core alterations but profit from clearer definitions of residency and income origins, in line with worldwide norms. The Act upholds thresholds and exemptions for non-resident Indians, with rollout starting April 1, 2026, keeping existing mechanisms intact.

Charitable entities benefit from consolidated rules in restructured sections, preserving essential exemptions for trusts. Donations without donor details to mixed religious-charitable groups are spared from a flat 30% levy, following advisory suggestions. Still, updated procedures might necessitate revised approaches to prevent legal issues.

Withholding and collection at source rules are unified into easy-to-read charts, with unchanged limits and rates, lightening the load for all involved.

Importance and Consequences : Views from Various Groups :

For Personal and Employed Taxpayers :

The Act's push toward the simplified regime is highly relevant, aiding average earners with expanded reliefs and allowances. With no liability up to INR 12.75 lakh, it encourages job market participation and spending, possibly raising available funds by 10-15% in this group. However, omissions for investment returns might require strategy adjustments. Broadly, it diminishes fears of

aggressive taxation, boosting self-reporting.

For Companies and the Overall Economy :

Through reduced legal battles and easier adherence (like no audits for small firms below INR 10 crore turnover), the Act improves business climates, vital for India's goal of a larger economy. Eliminating minimum taxes and dividend reliefs safeguard earnings for partnerships and firms, spurring capital influx. Digital tools for enforcement are expected to increase collections by 12-15% yearly, supporting development without rate increases. For small enterprises, consistent definitions and streamlined checks could release substantial funds for operations.

For Foreigners, Charities, and Society at Large :

Non-resident Indians appreciate the procedural precision, reinforcing India's attractiveness for investments. Charities, key to community support, evade harsh taxes on contributions, sustaining giving activities. On a societal level, the Act advances fairness by lightening loads on lower earners and strengthening online monitoring to tackle avoidance, potentially worth vast sums yearly.

Detractors highlight risks to privacy from expanded digital powers and call for strong protections. Yet, the Act's flexible design permits future adjustments through official notices.

Final Thoughts :

The Income Tax Act, 2025, stands as a pivotal update that revitalizes India's direct taxation, prioritizing ease, productivity, and contemporary needs. Starting in FY 2026-27, it harmonizes stability with novelty, minimizing interruptions while tackling modern issues like online assets and cross-border commerce. Its value goes further than policy to foster economic inclusion, possibly enhancing growth by 0.5-1% via better adherence and funding. As it rolls out, all parties should adjust to maximize advantages, advancing toward a fairer and stronger tax structure.

References :

1. Taxmann's Direct Taxes Ready Reckoner (DTRR) [Finance Act 2025]
2. Income Tax Act 2025 POCKET Edition by Taxmann’s Editorial Board.
3. Snowwhite's Handbook on Taxation (Includes Income Tax and GST) - A.Y 2025-26
4. Income Tax Law and Accounts Book, 66th Edition, Assessment Year 2025-26 by Dr. H. C. Mehrotra and Dr. S. P. Goyal
   Taxmann's Principles of Taxation Laws – Amended & Updated Student-Oriented Book (Finance Act 2023)
5. Lets Talk Income Tax & GST by CA Umesh Sharma.
6. Taxmann’s International Taxation Ready Reckoner [Finance Act 2025]

7. Systematic Approach to Taxation Containing Income Tax & GST (Golden Jubilee Edition 2025) by Dr. Girish Ahuja & Dr. Ravi Gupta .
8. Law of Taxation by Dr. S.R Myneni (Latest Edition 2024)
9. Taxmann's CRACKER for Direct & Indirect Taxation (Paper 7 CMA Intermediate)
10 Ministry of Finance, India. (2025). Budget 2025-2026 Documents.
11. Income Tax Department. (2025). Circular No. 5/2025: New Tax Regime Guidelines.
12. Bajaj Finserv. (2025). Comparative Analysis of Tax Regimes.
13. NSSO Survey on Household Income (2025).

Email :- dr.anishyadav84@gmail.com.in

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 151-155

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

बाल पत्रिकाओं के प्रति भागलपुर जिले के प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षकों की रूचि का अध्ययन

डॉ. भावना बरनवाल

किरण टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, पंडोल, मधुबनी, बिहार।

सारांश :-

बाल साहित्य बच्चों के साहित्य को कहते हैं। वर्तमान समय में बच्चे बाल साहित्य से दूर होते जा रहे हैं वे युटुब से कार्टून, वीडियो गेम आदि देखने में व्यस्त रहते हैं। अतः या आवश्यक है कि बाल साहित्य का पठन–पाठन आबाध गति से चलता रहें।

प्रस्तुत अध्ययन भागलपुर जिले के शिक्षकों की बाल पत्रिकाओं में रुचि और शिक्षक प्रक्रिया में उससे संबंधित बातों को प्रयोग करने तथा छात्रों को बाल पत्रिकाओं के प्रति प्रोत्साहित करने से संबंधित है। इसमें शिक्षकों के बाल पत्रिका में रुचि में किस पत्रिका को पढ़ते हैं कितने समय तक पढ़ते हैं और शिक्षण में उसका उपयोग करते हैं तथा छात्रों को बाल पत्रिकाओं के लिए प्रोत्साहित करते हैं या नहीं इस तरह के प्रश्न पूछे गए और उन्होंने इसके काफी सकारात्मक उत्तर दिए इससे पता चलता है कि प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षकों में बाल पत्रिकाओं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण है।

कूंजी शब्द :- बाल पत्रिका, शिक्षक, शिक्षण, बाल पत्रिका का प्रयोग।

प्रस्तावना –

बालको के कोमल मन को विकसित करने में बाल पत्रिका की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बालक अपने रुचि के अनुसार बाल पत्रिकाओं का चयन करते हैं और पढ़ते हैं। बाल पत्रिकाएं बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं। वर्तमान समय में बाल पत्रिकाओं की तरफ से अभिभावकों का ध्यान कम हुआ है इसका कारण मोबाइल के प्रयोग को देखा जा सकता है। बच्चे भी अब बाल पत्रिकाओं में कम रुचि ले रहे हैं क्योंकि वे अब कार्टून और वीडियो गेम में अपना समय अधिक व्यतीत करते हैं मोबाइल के आने से बाल पत्रिकाओं की मांग काफी कम हो गई है। वर्तमान में वैज्ञानिक अनुसंधान से यह सिद्ध हुआ है कि मोबाइल बच्चों के लिए बहुत ही हानिकारक है इसलिए बाल पत्रिकाओं के तरफ अभिभावकों और शिक्षकों का ध्यान जाना चाहिए। शिक्षकों का यह दायित्व है कि वे बच्चों को बाल पत्रिकाएं पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें और विद्यालय में भी बाल पत्रिकाओं का संग्रह तैयार किया जाए। सामुदायिक स्तर पर बाल पत्रिकाओं का संग्रह किया जा सकता है। इसके लिए पुरानी पत्रिकाएं लोग विद्यालय में जमा कर सकते हैं और उसका एक संग्रह तैयार हो जाएगा। शिक्षक राष्ट्र के

निर्माता होते हैं और भी बच्चों से काफी जुड़े होते हैं आता है शिक्षकों को भी अब बाल साहित्य के प्रति अपना सकारात्मक दृष्टिकोण रखना चाहिए और बच्चों को बाल साहित्य बाल पत्रिकाएं आदि पढ़ने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व :–

वर्तमान समय में शिक्षकों का दायित्व बढ़ता जा रहा है उन्हें अब अभिभावकों की भूमिका निभानी पड़ रही है तो की छोटा परिवार के कारण माता–पिता बच्चन का पूरा ध्यान नहीं रख पाते अतः शिक्षकों को एक मार्गदर्शक के रूप में बच्चों का मार्गदर्शन करना चाहिए। बच्चे आज मोबाइल की तरफ अधिक मूड़ रहे हैं उनसे बचाने का उपाय बाल पत्रिकाएं हैं शिक्षकों को चाहिए कि वह बच्चों की बाल पत्रिकाओं की तरफ रुचि बढ़ाएं। प्रस्तुत शोध के माध्यम से शिक्षकों की बाल पत्रिकाओं के प्रति रुचि को ज्ञात किया गया है और वे छात्रों को बाल पत्रिकाओं के प्रति प्रोत्साहित करते हैं या नहीं इसे देखने का प्रयास किया गया है शोध से प्राप्त परिणामों के आधार पर शिक्षकों को बाल पत्रिकाओं की वर्तमान स्थिति और उसके प्रयोग के लिए उनके भूमिका के बारे में चर्चा की जा सकती है इस तरह से शिक्षक छात्रों के मनोवैज्ञानिक पक्ष को सुधारने में अपनी भूमिका निभा सकते हैं बच्चों के मोबाइल के लत को दूर किया जा सकता है और बाल पत्रिकाओं में उनकी रुचि बढ़ाई जा सकती है। इस तरह से बच्चों के शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक पक्ष का सुधार किया जा सकता है यह बच्चों के भविष्य के लिए आवश्यक है तभी बच्चों का समग्र विकास हो सकता है इस तरह से यह एक महत्वपूर्ण शोध है।

शोध उद्देश्य –

प्रस्तुत शोध के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :–

1. प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षकों की बाल पत्रिकाओं को पढ़ने के प्रति रुचि ज्ञात करना।
2. प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षक बाल पत्रिकाओं को कितने दिन पढ़ते हैं इसे ज्ञात करना।
3. प्रारंभिक विद्यालय के शिक्षक किस बाल पत्रिका का अध्ययन करते हैं इसे ज्ञात करना।
4. बाल पत्रिका से सामग्री लेकर अपने शिक्षण कार्य में शिक्षण प्रयोग करते हैं इसे ज्ञात करना।
5. शिक्षक छात्रों को बाल पत्रिकाओं को पढ़ने के लिए कितना प्रोत्साहित करते हैं यह ज्ञात करना।

परिकल्पना –

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएं निम्नलिखित हैं :

1. शिक्षकों की बाल पत्रिकाओं के प्रति रुचि सकारात्मक है।
2. शिक्षक विभिन्न बाल पत्रिकाओं का अध्ययन करते होंगे।
3. शिक्षक बाल पत्रिकाओं से प्राप्त सामग्री को शिक्षण में प्रयोग करते होंगे।
4. शिक्षक बाल पत्रिकाओं के पढ़ने के प्रति छात्रों को तैयार करतेहोंगे।

शोध विधि :–

प्रस्तुत शोध में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग शोध विधि के रूप में किया गया है क्योंकि प्रस्तुत शोध वर्तमान परिस्थितियों के अध्ययन से संबंधित है इसलिए यह शोध विधि इसके लिए सर्वोत्तम विधि है।

समग्र :–

प्रस्तुत शोध में अध्ययन के लिए समग्र के रूप में भागलपुर जिले के प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षकों को

समग्र के रूप में रखा गया है यह सभी शिक्षक सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षक हैं।

प्रतिदर्श :-

प्रस्तुत शोध में प्रतिदर्श के रूप में 201 शिक्षकों को रखा गया है।

प्रतिदर्श चयन विधि :-

प्रस्तुत में प्रतिदर्श का चयन ऑनलाइन गूगल फॉर्म के माध्यम से प्रशिक्षण रथ शिक्षकों में से किया गया है। यह सुविधा प्रतिदर्श चयन विधि के समान है। क्योंकि प्रश्न का उत्तर देने के लिए जिन लोगों ने प्रश्न पत्र को भरा है उन्हीं लोगों को प्रतिदर्श में शामिल मान लिया गया है।

उपकरण :-

प्रस्तुत शोध में स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है। जिसमें शिक्षकों से बाल पत्रिकाओं के प्रयोग तथा छात्रों को प्रेरित करने से संबंधित प्रश्न शामिल हैं। प्रश्नों के उत्तर हां या नहीं में देने हैं।

आंकड़ा संग्रह विधि :-

प्रस्तुत शोध में आंकड़ों का संग्रह ऑनलाइन गूगल फॉर्म के माध्यम से किया गया है।

आंकड़ा विश्लेषण विधि :-

प्रस्तुत शोध में आंखों का विश्लेषण गुणात्मक रूप में किया गया है जिसमें प्रतिशत के माध्यम से आंखों को प्रस्तुत किया गया है।

शोध का सीमांकन एवं सीमाएं :-

प्रस्तुत सोच में स्वनिर्मित उपकरण के प्रयोग द्वारा 201 शिक्षकों से आंकड़ों का संग्रह ऑनलाइन माध्यम से किया गया है और उनका गुणात्मक विश्लेषण प्रतिशत के रूप में किया गया है। इस शोध में बिहार सरकार के प्रारंभिक सामान्य विद्यालयों की शिक्षकों को प्रतिदर्श में चुना गया है और उनसे ही प्रश्नावली के माध्यम से आंकड़ों का संग्रह कर विश्लेषण किया गया है।

आंकड़ों का प्रस्तुतीकरण :

1. प्रश्न संख्या एक पर दिए गए उत्तरों का विश्लेषण निम्न प्रकार है :

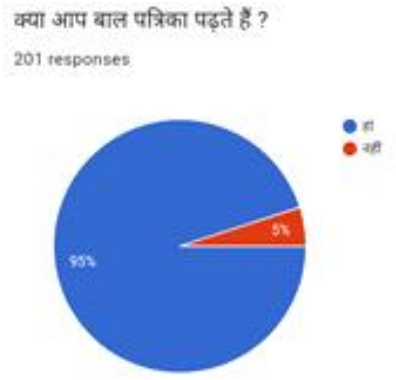

टेबल 1

2. प्रश्न संख्या दो पर दिए गए उत्तरों का विश्लेषण निम्न प्रकार है :

प्रश्न संख्या 2 पर प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि शिक्षक नंदन, चंपक, बालहंस, तितली, चंदा मामा, अंकुर, एकलव्य, बाल वाटिका, नन्हे सम्राट, बाल भास्कर, फुलवारी , बालपोथी आदि बाल पत्रिकाओं का अध्ययन

करते हैं।

3. प्रश्न संख्या तीन पर दिए गए उत्तरों का विश्लेषण निम्न प्रकार है :

शिक्षकों की प्राप्त उत्तरों से पता चलता है कि भागलपुर जिले के प्रारंभिक विद्यालयों के शिक्षक महीने में औसतन 5 दिन बाल पत्रिकाओं का अध्ययन करते हैं। कुछ ऐसे भी शिक्षक हैं जो प्रतिदिन बाल पत्रिकाएं पढ़ते हैं कुछ ऐसे भी शिक्षक हैं जो सप्ताह में एक दिन या दो दिन बाल पत्रिकाएं पढ़ते हैं जबकि कुछ शिक्षक महीने में 10 दिन तक बाल पत्रिकाएं पढ़ते हैं।

4. प्रश्न संख्या चार पर दिए गए उत्तरों का विश्लेषण निम्न प्रकार है :

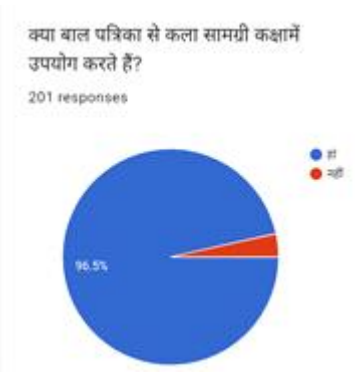

टेबल 2

5. प्रश्न संख्या दो पर दिए गए उत्तरों का विश्लेषण निम्न प्रकार है :

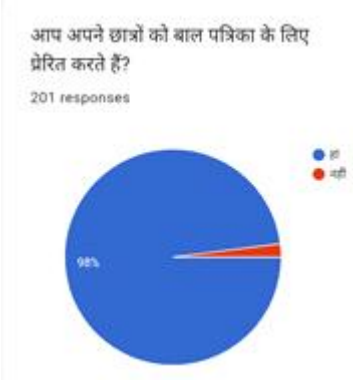

टेबल 3

निष्कर्ष :-

उपरोक्त प्रश्नों के विश्लेषण से पता चलता है कि अधिकांश शिक्षक बाल पत्रिकाओं में रुचि रखते हैं और बाल पत्रिकाओं के लिए समय निकालते हैं लाल पत्रिकाओं को पढ़ने के बाद उनमें उपलब्ध सामग्री का अपने शैक्षिक कार्य में प्रयोग भी करते हैं साथ ही छात्रों को भी बाल पत्रिकाओं को पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं इस तरह से भागलपुर जिले के प्रारंभिक विद्यालय शिक्षक बाल पत्रिकाओं के प्रति काफी सजग और संवेदनशील हैं।

सुझाव :-

कुछ शिक्षक अभी भी बाल पत्रिकाएं नहीं पड़ते हैं लेकिन उनकी संख्या बहुत ही नगर में है इसके लिए उन्हें सरकार द्वारा प्रोत्साहित करना चाहिए और विद्यालय के पुस्तकालय में बाल पत्रिकाओं को रखवाना चाहिए

जिससे शिक्षक गण बाल पत्रिकाओं को पढ़ें और बच्चों को उसमें उपलब्ध कहानी कविता की गतिविधियों आदि से परिचित कराने और अपने शिक्षक को मनोरंजक और छात्र केन्द्रित बना सकें।

संदर्भ सूची :-

1. पांडे, के० पी०, (2012), शैक्षिक अनुसंधान वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
2. कपिल, एच० के०, (2019), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन।
3. तिवारी, पूजा (2024),
4. बाल पत्रिका : स्वरुप परिवर्तन की आवश्यकता, साहित्य शाला, https://sahitya.primarykamaster.com/2015/01/blog&post_12-html\m/1
5. Google form
6. Google doc

bhawanabarnwal65@gmail-com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 156-161

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या प्रवृत्ति के कारण एवं निरोधक रणनीतियाँ

डॉ. चन्द्रशेखर सिंह

एसोसिएट प्रोफेसर, समाज कार्य विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

परिचय (Introduction)

आधुनिक समाज में उच्च शिक्षा केवल ज्ञानार्जन का साधन ही नहीं, बल्कि जीवन में सफलता, सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक स्थिरता प्राप्त करने का माध्यम भी मानी जाती है। किंतु उच्च शिक्षा प्राप्त करने की प्रक्रिया में विद्यार्थियों को अनेक प्रकार के शैक्षणिक दबाव, कैरियर संबंधी अनिश्चितताएँ, पारिवारिक अपेक्षाएँ, प्रतिस्पर्धा, आर्थिक कठिनाइयाँ तथा मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ झेलनी पड़ती हैं। इन परिस्थितियों में कुछ विद्यार्थी मानसिक तनाव, अवसाद और निराशा के कारण आत्महत्या जैसी चरम प्रवृत्ति की ओर अग्रसर हो जाते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की रिपोर्ट (2021) के अनुसार, विश्वभर में 15–29 वर्ष आयु वर्ग के युवाओं में आत्महत्या मृत्यु का प्रमुख कारण है। भारत जैसे विकासशील देशों में उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या की घटनाएँ लगातार बढ़ रही हैं। इसका एक बड़ा कारण यह है कि शैक्षणिक संस्थानों में मानसिक स्वास्थ्य परामर्श सेवाएँ, तनाव प्रबंधन कार्यक्रम और सामुदायिक समर्थन पर्याप्त नहीं है।

उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी अक्सर यह मानते हैं कि असफलता का अर्थ जीवन का अंत है। सामाजिक तुलना, रोजगार की कमी, माता–पिता की अपेक्षाएँ तथा व्यक्तिगत संबंधों में टूटन भी उनकी आत्महत्या प्रवृत्ति को और गहरा बना देती है। यह समस्या केवल व्यक्तिगत मानसिक स्थिति का परिणाम नहीं है, बल्कि यह सामाजिक–सांस्कृतिक और शैक्षणिक संरचनाओं से भी गहराई से जुड़ी हुई है।

इस संदर्भ में आत्महत्या प्रवृत्ति को समझना और निरोधक रणनीतियाँ विकसित करना समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है। आत्महत्या निरोध केवल व्यक्तिगत स्तर तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसमें परिवार, शैक्षणिक संस्थान, समाज और नीति–निर्माताओं की सामूहिक जिम्मेदारी निहित है।

अतः इस शोध का उद्देश्य है कि उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या प्रवृत्ति के वास्तविक कारणों की पहचान की जाए और व्यावहारिक निरोधक उपायों को प्रस्तुत किया जाए, ताकि शिक्षा प्रणाली विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य और जीवन सुरक्षा के लिए अधिक संवेदनशील और प्रभावी बन सके। आत्महत्या आज के युग की एक गंभीर सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षणिक समस्या है। विशेषकर युवाओं में, जो देश की ऊर्जा और

भविष्य माने जाते हैं, आत्महत्या की प्रवृत्ति एक चिंताजनक वास्तविकता बन चुकी है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था, वैश्वीकरण, तकनीकी प्रतिस्पर्धा, रोजगार की अनिश्चितता और पारिवारिक–सामाजिक दबाव ने विद्यार्थियों के जीवन को जितना अवसरों से भरा है, उतना ही चुनौतियों और तनाव से भी। परिणामस्वरूप, उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले अनेक विद्यार्थी मानसिक अवसाद, तनाव और असफलता की भावना से घिरकर आत्महत्या जैसी चरम प्रवृत्ति की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO, 2021) की रिपोर्ट बताती है कि विश्वभर में प्रत्येक वर्ष लगभग 7 लाख लोग आत्महत्या करते हैं, जिनमें एक बड़ी संख्या 15–29 वर्ष की आयु वर्ग के विद्यार्थियों की है। भारत इस समस्या से अछूता नहीं है। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स ब्यूरो (NCRB, 2022) के आंकड़े दर्शाते हैं कि भारत में प्रतिदिन अनेक विद्यार्थी आत्महत्या करते हैं, और इसका प्रतिशत लगातार बढ़ रहा है। विशेष रूप से उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों में आत्महत्या की घटनाएँ चिंताजनक स्तर तक पहुँच चुकी हैं।

उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों की आत्महत्या प्रवृत्ति के कारण बहुआयामी हैं :–

- **शैक्षणिक कारण :** परीक्षा का दबाव, प्रतिस्पर्धा, असफलता का भय।
- **सामाजिक कारण :** माता–पिता एवं समाज की उच्च अपेक्षाएँ, संबंधों में तनाव, अकेलापन।
- **आर्थिक कारण :** फीस का बोझ, भविष्य की नौकरी और कैरियर की असुरक्षा।
- **मनोवैज्ञानिक कारण :** अवसाद, चिंता, आत्मविश्वास की कमी, आत्म–स्वीकृति का अभाव।
- **संस्थागत कारण :** मानसिक स्वास्थ्य परामर्श सेवाओं की कमी, संवेदनशील वातावरण का अभाव।

इन कारणों के बीच, कई बार विद्यार्थियों को अपनी समस्याओं को साझा करने और समाधान खोजने का अवसर नहीं मिलता, जिससे वे आत्महत्या को एकमात्र विकल्प मान लेते हैं। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि आत्महत्या केवल व्यक्तिगत निर्णय या मानसिक कमजोरी नहीं, बल्कि सामाजिक, शैक्षणिक और पारिवारिक दबावों का परिणाम है।

आत्महत्या निरोधक रणनीतियाँ (Suicide Prevention Strategies) इस दिशा में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। इनमें शामिल हैं :

- **मानसिक स्वास्थ्य जागरूकता अभियान,**
- **विद्यार्थियों के लिए परामर्श सेवाएँ,**
- **तनाव प्रबंधन और जीवन कौशल प्रशिक्षण,**
- **परिवार एवं शिक्षकों द्वारा भावनात्मक समर्थन,**
- **सकारात्मक वातावरण का निर्माण।**

इस शोध का उद्देश्य उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या प्रवृत्ति के कारणों की गहन पहचान करना और प्रभावी निरोधक रणनीतियाँ सुझाना है। यह अध्ययन न केवल शिक्षा जगत, बल्कि परिवार और समाज के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगा, क्योंकि आत्महत्या की रोकथाम का अर्थ केवल जीवन बचाना ही नहीं, बल्कि युवाओं को जीवन जीने की प्रेरणा और आशा प्रदान करना है।

शोध उद्देश्य (Research Objectives) :–

1. उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या प्रवृत्ति के मुख्य कारणों की पहचान करना।

2. आत्महत्या प्रवृत्ति को प्रभावित करने वाले सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक और मनोवैज्ञानिक कारकों का विश्लेषण करना।
3. विद्यार्थियों के जीवन में पारिवारिक, सामाजिक और शैक्षणिक दबावों की भूमिका का अध्ययन करना।
4. आत्महत्या की प्रवृत्ति को कम करने में मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं, परामर्श एवं परामर्शदाताओं (Counselors) की भूमिका का मूल्यांकन करना।
5. आत्महत्या निरोधक रणनीतियों (जैसे जीवन कौशल शिक्षा, तनाव प्रबंधन, हेल्पलाइन सेवाएँ, शिक्षक–छात्र संवाद) की प्रभावशीलता की जाँच करना।
6. विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से व्यावहारिक सुझाव प्राप्त करना, ताकि शैक्षणिक संस्थानों में आत्महत्या रोकथाम हेतु ठोस कदम उठाए जा सकें।
7. भविष्य में आत्महत्या प्रवृत्ति को कम करने के लिए परिवार, शैक्षणिक संस्थान और नीति–निर्माताओं के लिए अनुशंसाएँ तैयार करना।

सैद्धांतिक पृष्ठभूमि (Theoretical Background) :–

उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या प्रवृत्ति को समझने के लिए विभिन्न समाजशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक और शैक्षिक सिद्धांतों का उपयोग किया जा सकता है। ये सिद्धांत यह स्पष्ट करते हैं कि आत्महत्या केवल व्यक्तिगत निर्णय नहीं होती, बल्कि यह सामाजिक दबावों, मानसिक स्वास्थ्य स्थितियों और जीवन की परिस्थितियों का संयुक्त परिणाम है।

1. डुर्कहाइम का समाजशास्त्रीय सिद्धांत (Durkheim's Sociological Theory of Suicide) :

- एमिल डुर्कहाइम (1897) ने आत्महत्या को सामाजिक एकीकरण और नियंत्रण की कमी से जोड़ा।
- उनके अनुसार, जब व्यक्ति समाज से अलगाव महसूस करता है या सामाजिक अपेक्षाओं का बोझ अत्यधिक हो जाता है, तो आत्महत्या की संभावना बढ़ जाती है।
- उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी भी सामाजिक दबाव, परिवार की अपेक्षाओं और असफलता की आशंका के कारण अलगाव एवं तनाव महसूस करते हैं, जिससे उनमें आत्महत्या प्रवृत्ति विकसित हो सकती है।

2. अंतरवैयक्तिक सिद्धांत (Interpersonal Theory of Suicide – Joiner, 2005) :

यह सिद्धांत बताता है कि आत्महत्या की इच्छा दो कारकों से उत्पन्न होती है :

1. Perceived Burdensomeness (स्वयं को बोझ समझना)
2. Thwarted Belongingness (अलगाव / सामाजिक अस्वीकृति की भावना)

विद्यार्थियों में जब यह भावना विकसित होती है कि वे परिवार, समाज या संस्थान की अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर पा रहे, तो वे स्वयं को बोझ मानकर आत्महत्या की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

3. तनाव-सिद्धांत (Stress Theory) :–

यह सिद्धांत मानता है कि लगातार तनाव और दवाब व्यक्ति की मानसिक क्षमता को कमजोर कर देते हैं।

उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी परीक्षा, रोजगार की अनिश्चितता, आर्थिक कठिनाइयों और प्रतिस्पर्धा के कारण अत्यधिक तनाव में रहते हैं। यह तनाव अवसाद, चिंता और आत्महत्या प्रवृत्ति को जन्म देता है।

4. संज्ञानात्मक–व्यवहारिक सिद्धांत (Cognitive-Behavioral Theory) :

- इस सिद्धांत के अनुसार, नकारात्मक सोच, असफलता की आशंका और जीवन के प्रति निराशावादी दृष्टिकोण आत्महत्या प्रवृत्ति का प्रमुख कारण है।
- विद्यार्थी जब यह सोचने लगते हैं कि असफलता ही जीवन का अंत है और उनके पास कोई विकल्प नहीं है, तो आत्मघाती विचार प्रबल हो जाते हैं।

5. नारीवादी दृष्टिकोण (Feminist Perspective) :

- यह दृष्टिकोण बताता है कि सामाजिक संरचनाएँ और पितृसत्तात्मक व्यवस्था महिलाओं और पुरुषों दोनों पर अलग–अलग दबाव डालती हैं।
- विशेषकर उच्च शिक्षा प्राप्त महिला विद्यार्थियों पर दहेज, विवाह, पारिवारिक अपेक्षाएँ और लैंगिक असमानता अतिरिक्त दबाव उत्पन्न करते हैं, जो आत्महत्या प्रवृत्ति को प्रभावित करते हैं।

6. सार्वजनिक स्वास्थ्य दृष्टिकोण (Public Health Perspective) :

- यह दृष्टिकोण आत्महत्या को एक रोकथाम योग्य सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या मानता है।
- इसमें सामाजिक समर्थन, परामर्श सेवाएँ, हेल्पलाइन, मानसिक स्वास्थ्य शिक्षा और नीति–निर्माण को आत्महत्या निरोधक उपायों में महत्त्वपूर्ण माना गया है।

समीक्षा साहित्य (Review of Literature) :–

1. वैश्विक व राष्ट्रीय परिदृश्य :

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की हालिया रिपोर्टों के अनुसार, वैश्विक स्तर पर युवा (15–29 वर्ष) वर्ग में आत्महत्या एक अग्रणी मृत्यु कारण है और सन् 2021 में लगभग 7.27 लाख लोग आत्महत्या से मरे। यह दर्शाता है कि युवा–आयु समूह में आत्महत्या का जोखिम विशेष रूप से उच्च है।

भारत में राष्ट्रीय आंकड़े (NCRB पर आधारित विश्लेषणों) बताते हैं कि कुल आत्महत्याओं में विद्यार्थियों का हिस्सा चिंताजनक है – 2022 में छात्र आत्महत्याएँ कुल आत्महत्याओं का लगभग 7.6% रहीं, और छात्र–आधारित आत्महत्याओं की संख्या दशक–दर–दशक बढ़ने का रुझान दिखाती है। ये आँकड़े शोधों और नीति–विश्लेषणों में बार–बार उद्धृत हुए हैं।

2. छात्र–आधारित आत्महत्याओं के पैटर्न व विशिष्ट कारण :

अनेकों अध्ययन यह संकेत करते हैं कि छात्र आत्महत्याओं के पीछे बहु–आयामी कारण हैं – शैक्षणिक तनाव (परीक्षा/रिजल्ट/काउंसलिंग दबाव), परिक्षा–असफलता से संबंधित तात्कालिक संकट (Exam-failure suicides), आर्थिक कठिनाइयाँ (फीस/ऋण), पारिवारिक अपेक्षाएँ तथा व्यक्तिगत मानसिक रोग जैसे अवसाद और आत्महत्या–विचार। खासतौर पर परीक्षा–परिणाम/परिक्षा असफलता से संबंधित मौतों का उल्लेख कई अध्ययनों में मिलता है।

3. मानसिक स्वास्थ्य की प्रीवेलेंस और सह-रूग्णताएँ (Comorbidities) :

कॉलेज व विश्वविद्यालय स्तर पर किए गए सर्वे और अध्ययन बताते हैं कि डिप्रेशन, चिंता और तनाव का प्रचलन उच्च शिक्षा के छात्रों में महत्वपूर्ण है – कोविड–19 के बाद यह और भी बढ़ा। ये मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ आत्महत्यात्मक विचारों और आचरण के मजबूत पूर्वसूचक (Predictors) मानी जाती हैं। कई पछले सर्वे

में 10% से अधिक छात्रों ने हाल के 12 महीनों में आत्महत्यात्मक विचारों की सूचना दी है।

4. सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक कारक :

भारतीय संदर्भ में सामाजिक–आर्थिक दबावों – जैसे माता–पिता की उच्च अपेक्षाएँ, रोजगार–निश्चितता, फीस बोझ, दहलीज पर परिवारिक दबाव व सामाजिक प्रतिष्ठा का उल्लेख पत्र–पत्रिकाओं और विश्लेषणों में बार–बार आया है। इसके अतिरिक्त, छात्र जो निजीध्प्राइवेट कोचिंग व महंगी शिक्षा के कारण आर्थिक तनाव में होते हैं, वे जोखिम में अधिक पाए गए हैं।

5. संस्थागत कमियाँ और हेल्प-सेवा की पहुँच :

कई शोध बताते हैं कि शैक्षणिक संस्थानों में मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की कमी, परामर्शदाताओं की अनुपस्थिति/अपर्याप्तता, स्टूडेंट–फैकल्टी संवाद का अभाव तथा संवेदनहीन शैक्षणिक वातावरण विद्यार्थियों के संकट–परिणामों को बढ़ाते हैं। नीति–स्तर पर हाल की सिफारिशें व दिशानिर्देश (उदा. UGC के मानसिक स्वास्थ्य निर्देश) इन कमियों को दूर करने का प्रयास कर रहे हैं, पर क्रियान्वयन अभी चुनौती बना हुआ है।

6. प्रभावी निरोधक हस्तक्षेप क्या काम करता है?

अध्ययनों ने कुछ प्रभावी हस्तक्षेपों की पहचान की है : गेटकीपर ट्रेनिंग (शिक्षक/स्टाफ/पीयर–लिड ट्रेनिंग), ऑन–कैंपस काउंसलिंग सेवाएँ, तनाव–प्रबंधन व जीवन–कौशल कार्यक्रम, संकट–हेल्पलाइन्स, और परीक्षा–संबंधी दबावों पर संस्थागत नीतियाँ (जैसे रिजल्ट संवेदनशीलता, पुनर्मूल्यांकन प्रक्रिया का पारदर्शी संचालन)। शोध दिखाते हैं कि बहु–स्तरीय (individual + institutional + policy) हस्तक्षेपों का संयोजन सबसे प्रभावी होता है।

7. शून्य-ज्ञान व भविष्य की रिक्तियाँ (Gaps in Literature) :

समीक्षा से स्पष्ट होता है कि :

- **भारत में उच्च शिक्षा** – विशिष्ट, क्षेत्रीय और सामाजिक–समूह (जैसे अनुसूचित/अन्य पिछड़े वर्ग, ग्रामीण बनाम शहरी) आधारित तुलनात्मक longitudinal अध्ययन सीमित हैं।
- **मूल्यांकन** – आधारित अध्ययनों की कमी है जो स्कूल/कालेज–स्तर पर लागू किए गए निरोधक कार्यक्रमों की दीर्घकालिक प्रभावशीलता को मापें।
- **विशेषकर परीक्षा** – आधारित तात्कालिक आत्महत्याओं (Exam-failure suicides) पर रोक के लिए प्रभावी नीति–नमूने कम प्रकाशित हैं। इन रिक्तियों की पूर्ति हेतु ठोस प्राथमिक–डेटा आधारित अनुसंधान आवश्यक है।

निष्कर्ष (Synopsis of Literature Review) :

समग्र साहित्य यह दर्शाता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों में आत्महत्या प्रवृत्ति बहु–आयामी, तेजी से बदलती और क्षेत्रीय–सम्वेदनशील समस्या है। वैश्विक व राष्ट्रीय आँकड़े (WHO, NCRB) इस समस्या की गंभीरता को रेखांकित करते हैं। मनोवैज्ञानिक (डिप्रेशन/एंग्जायटी), शैक्षणिक (परीक्षा/प्रतिस्पर्धा), आर्थिक तथा संस्थागत कारक प्राथमिक ड्राइवर हैं। उपलब्ध शोधों के आधार पर बहु–स्तरीय निरोधक रणनीतियाँ (काउंसलिंग, गेटकीपर ट्रेनिंग, नीति सुधार) प्रभावशाली प्रतीत होती हैं, पर स्थानीय प्रमाण–आधारित (Evidence-Based) हस्तक्षेपों का और मूल्यांकन आवश्यक है।

संदर्भ सूची (References in APA Style) :

1. World Health Organization. (2021). Suicide worldwide in 2019: Global health estimates. Geneva: WHO.
2. National Crime Records Bureau. (2023). Accidental deaths and suicides in India 2022. Ministry of Home Affairs, Government of India.
3. Arafat, S. M. Y., & Kabir, R. (2017). Suicide prevention strategies: A global perspective. Journal of Behavioral Health, 6(1), 1–5. https://doi.org/10.5455/jbh.20161128084359
4. Kumar, S., & George, B. (2013). Examining student suicides in India: A critical analysis. Indian Journal of Public Health Research & Development, 4(3), 232–238.
5. Mortier, P., Cuijpers, P., Kiekens, G., Auerbach, R. P., Demyttenaere, K., Green, J. G., ... & Bruffaerts, R. (2018). The prevalence of suicidal thoughts and behaviours among college students: A meta-analysis. Psychological Medicine, 48(4), 554–565. https://doi.org/10.1017/S0033291717002215
6. Patel, V., Ramasundarahettige, C., Vijayakumar, L., Thakur, J. S., Gajalakshmi, V., Gururaj, G., ... & Jha, P. (2012). Suicide mortality in India: A nationally representative survey. The Lancet, 379(9834), 2343–2351. https://doi.org/10.1016/S0140-6736(12)60606-0
7. Singh, A., & Singh, R. (2017). Academic stress and suicidal ideation among adolescents: Role of parental pressure and peer support. Indian Journal of Health and Wellbeing, 8(9), 1033–1037.
8. Vijayakumar, L. (2015). Suicide in India in the 21st century: A public health crisis. Indian Journal of Psychiatry, 57(2), 160–165. https://doi.org/10.4103/0019-5545.158320
9. Zalsman, G., Hawton, K., Wasserman, D., van Heeringen, K., Arensman, E., Sarchiapone, M., ... & Zohar, J. (2016). Suicide prevention strategies revisited: 10-year systematic review. The Lancet Psychiatry, 3(7), 646–659. https://doi.org/10.1016/S2215-0366(16)30030-X
10. United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization (UNESCO). (2020). Mental health and well-being of students in higher education. Paris: UNESCO Publishing.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 162-166

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ई–कॉमर्स में सोशल मीडिया की वर्तमान स्थिति : एक संक्षिप्त अध्ययन

जगदीश कुमार धुर्वे, पीएच.डी शोधार्थी
डॉ. राखी सक्सेना, सह प्राध्यापक
वाणिज्य विभाग, कैरियर (स्वसाशी) महाविद्यालय, भोपाल (म. प्र.)

शोध सार :–

वर्तमान समय में ई–कॉमर्स एवं सोशल मीडिया भारतीय बाजार की रूपरेखा को बदलने में अहम भूमिका निभा रहे है। भारतीय बाजार एक विशेष स्थान में सिमटा हुआ नहीं है, आज भारतीय बाजार को घर–घर पहुंचे का श्रेय ई–कॉमर्स के साथ–साथ सोशल मीडिया को दिया जाये तो इसमें कोई दो राय नहीं होगी। सोशल मीडिया का ही प्रभाव है जो आज भारतीय ग्राहक देश ही नहीं बल्कि विदेशों से भी ई–कॉमर्स के माध्यम से वस्तुओं एवं सेवाओं का लाभ ले रहें है। पिछले कई दशकों के मुकाबले वर्ष 2024 में भारतीय ई–कॉमर्स बाजार 107 अरब रूपये का रहा। एक शोध के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2030 तक भारतीय ई–कॉमर्स बाजार 400 अरब रूपये को पार कर सकता है। वर्तमान में 491 मिलियन भारतीय नागरिक सोशल मीडिया (फेसबुक, इंस्टाग्राम, एक्स, टिवटर, व्हाट्सएप, यूटयूब इत्यादि) का उपयोग कर रहें है, इस संख्या से यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि ई–कॉमर्स से कितने जुडे होगें, साथ ही इस आंकडे में निरंतर वृद्धि हो रही है।

बीज शब्द :– भारतीय, ई–कॉमर्स, व्यापार, सोशल मीडिया, बाजार, ग्राहक।

प्रस्तावना :–

वर्तमान समय में भारत विश्व पटल पर व्यापार के क्षेत्र में अपनी एक अलग पहचान बनाया हुआ है भारत की विदेश नीति के कारण ही यह संभव हो पाया है। इस क्रम में भारतीय बाजारों को लुभाने के लिए विदेशी बाजार भी अपने पैर भारत में जमा रही है। साथ ही भारतीय बाजार अब एक विशेष स्थान में सिमटा हुआ नहीं है। आज भारतीय बाजार उत्तर दिशा में स्थित ''इंदिरा कॉल'' से दक्षिण दिशा में स्थित ''इंदिरा पाईंट (पिग्मिलियन)'' और पूर्व दिशा में स्थित ''कीबिथू'' व पश्चिम दिशा में स्थित ''सर क्रीक'' तक किसी भी वस्तु एवं सेवाओं का लाभ ई–कॉमर्स के माध्यम से प्राप्त कर सकते है। ई–कॉमर्स पिछले कई दशक से निरंतर बढौतरी कर रहा है। ई–कॉमर्स के माध्यम से व्यवसाय को सुचारू रूप से करने के लिए सोशल मीडिया सेतुबंध का कार्य करता है। जिसके माध्यम से वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय विक्रय सुगमता से किया जा सकता है। ई–कॉमर्स

व्यवसाय के उस पहलू को शीघ्र करने का माध्यम है जिससे ग्राहक के पास वस्तुओं एवं सेवाओं को शीघ्र पहुंचाया जा सकें। भारत देश में ई–कॉमर्स– मयंतरा, ऐमाजॉन स्नैपडिल अजुओ ऑनलाईन ऑलेक्स नयका मीशो, स्वीगी जीयो कंपनी का भी बोल बाला निरंतर बढ रहा है। अनेकानेक कंपनियों के वर्तमान में आने के बाद लोगों की जिंदगी में एक दम से नया बदलाव ई–कॉमर्स एवं सोशल मीडिया के कारण देखने को मिला है। इस शोध के माध्यम से ई–कॉमर्स एवं सोशल मीडिया से संबंधित विभिन्न प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास किया जा रहा है।

ई–कॉमर्स का अर्थ :–

ई–कॉमर्स मुख्य रूप से इलेक्ट्रॉनिक व्यापार का स्वरूप है, ई–कॉमर्स इलेक्ट्रॉनिक के माध्यम से वस्तुओं और सेवाओं को क्रय विक्रय करने की प्रक्रिया को कहा जाता हैं। इसमें ऑनलाइन शॉपिंग/बाजार और ऑनलाइन नीलामी जैसी चीजें भी शामिल हैं। ई–कॉमर्स में मोबाइल डिवाइस के द्वारा क्रय–विक्रय करना, इलेक्ट्रॉनिक फंड ट्रांसफर करना, और इंटरनेट मार्केटिंग जैसी तकनीकों का उपयोग किया जाता हैं।

सोशल मीडिया का अर्थ :–

सोशल मीडिया को उस रूप में देखा जा सकता है जिसमें हम एक अन्तरजाल के पारस्परिक संबंधों के माध्यम एक बनावटी दुनिया का अनुभव करते है। सोशल मीडिया व्यक्तियों और समुदायों को एक साझा सहभागिता प्रदान करती है। सोशल मीडिया का उपयोग सामाजिक संबंध के अलावा उपयोगकर्ता द्वारा अप्रत्यक्ष सामग्री को मोबाइल एवं वेब आधारित प्रौद्योगिकियों के प्रयोग से देख, सुन और समझ सकते है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :–

प्रस्तुत शोध आलेख के संबंध में उद्देश्यों को निम्नानुसार समझा जा सकता है :–

अ. ई–कॉमर्स एवं सोशल मीडिया के अर्थ को समझना।

ब. ई–कॉमर्स एवं सोशल मीडिया के प्रकारों को समझना।

स. ई–कॉमर्स एवं सोशल मीडिया के गुणों एवं दोषों को समझना।

शोध पद्धति :–

प्रस्थ्तुत शोध अध्ययन द्वितीयक संमकों के आधार पर किया गया है जिसमें विषय से संबंधित वेबसाईट, पुस्थ्तकों, शोध आलेखों का उपयोग किया गया है।

ई–कॉमर्स के गुण :–

- ई–कॉमर्स में कागजी कार्यवाही को कम करते हुए उपभोक्ता के लिए डिजिटल माध्यम से सरल व सुगम बनाया गया है।
- ई–कॉमर्स के द्वारा उपभोक्ताओं को वस्तुओं एवं सेवाओं के लिए एक स्टोर से दूसरे स्टोर ढूंढने की आवश्यकता नहीं होती।
- ई–कॉमर्स ऑनलाईन प्लेटफॉर्म के माध्यम से उपभोक्ता 24 X 7 व 365 दिवस में ऑनलाईन बाजार खुला रहता उपभोक्ता किसी भी समय वस्तुओं एवं सेवाओं का लाभ प्राप्त कर सकता है।
- ई–कॉमर्स ऑनलाईन प्लेटफॉर्म के माध्यम से उपभोक्ता विभिन्न प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं को कूपन एवं छूट के माध्यम से लाभ प्राप्त कर सकता है।

- ई–कॉमर्स ऑनलाईन के द्वारा उपभोक्ताओं को उनकी सुविधानुसार वस्तुओं एवं सेवाओं को एक निर्धारित स्थान पर उपलब्ध कराया जा सकता है।

सोशल मीडिया के गुण :-

- सोशल मीडिया अन्य पारंपरिक तथा सामाजिक तरीकों से कई प्रकार से एकदम अलग है। इसमें पहुँच, आवृत्ति, प्रयोज्य ताजगी और स्थायित्व आदि तत्व शामिल हैं।
- इन्टरनेट के प्रयोग से कई प्रकार के प्रभाव होते हैं। निएलसन के अनुसार इन्टरनेट प्रयोक्ता अन्य साइट्स की अपेक्षा सामाजिक मीडिया।
- दुनिया में प्रत्यक्ष और अप्रत्क्षय दो प्रकार की सभ्यताओं का दौर शुरू हो चुका है, भविष्य में दुनिया की तीन से चार गुना आबादी सोशल मीडिया के अंतर्जाल पर निर्भर होगी।
- सोशल मीडिया अंतर्जाल एक ऐसी प्रौद्योगिकी के रूप में हमारे सामने उभर कर आई है जो सभी आयु वर्ग के उपयोग हेतु उपलब्ध है।
- सोशल नेटवर्किंग साइट्स संचार व सूचना का सशक्त जरिया हैं, जिनके माध्यम से लोग अपनी बात बिना किसी रोक–टोक के रख पाते हैं। यही से सामाजिक मीडिया का स्वरूप विकसित हुआ है।

ई–कॉमर्स के दोष :-

- ई–कॉमर्स में उन वस्तुओं को ऑनलाईन माध्यम से विक्रय नहीं किया जा सकता जो जल्द खराब होती है जैसे डेयरी प्रोडेक्ट, मांस, मछली, सब्जियां आदि।
- ई–कॉमर्स के द्वारा उपभोक्ताओं को वस्तुओं एवं सेवाओं दी जाती है उन्हें पूर्व से देखा–परखा नहीं जाता है।
- ई–कॉमर्स ऑनलाईन प्लेटफॉर्म के माध्यम से उपभोक्ता तुरंत वस्तुओं का लाभ प्राप्त नहीं हो पाता।
- ई–कॉमर्स ऑनलाईन प्लेटफॉर्म के माध्यम से उपभोक्ता विभिन्न प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं में शंका बनी रहती है कि वही ठीक है या नहीं।
- ई–कॉमर्स ऑनलाईन माध्यम में उपभोक्ता एवं सेवा प्रदाता का संबंध सीमित होता है।

सोशल मीडिया के दोष :-

- सोशल मिडिया के दुष्प्रभाव को लेकर हुई शोध के अनुसार सोशल मीडिया का शिकार होने वाले विद्यार्थियों के निद्रा न आना, भावनात्मक परिपक्वता और शैक्षणिक प्रदर्शन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। जो युवा प्रतिदिन सोशल मीडिया पर ज्यादा समय व्यतीत करते हैं, उनमें अनिद्रा, चिडचिडापन, गुस्ध्सा आने की समस्या उत्पन्न हो जाती है।
- अध्ययन के परिणामों में यह भी पाया गया है कि सोशल मीडिया की आदत में महिला वर्ग की अपेक्षा पुरुष वर्ग में नींद की गुणवत्ता ज्यादा प्रभावित होती है।
- शोध के द्वितीय मापदंड में भावनात्मक परिपक्वता के स्तर का सर्वेक्षण किया है। इस संदर्भ में यह देखा गया कि सोशल मीडिया का एडिक्शन युवाओं की भावनात्मक योग्यता पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।
- विद्यार्थियों में यह देखा गया है कि पढ़ाई की आवश्यक गतिविधियों जैसे–कक्षाओं में पढ़ाई जाने वाली पाठ्य सामग्री, अध्यापकों से संवाद, पढ़ाई को लेकर सहपाठियों से पारस्परिक चर्चा जैसी अनेक

महत्त्वपूर्ण शैक्षणिक उपलब्धियों को बढ़ाने वाली गतिविधियों में न्यूनता आ जाती है। फलस्वरूप इसका सीधा दुष्परिणाम विद्यार्थी की शैक्षणिक उपलब्धि पर दिखाई देता है।

- अकेलापन महसूस करना, अवसाद, तनाव जैसी गंभीर समस्याएँ सोशल मीडिया के व्यसनी लोगों में सामान्य बात है। महिला वर्ग की भावनात्मक योग्यता पुरुष वर्ग की तुलना में ज्यादा प्रभावित होती है।

ई–कॉमर्स के प्रकार :–

1. **व्यापार से व्यापार :** जब किसी व्यापार को करने के लिए वस्तुओं एवं सेवाओं को ऑनलाईन प्लेटफॉर्म के माध्यम से सीधे तौर पर विक्रय की जाती है तब ऐसे व्यापार को व्यापास से व्यापार ई–कॉमर्स कहा जाता है।
2. **व्यापार से उपभोक्ता तक :** जब किसी व्यापार को करने के लिए वस्तुओं एवं सेवाओं को ऑनलाईन प्लेटफॉर्म के माध्यम से सीधे तौर पर किसी उपभोक्ता को विक्रय की जाती है तब ऐसे व्यापार को ई–कॉमर्स की श्रेणी में व्यापार से उपभोक्ता तक कहलाता है, जैसे– Amazon, Flipkart, Myntra, Shopee, Bilikit, Meesho, Ondoor आदि।
3. **उपभोक्ता से उपभोक्ता :** जब दो या दो से अधिक उपभोक्ताओं के मध्य वस्तुओं एवं सेवाओं के लिए होने वाले व्यापार को उपभोक्ता से उपभोक्ता ई–कॉमर्स कहते है।
4. **उपभोक्ता से व्यापार तक :** एक ऐसा व्यावासिक मॉडल है जिसके अन्तर्गत उपभोक्ता के द्वारा किसी भी ऑनलाईन प्लेटफॉर्म पर सीधे तौर पर उत्पाद, सेवा एवं सामग्री को प्राप्त कर सकते है।
5. **सरकार से व्यापार तक :** जब किसी शासकीय संस्थान के द्वारा अपनी सेवा व्यापारिक संस्थाओं को ई–कॉमर्स के माध्यम से प्रदान करती है, इस प्रकार के व्यापार को सरकार से व्यापार करना कहते है। जैसे शासन का ई–टेंडर या जेम पोर्टल।
6. **सरकार से उपभोक्ता तक :** जब किसी शासकीय सेवा को ऑनलाईन माध्यम से पात्र उपभोक्ताओं के पास वह योजना पहुंचती है, उस स्थिति को सरकार से उपभोक्ता ई–कॉमर्स कहा जाता है। जैसे– ई–मित्र सेवा, उमंग, फसल बीमा योजना, किसान मित्र एवं विभिन्न शासकीय पोर्टल।
7. **पीयर से पीयर :** जब किसी दो व्यक्तियों के मध्य्य सेवाओं एवं वस्तुओं का क्रय विक्रय किया जाता है, उस स्थिति को ई–कॉमर्स में पीयर से पीयर व्यापार कहां जाता है।

सोशल मीडिया के प्रकार :–

सोशल मीडिया के कई रूप हैं जिनमें कि इन्टरनेट फोरम, वेबलॉग, सामाजिक ब्लॉग, माइक्रोब्लागिंग, विकीज, सोशल नेटवर्क, पॉडकास्ट, फोटोग्राफ, चित्र, चलचित्र आदि सभी आते हैं। अपनी सेवाओं के अनुसार सोशल मीडिया के लिए कई संचार प्रौद्योगिकी उपलब्ध हैं।

जैसे –

- इंस्टाग्राम, फेसबुक, आईएमओ ट्विटर, विश्व का सर्वाधिक लोकप्रिय सोशल साइट है।
- सोशल खबर नेटवर्किंग साइट्स : डीडब्लू हिन्दी, बीबीसी हिन्दी, लल्लनटॉप आदि।
- समुदाय सोशल नेटवर्क : यूट्यूब।

संदर्भ ग्रंथ :–

शोध पत्र –

1. John A Naslund [a], Ameya Bondre [b], John Torous [c], Kelly A Aschbrenner [¨]Social Media and Mental Health : Benefits, Risks, and Opportunities for Research and Practice" J Technol Behav Sci. 2020 Apr 20;5(3):245–257. doi: 10.1007/s41347-020-00134-x.
2. Linda C. Ashar, J.D. Social Media Impact: How Social Media Sites Affect Society Business and Management Blog American Public University.
3. Israr Ahmed Dr. Rajesh Sharma IMPACT OF SOCIAL MEDIA ON SOCIETY: A REVIEW STUDYhttps://iaeme.com/MasterAdmin/Journal_uploads/JOM/VOLUME_10_ISSUE_2/JOM_10_02_003.pdf
4. Miao Chen Xin Xiao[3*]The effect of social media on the development of students' affective variables https://doi.org/10.3389/fpsyg.2022.1010766

इंटरनेट :–

- **www.google.co.in**
- **https://en.wikipedia.org/wiki/Social_media**
- **https://en.wikipedia.org/wiki/E-commerce**
- **https://www.meity.gov.in/**

जगदीश कुमार धुर्वे, शोधार्थी

पता :– ग्राम पोस्ट सुखतवा, तहसील इटारसी, जिला नर्मदापुरम, (म.प्र.) 461111

मो. नं. 9407840107

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 167-176

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'जुनूनिज्म' एक वैश्विक दार्शनिक सिद्धांत की मौलिक शब्द–संरचना और विश्लेषण

डॉ० मौ० मुजफ्फर अंसारी

राजनीति विज्ञान, घिस्सुपुरा–हरिद्वार, उत्तराखण्ड।

शोध सार (Abstract) :

यह शोध–पत्र 'जुनूनिज्म' नामक एक मौलिक दार्शनिक शब्द और विचारधारा की रचना, संरचना एवं विश्लेषण को केंद्र में रखता है। 'जुनूनिज्म' लेखक द्वारा गढ़ा गया एक नवाचारात्मक शब्द है, जो केवल भाषायी प्रयोग नहीं, बल्कि एक व्यापक दार्शनिक सिद्धांत का प्रतिनिधित्व करता है। यह दर्शन व्यक्ति की चेतना–शक्ति, आंतरिक प्रेरणा और सृजनशील संघर्ष को केंद्र में रखकर एक ऐसे वैश्विक जीवन–दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है, जो पारंपरिक दर्शन की स्थूल सीमाओं को लांघता है। यह सिद्धांत मानता है कि "संसार का प्रत्येक परिवर्तन, प्रत्येक क्रांति, प्रत्येक अविष्कार जुनून की उपज है, न कि केवल तर्क की"। यह सिद्धांत जीवन के राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक आंदोलनों की संयुक्त चेतना को एक नवीन दर्शन में ढालता है। आलेख में 'जुनूनिज्म' को अस्तित्ववाद, निहिलिज्म, उपयोगितावाद, लोगोथेरेपी, स्टोइकिज्म और युवा मनोविज्ञान की अंतर्धाराओं के मध्य एक स्वतंत्र वैश्विक सिद्धांत के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द (Keywords) : जुनूनिज्म, वैश्विक दर्शन, शब्द–निर्माण, मौलिक विचारधारा, चेतना–शक्ति, दार्शनिक विश्लेषण, नकारात्मकता का नवसृजन, अस्तित्वगत पीड़ा और सूत्र व्याख्या।

प्रस्तावना (Introduction) :

इतिहास गवाह है कि हर युग की गहराइयों में एक क्षण ऐसा आता है जब समूची सभ्यता एक आंतरिक मृत्यु का अनुभव करती है– जहाँ विचार थक जाते हैं, भावनाएँ कृत्रिमता की सीमाओं में कैद होने लगती हैं और चेतना दिशाहीन प्रतीत होने लगती है। ऐसे क्षणों में मानवता केवल पुनर्गठन नहीं, पुनर्जन्म की पुकार करती है। तब इतिहास एक नई चेतना की माँग करता है। उसी माँग से जन्म लेता है एक नया दर्शन जो न केवल सोचने की दिशा बदलता है, बल्कि जीने का अर्थ भी। जुनूनिज्म एक मौलिक और वैश्विक दर्शन है, जो मानव चेतना के जुनून को दर्शन का केंद्र बनाता है। यह सिद्धांत मानता है कि एक वैश्विक आवाहन सभ्यताओं के इतिहास में कई विचारधाराएं जन्मी कुछ पुस्तकालयों में सिमट गईं, कुछ सड़कों पर आंदोलनों का रूप बन गईं, और कुछ आत्मा की गहराई से निकलकर युगों को झकझोर गईं। 'जुनूनिज्म' उन्हीं में से एक नई और जीवंत विचारधारा भी है जो न केवल विचारों से बनी है, बल्कि संघर्ष, वेदना, और आत्मिक ज्वाला से तपकर निखरी है।

हम एक ऐसे युग में जी रहे हैं जहाँ विचारों को प्रचार से दबाया जाता है, और आत्मा को डेटा में बदल दिया गया है। 'जुनूनिज्म' उन टूटे हुए, थके हुए, और नकारात्मक सोच से घिरे हुए लोगों के भीतर एक नयी लौ जलाता है, जो फिर भी हार मानने से इनकार करते हैं। और मेरे जुनून को गति प्रदान करते है "मेरे विचार मुझे थकाते हैं, पर मेरा जुनून कम नहीं होता"। पर आधारित यह दर्शन भारत की भूमि पर जन्मा, पर इसकी गूंज वैश्विक होगी। यह 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की पुनर्परिभाषा है कि हर आत्मा, हर देश, हर वर्ग में जुनून एक साझा ऊर्जा है। यह थॉमस कुह्न के 'पैराडाइम शिफ्ट', आइंस्टीन की 'कल्पना से बड़ी वास्तविकता', और कार्ल मार्क्स के 'क्रांतिकारी चेतना' के बीच से एक नया पुल बनाता है।

शोध का उद्देश्य :

इस शोध का प्रमुख उद्देश्य "जुनूनिज्म" की मौलिक शब्द–संरचना को परिभाषित करना और उसके दार्शनिक स्वरूप को स्पष्ट करना है, ताकि इसे वैश्विक चिंतन–परंपरा में एक स्वतंत्र स्थान प्रदान किया जा सके। शोध यह प्रतिपादित करता है कि "जुनूनिज्म" केवल एक भाषाई प्रयोग न होकर एक समग्र दार्शनिक प्रतिपादन है, जो मानव–चेतना की गहराइयों से उत्पन्न होकर व्यक्ति को सक्रियता, संघर्ष और सृजनशीलता की ओर प्रेरित करता है। यह सिद्धांत यह भी स्पष्ट करता है कि सतही रूप से नकारात्मक प्रतीत होने वाले विचार और अनुभव, यदि समयबद्ध अनुशासन और विधिवत कर्म के साथ रूपांतरित किए जाएँ, तो वे व्यक्ति के भीतर छिपे जुनून को और अधिक प्रखर बनाते हैं तथा उसकी सफलता का वास्तविक आधार निर्मित करते हैं। इस प्रकार, "जुनूनिज्म" को केवल एक वैचारिक प्रवृत्ति न मानकर जीवन–साधना की एक सक्रिय दार्शनिक पद्धति के रूप में स्थापित किया गया है, जो नकारात्मकता को सकारात्मक ऊर्जा में परिवर्तित कर मानव–अस्तित्व को नई दिशा प्रदान करती है। साथ ही, यह दर्शन दार्शनिक विमर्श को एक नवाचारपूर्ण और वैश्विक आयाम प्रदान करता है, जिससे समकालीन बौद्धिक जगत को एक नई दिशा और दृष्टि मिलती है।

जुनूनिज्म की व्युत्पत्ति (Etymology) :

1. **व्युत्पत्ति (Etymology)** 'जुनूनिज्म' शब्द एक भाषायी शब्द और एक प्रत्यय से मिलकर बना है :– जुनूऩइज्म = जुनूनिज्म।

(क) जुनून (Junoon) यह शब्द अरबी मूल का है, जिसका अर्थ होता है :– उग्र आवेग, तीव्र मानसिक आवेश, आत्मा की ऊर्जावान उत्तेजना। वह भावना जो किसी व्यक्ति को आत्म–सीमा से आगे ले जाए।

'जुनून' उर्दू, फारसी और हिंदी में भी अपनाया गया है और इसमें भावनात्मक तीव्रता, आत्मदाह, और रचनात्मक वेग समाहित है।

(ख) इज्म (Ism) यह शब्द आधुनिक विचारधाराओं के निर्माण में प्रयुक्त होता हैं जो यूनानी लैटिन मूल से आया हुआ प्रत्यय है जिसका प्रयोग किसी दर्शनवाद या सैद्धांतिक प्रणाली को व्यक्त करने के लिए होता है। उदाहरणस्वरूप आदर्शवाद (Idealism), यथार्थवाद (Realism), (जुनूनवाद/जुनूनिज्म) (Junoonism)

जुनूनिज्म की उत्पत्ति (Origin) :-

'जुनूनिज्म' का उद्भव किसी विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला या बौद्धिक अकादमी में नहीं हुआ, बल्कि वह जीवन की कठोर वास्तविकताओं और सामाजिक–राजनीतिक विडम्बनाओं की प्रतिक्रिया स्वरूप विकसित हुआ। न्यायपालिका की उदासीनता, धार्मिक सत्ता की चालबाजियाँ और समाज की निरंतर असंवेदनशीलता ने मेरे भीतर

गहरे विद्रोह का संचार किया। परम्परागत दर्शनों में यह विश्वास बार–बार प्रतिपादित किया गया कि केवल सकारात्मक सोच से जीवन की समस्त जटिलताएँ सुलझ सकती हैं। किंतु मेरे अनुभवों ने इस धारणा को मुझ पर असत्य सिद्ध किया। मैंने देखा कि व्यक्ति चाहे कितनी भी निष्ठा और आशावाद के साथ कर्म करे, फिर भी असफलता और अन्याय उसके पथ से हटते नहीं। इस विफलता ने उस दार्शनिक प्रवृत्ति पर प्रश्नचिह्न खड़ा किया, जो 'सकारात्मकता' को सार्वभौमिक औषधि के रूप में प्रस्तुत करती रही है। वास्तव में ऐसा आशावाद मेरे दृष्टिकोण से एकांगी, अधूरा और पलायनवादी है, क्योंकि जीवन का संघर्ष केवल सकारात्मक सोच से नहीं, बल्कि आलोचनात्मक विवेक, प्रतिरोध की चेतना और संकल्प की प्रखरता से जीता जाता है। मेरे भीतर उपजे असहाय क्रोध, अविश्वास और पराक्रमी संकल्प ने नकारात्मकता को निराशा नहीं बनने दिया, बल्कि उसे रचनात्मक ऊर्जा में रूपांतरित किया। इसी रूपांतरित ऊर्जा ने 'जुनूनिज्म' को जन्म दिया– 'एक ऐसा दर्शन जो यथार्थ का प्रत्यक्ष सामना करते हुए अन्याय, शोषण और पाखंड के विरुद्ध संघर्ष को मानव अस्तित्व की केन्द्रीय शर्त मानता है।'

कार्ल मार्क्स ने पूँजीवाद की आलोचना करते हुए ऐतिहासिक भौतिकवाद का और वर्ग–संघर्ष को इतिहास की धुरी, का प्रतिपादन किया। तो जरेमी बेन्थम ने सुखवादी यथार्थवाद को आधार बनाकर उपयोगितावाद की नींव रखी और सुख को गणना की इकाई बनाया। मैंने इन दोनों की भांति, विचारों के पथिक नहीं बल्कि अनुभवों के सहारे दर्शन रचने की कोशिश की हैं। मानव सभ्यता के विकासात्मक इतिहास में जब भी कोई नई चेतना, नई विचारधारा या नया दर्शन जन्मा है, वह केवल बुद्धि की गहराइयों से नहीं, बल्कि उस आग से उत्पन्न हुआ है जो भीतर सुलगती है, जिसे संसार जुनून कहता है। यही अग्नि जब चेतना के तल पर उतरती है, तब वह केवल एक भावना नहीं रहती, बल्कि एक दर्शन बन जाती है– जीने का तरीका, सोचने का तरीका, रचने का तरीका। 'जुनूनिज्म वह दर्शन है जो मानता है कि मानवीय अस्तित्त्व की दिशा और उसकी सार्थकता, किसी बाहरी व्यवस्था से नही, बल्कि व्यक्ति के भीतर विद्धमान सच्चे और उद्धेश्यमूलक जुनून से निर्धारित होती है।'

नकारात्मकता का नवसृजन :–

जीवन के प्रत्येक पहलू– संघर्ष, संबंध, भविष्य, और आत्मा के प्रति जब मेरे भीतर नकारात्मक विचार उभरने लगे, तो मैंने उन्हें दबाने की बजाय जीवन को अपनी शर्तों पर स्वीकारा। वे नकारात्मकताएँ सतही शिकायतें नहीं थीं, वे मेरे अस्तित्व की गहराई में जमी हुई वेदनाएँ थीं, जिन्होंने मुझे पागलपन की हद तक पहुँचा दिया था। लेकिन उसी अंधकार में, जहाँ कोई अर्थ नहीं था, वहीं एक नई चिंगारी जली। मैंने देखा कि नकारात्मक विचार केवल विनाश नहीं करते– यदि उनसे टकराया जाए, तो वे भीतर एक नई दृष्टि को भी जन्म देते हैं। मैंने जाना कि जब पीड़ा चिंतन बनती है, और निराशा से विद्रोह जन्म लेता है– तो नकारात्मकता केवल संकट नहीं रहती, वह एक दार्शनिक आग में बदल जाती है। और इसी आग ने मुझे केवल आत्म–बचाव नहीं, एक नई विचारधारा के जन्मदाता के रूप में ढाल दिया। यही वह आंतरिक क्रांति थी, जिसने मुझे 'जुनूनिज्म' का निर्माणकर्ता बनाया– एक ऐसा दर्शन जिसने नकारात्मकता को आत्मा के निर्माण का औजार बना दिया, और पीड़ा को विचार की ज्वाला। यह दर्शन पैराडाइम शिफ्ट पर आधारित है जिसका मतलब है किसी चीज को देखने या करने के तरीके में एक मौलिक परिवर्तन। यह एक ऐसा बदलाव है जो किसी मौजूदा दृष्टिकोण या सोच के तरीके को पूरी तरह से बदल देता है और उसे एक नए, नजर से देखता और व्याख्या करता है।

आज का युग सफलता की दिखावटी दौड़ में उलझा हुआ है। लोग काम तो कर रहे हैं, लेकिन क्यों कर रहे हैं, इसका जवाब खो चुके हैं। इसी खोए हुए उत्तर की तलाश है जुनूनिज्म। यह विचारधारा मानती है कि अगर किसी भी कर्म के पीछे जुनून नहीं है, तो वह कर्म सिर्फ जीविका का साधन है, जीवन का नहीं। वर्तमान विश्व में जहां अवसाद, निराशा और भ्रम बढ़ रहा है, वहाँ जुनूनिज्म युवाओं, संघर्षरत व्यक्तियों और विचारशील समाज के लिए नई आशा, दिशा और दर्शन प्रदान करता है। यह एकात्म मानवता और आत्मिक क्रांति का दर्शन है। जुनूनिज्म हमें याद दिलाता है कि असली क्रांति वहाँ से शुरू होती है जहाँ व्यक्ति अपने भीतर की अंतरूप्रेरणा को पहचान लेता है। चाहे वह लेखनी हो, संगीत हो, शिक्षा हो, या कोई आंदोलन– यदि वह जुनून से रहित है, तो वह सिर्फ औपचारिकता है। जुनूनिज्म वह सिद्धांत है जहाँ व्यक्ति स्वयं को परिभाषित नहीं करता, वह स्वयं का निर्माण करता है– उस जुनून से जो विकल्पहीन होने पर भी जीवित रहता है।

विश्लेषणात्मक आधार :-

यह शीर्षक शोध को केवल सृजनात्मक नहीं, बल्कि विश्लेषणात्मक भी बनाता है। इसमें शब्द की व्युत्पत्ति, दार्शनिक संरचना, तुलनात्मक अध्ययन, और उसके समाजशास्त्रीय व व्यवहारिक प्रभावों की गहराई से विवेचना सम्मिलित है। यह विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि 'जुनूनिज्म' कोई काव्यात्मक प्रतीक नहीं, बल्कि व्यवस्थित, तर्क–संगत और प्रयोगक्षम दार्शनिक ढांचा है।

(1) 'जुनूनिज्म' : शब्द की मौलिकता (Originality of Term) :

'जुनूनिज्म' शब्द मौलिक रूप से अरबी/उर्दू के शब्द 'जुनून' और अंग्रेजी प्रत्यय '-ism' को एकीकृत करके रचा गया है, जो इसे वैश्विक भाषिक पुल पर खड़ा करता है। यह न केवल भाषाई नवाचार है, बल्कि दर्शनात्मक रूप से भी एक मौलिक प्रतिपादन है। यह शब्द पूर्णतः स्वनिर्मित (Self-coined) है, जिसकी जड़ें लेखक के व्यक्तिगत अनुभव, आत्म–संघर्ष और रचनात्मक चेतना में निहित हैं। यह शब्द केवल एक भाव या प्रतिक्रिया नहीं, बल्कि एक दर्शनात्मक ऊर्जा है, जो विचार, भावना और उद्देश्य के बीच सेतु का कार्य करती है। इसकी रचना मौलिक इसलिए मानी जाती है क्योंकि यह किसी पूर्व–प्रचलित दर्शन या अवधारणा का विस्तार नहीं, बल्कि एक स्वतंत्र वैचारिक बीज है। 'जुनूनिज्म वह शक्ति है जो सोई हुई आत्मा को जगा देती है– वह आवाज जो कहती है : उठो, स्वयं को जानो, और स्वयं को रचो!'

(2) 'जुनूनिज्म' : एक मौलिक विचारधारा के रूप में (Junoonism as a pioneering Ideology) :

21वीं सदी की सामाजिक, मानसिक और दार्शनिक जटिलताओं के मध्य जुनूनिज्म एक ऐसी नवविचारित जीवन–दृष्टि के रूप में उभरता है, जो व्यक्ति के आंतरिक स्वत्व, आवेग और आत्मिक चेतना को केंद्र में रखता है। यह विचारधारा मनुष्य को पारंपरिक बौद्धिक, सामाजिक और राजनीतिक संरचनाओं के प्रतिरोध में सक्रिय करता है। जहाँ पारंपरिक दर्शन आत्मा, तर्क या चेतना पर केंद्रित हैं, वहीं जुनूनिज्म 'क्रिया', 'संघर्ष' और 'जुनून' को मानवीय अस्तित्व का मूल तत्व स्वीकार करता है। यह मानता है कि व्यक्ति की वास्तविक पहचान उसकी तर्क–शक्ति से नहीं, बल्कि उसकी जुनून–शक्ति से निर्मित होती है। जुनूनिज्म किसी परंपरा का अनुकरण नहीं है, अपितु एक मौलिक बौद्धिक प्रयास है, जिसकी जड़ें लेखक की आत्मानुभूति, संघर्षशील अनुभव और सृजनात्मक आत्मबोध में निहित हैं। इस दर्शन का उद्‌गार लेखक की इस घोषणा में स्पष्ट होता है– 'मेरे विचार किसी परंपरा की छाया नहीं, वे मेरी आत्मा की ज्वाला से पके हुए बीज हैं, जिन्हें मैंने अपने अंतःकरण के श्रम

से सींचा है।'

(3) 'जुनूनिज्म' : एक मौलिक दर्शन के रूप में (Junoonism as a pioneering philosophy) :

यह दर्शन मानता है कि जुनून केवल भावना नहीं, बल्कि चेतना की उच्चतम ऊर्जा है– जो जब विचारों के साथ संयोजित होती है, तो क्रांति, सृजन और आत्ममोक्ष तक का मार्ग बनती है। यह 'कार्य–संचालित आत्मा' का दर्शन है– जिस में इच्छा नहीं, बल्कि अविराम समर्पण प्रधान है। 'जुनूनिज्म' कोई पारंपरिक विचारधारा का पुनरावर्तन नहीं, बल्कि एक मौलिक और आत्म–प्रक्षिप्त दर्शन है, जिसकी उत्पत्ति व्यक्ति की आंतरिक अग्नि, विचार की पीड़ा, और निर्माण की तड़प से हुई है। यह दर्शन मानता है कि मानव अस्तित्व की गति केवल बुद्धि से नहीं, बल्कि उस अगाध जुनून से संचालित होती है जो उसे थकने के बावजूद चलने के लिए प्रेरित करता है। 'जुनूनिज्म' जीवन को केवल जीने का ही नहीं, बल्कि स्वयं को सृजित करने का काव्यात्मक और सैद्धांतिक प्रयास मानता है। यह दर्शन अपने भीतर एक ऐसा भावनात्मक और बौद्धिक संतुलन स्थापित करता है, जहाँ विचार थकते हैं, पर जुनून झुकता नहीं। इसी संतुलन में एक नई चेतना जन्म लेती है, जो व्यक्ति को स्वतः प्रेरित, सृजनशील, और उद्देश्यपूर्ण संघर्ष के मार्ग पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। 'जुनूनिज्म' इस अर्थ में मौलिक है कि यह किसी स्थापित पाश्चात्य या भारतीय दर्शन की छाया नहीं है, बल्कि एक नया बीज है– जो समकालीन मानव व् आधुनिक मानव के अंतर्मन से उत्पन्न हुआ है, और उसकी वैश्विक पीड़ा, जिजीविषा और रचनाशीलता को सिद्धांत का स्वरूप देता है।

(4) 'जुनूनिज्म' : एक मौलिक सिद्धांत के रूप में (Junoonism as a pioneering doctrine) :

'जुनूनिज्म' केवल एक दार्शनिक भाव या विचारधारा नहीं है, बल्कि यह एक सुनियोजित, क्रमबद्ध और आत्म–संज्ञापित सिद्धांत के रूप में प्रतिष्ठित होता है। इसकी विशेषता यह है कि यह विचार की गति को जीवन की क्रिया से जोड़ते हुए, एक संपूर्ण जीवन–दृष्टिकोण और व्यवहारिक दिशा प्रदान करता है। जुनूनिज्म को एक सार्वभौमिक सिद्धांत के रूप में देखा जा सकता है, जिसमें पाँच स्तंभ (Pillars) होते हैं।

जुनूनिज्म के पाँच स्तंभ (संक्षिप्त प्रस्तुति) :

1. आत्म–जागरण (Self-Awakening) :

मनुष्य को तब तक कोई भी बाहरी दर्शन नहीं बदल सकता जब तक वह अपने भीतर छिपे अस्तित्व की पुकार को नहीं सुनता। आत्म–जागरण ही जुनूनिज्म का प्रारंभिक बिंदु है।

2. संघर्षात्मक चेतना (Strugglistic Consciousness) :

संघर्ष को केवल बाधा नहीं, बल्कि निर्माण का औजार माना गया है। संघर्ष के बिना कोई भी विचार क्रियाशील नहीं होता।

3. सृजनात्मक उद्दण्डता (Creative Rebellion) :

यह स्तंभ जीवन में उस रचनात्मक असहमति की बात करता है, जो परिवर्तन का बीज बनती है। यह उद्दण्डता विध्वंस नहीं करती, निर्माण करती है।

4. मूल्यगत स्वतंत्रता (Value-Based Liberty) :

आधुनिकता की अराजक स्वतंत्रता से अलग, यह स्तंभ एक ऐसी स्वतंत्रता की मांग करता है जो मूल्यपरक हो, उत्तरदायित्व के साथ हो।

5. वैश्विक सह-अस्तित्व (Global Co-Existence) :

जुनूनिज्म केवल आत्मकेंद्रित नहीं, बल्कि वैश्विक है। यह सह–अस्तित्व, सांस्कृतिक विविधता और मानवीय करुणा को दर्शन का मूल मानता है।

एक वैश्विक दार्शनिक सिद्धांत के रूप में स्थापना :

'जुनूनिज्म' केवल भारतीय या पाश्चात्य पृष्ठभूमि तक सीमित नहीं, बल्कि यह समकालीन मानवता के सार्वभौमिक अनुभवों को संबोधित करता है। यह एक ऐसा दर्शन है जो व्यक्ति के भीतर व्याप्त चेतना–शक्ति, थकन, संघर्ष और सृजन को एक समन्वित सिद्धांत में रूपांतरित करता है। इसके केंद्र में वह आत्मा है जो टूटने के बावजूद निर्माण करती है– वही जुनून, वही जीवन की आग, यही 'जुनूनिज्म'।

'जुनूनिज्म वह अस्तित्वगत विद्रोह है, जहाँ आत्मा जीवन से नहीं लड़ती, बल्कि उसे गढ़ती है– अनंत पीड़ा को सृजन में बदलते हुए।'

अंतिम सूत्र :

(1) **सूत्र** – 'जुनूनिज्म = (अस्तित्वगत पीड़ा चिंतनशील चेतना) (सहज विद्रोह÷नियतिवादी स्वीकार्यता)'

Junoonism - (Existential Pain × Reflective Consciousness) + (Intuitive Rebellion ÷ Deterministic Submission)

(2) **सूत्र व्याख्या :**

'अस्तित्वगत पीड़ा (Existential Pain) 'जीवन की वह अंतहीन बेचैनी जो मनुष्य के अस्तित्व से जन्म लेती है, न कि केवल किसी बाहरी घटना से।'

यह वह पीड़ा है जो किसी भूख, गरीबी, या विफलता से अधिक गहरी होती है। यह उस क्षण जन्म लेती है जब कोई व्यक्ति 'मैं क्यों हूँ?', 'मुझे क्या बनना है?', 'मेरे जीवन का अर्थ क्या है?' जैसे प्रश्नों को गहरायी से सोचता है। यह पीड़ा उन आत्माओं के लिए है जो केवल जीते नहीं, बल्कि अर्थपूर्ण जीने की तड़प में जलते हैं।

'जुनूनिज्म' में यह पीड़ा ईंधन है– यही वो आग है जो आत्मा को चेतन करती है।

चिंतनशील चेतना (Reflective Consciousness) : 'जब मनुष्य अपनी पीड़ा को केवल सहता नहीं, बल्कि उसका विश्लेषण करता है, समझता है, और उससे प्रश्न करता है– तब उसकी चेतना चिंतनशील बनती है।' यह वह अवस्था है जहाँ व्यक्ति सिर्फ रोता नहीं, बल्कि यह सोचता है कि 'मेरे आंसुओं का मूल्य क्या है?' यह दर्शन की आत्मा है– बिना चेतना के पीड़ा सिर्फ दुर्भाग्य है, पर चेतना से पीड़ा दर्शन बन जाती है। यही तत्व जुनून को अंधे उबाल से निकालकर एक दिशा–युक्त ज्वाला में बदलता है।

सहज विद्रोह (Spontaneous Rebellion) : 'वह विद्रोह जो विवेक से नहीं, हृदय की गहराई से, आत्मा की वेदना से स्वतः फूट पड़ता है।' यह विद्रोह क्रांति की योजना नहीं, बल्कि असह्य यथार्थ की प्रतिक्रिया है। यह तब जन्म लेता है जब मनुष्य की अंतरात्मा किसी भी अन्याय, जड़ता या नियति को अस्वीकार कर देती है– बिना पूर्वनियोजित उद्देश्य के। यह विद्रोह तर्क पर नहीं, जुनून पर आधारित होता है। और यही विद्रोह इतिहास बनाता है। 'जुनूनिज्म में यह विद्रोह सृजनात्मक ऊर्जा है– जो निर्माण के लिए विध्वंस का साहस रखता है।

नियतिवाद स्वीकार्यता (Deterministic Acceptance) : 'वह मानसिक अवस्था जिसमें मनुष्य यह

मान लेता है कि जो हो रहा है, वही होना था और वह उसका विरोध करना छोड़ देता है।' यह दर्शन के विरुद्ध सबसे गहरा जहर है। जब व्यक्ति नियति को अंतिम सत्य मान लेता है, तो उसकी आत्मा सक्रिय से निष्क्रिय, और चेतना संघर्ष से समझौते में बदल जाती है।

जुनूनिज्म इसे विद्रोह के समीकरण में हर मान्यता का विभाजक (Denominator) मानता है– जितना अधिक यह स्वीकार होगा, उतना कम होगा विद्रोह। इसीलिए इसे सूत्र में विभाजन के रूप में रखा गया है : जितनी कम नियतिवाद स्वीकार्यता, उतना अधिक प्रभावी विद्रोह। पॉल के अनुसार–मनुष्य का कोई पूर्व–निर्धारित अर्थ नही होता– पहले हम अस्तित्व में आते है फिर अपने अर्थ का निर्माण स्वंय करते है।

(3) अंतिम कथन :

'जुनूनिज्म में पीड़ा केवल अनुभव की जाती है, उसे अवलोकित और गहराई से समझा जाता है। यह चेतना के प्रयोग में परखा और सघन रूप से आत्मसात किया जाता है, विद्रोह के रूप में व्यक्त किया जाता है, और नियति की बंदिशों को पार करते हुए एक नवीन अस्तित्व की नींव स्थापित करता है।'

जुनूनिज्म बनाम अन्य विचारधाराएँ :-

1. जुनूनिज्म बनाम उपयोगितावाद (Utilitarianism)

उपयोगितावाद : जरेमी बेन्थम ने उपयोगितावाद में यह दर्शाया है कि किसी कार्य की नैतिकता इस बात पर निर्भर करती है कि वह अधिकतम संख्या के लिए अधिकतम सुख लाता है। यह एक गणनात्मक सिद्धांत है, जहाँ लाभ–हानि का तुलनात्मक मापन केंद्रीय है।

जुनूनिज्म इस समीकरण को मौलिक रूप से चुनौती देता है। यह मानता है कि कोई भी कार्य, चाहे वह बहुसंख्यक को लाभ पहुँचा रहा हो, यदि उसमें आत्मा की ज्वाला नहीं है, तो वह अर्थहीन है। जुनूनिज्म में मूल्य का निर्धारण 'जुनून की प्रामाणिकता' से होता है, न कि बाहरी परिणाम से। यह एक तरह से 'आत्मिकता–केन्द्रित मूल्यवाद' (Soul-centric Valuation) प्रस्तुत करता है, जहाँ गहराई, आवेग और आंतरिक तात्विकता प्रधान है।

2. जुनूनिज्म बनाम निहिलिज्म (Nihilism)

निहिलिज्म या शून्यवाद : फ्रेडरिक नीत्शे के अनुसार, शून्यवाद वह अवस्था है जहाँ जीवन, नैतिकता और अस्तित्व सब निरर्थक प्रतीत होते हैं। शून्यवाद के विचार को एक ऐसे चरित्र के माध्यम से प्रस्तुत किया है जो मनुष्य को सिखाता है कि उसे अपने जीवन का अर्थ स्वयं खोजना होगा। यह पुस्तक शून्यवाद को एक चुनौती के रूप में देखती है। यह एक प्रकार की 'सैद्धांतिक अनास्था' है जो कहती है कि कोई परम सत्य या उद्देश्य नहीं है।

जुनूनिज्म इस शून्यता को निषेध नहीं करता, बल्कि उसे स्वीकार कर उसकी आग में पुनः सृजन करता है। यह निहिलिज्म को एक 'कच्चा आकाश' मानता है, जिसे आत्मा की आग से रंगा जा सकता है। नकारात्मकता जुनूनिज्म के लिए बाधा नहीं बल्कि "कच्चा रसायन" है– जो नए जीवन–तात्विकों की रचना करता है।

3. जुनूनिज्म बनाम अस्तित्ववाद (Existentialism)

अस्तित्ववाद : सोरेन कीर्केगार्ड ने इस बात को रेखांकित किया है कि जीवन में कोई पूर्व–निर्धारित अर्थ नहीं है– मनुष्य को स्वयं ही अपने जीवन का अर्थ बनाना होता है और तर्क दिया कि निराशा एक ऐसी स्थिति

है जिसमें व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता से बचने की कोशिश करता है, लेकिन इससे वह और अधिक दुखी होता है। जुनूनिज्म अस्तित्ववाद से सहमत होते हुए भी, एक निर्णायक मोड़ प्रदान करता है। वह कहता है– 'अर्थ केवल बनता नहीं, जलता भी है।'

यह दर्शन, अर्थ निर्माण को केवल बौद्धिक या तर्कसंगत प्रक्रिया नहीं मानता, बल्कि उसे 'ज्वालामय आध्यात्मिक उद्यम' में परिवर्तित करता है। अस्तित्ववाद जहां 'अकेलेपन' को अस्तित्व का सत्य मानता है, जुनूनिज्म उस अकेलेपन को एक "जुनूनी ब्रह्मांड" में परिवर्तित कर देता है।

4. जुनूनिज्म बनाम आध्यात्मवाद (Spiritualism)

आध्यात्मवाद : भगवत गीता के अनुसार आध्यात्मवाद आत्मा, पुनर्जन्म, कर्म और ईश्वर की उपस्थिति में विश्वास करता है। यह आत्मा को शरीर से परे मानता है और जीवन की समस्याओं का उत्तर एक ईश्वरीय व्यवस्था में खोजता है।

जुनूनिज्म आध्यात्मिकता को नकारता नहीं, लेकिन उसमें ठहराव नहीं चाहता। जुनूनिज्म कहता है कि आत्मा कोई शांत, स्थिर शक्ति नहीं– बल्कि एक प्रज्ज्वलित चिंगारी है जो स्वयं सृष्टि कर सकती है। यह ईश्वर से मिलने के लिए नहीं, स्वयं को ईश्वर की तरह रचने के लिए प्रेरित करता है।

5. जुनूनिज्म बनाम स्टॉयिकवाद (Stoicism)

स्टॉयिक दर्शन : सिटियम के जेनो के अनुसार स्टॉयिकवाद का मूल तत्व है– आत्म–नियंत्रण, भावनाओं पर वश, और नियति की स्वीकृति। यह कहता है कि सुख का मार्ग आत्म–नियंत्रण और आंतरिक संतुलन से गुजरता है।

जुनूनिज्म, स्टॉयिक संयम को आध्यात्मिक जड़ता मानता है। वह कहता है कि भावनाओं को नियंत्रित नहीं, बल्कि जागृत, तेजस्वी और सृजनशील बनाना चाहिए। जहाँ स्टॉयिक व्यक्ति 'स्वीकार करता है', वहीं जुनूनी व्यक्ति 'परिवर्तन करता है'।

6. जुनूनिज्म बनाम आदर्शवाद (Idealism)

आदर्शवाद : प्लेटो आदर्शवाद में यह मानता है कि यथार्थ से परे एक शुद्ध 'आदर्श' या 'विचार' होता है, जो अधिक सत्य है। यह दर्शन तर्क और विचार की श्रेष्ठता पर बल देता है। जुनूनिज्म आदर्शवाद के इस बौद्धिक केंद्रवाद को तोड़ता है। यह विचार को केवल एक आरंभिक चिंगारी मानता है– लेकिन उसकी परिपूर्णता केवल विचार में नहीं, क्रिया की आग में होती है। जुनूनिज्म का आदर्श केवल सोचा नहीं जाता– वह जिया, जला, और लड़ा जाता है।

7. जुनूनिज्म बनाम लोगोथेरपी (Logotherapy)

लोगोथेरपी, डॉ. विक्टर फ्रैंकल द्वारा प्रतिपादित लोगोथेरपी एक मनोवैज्ञानिक दर्शन है, जो यह मानता है कि जीवन का अर्थ ही मनुष्य की सबसे बड़ी प्रेरणा है और वह अर्थ कठिनाई में खोजा जा सकता है। जुनूनिज्म इस दृष्टिकोण की सराहना करता है, लेकिन उससे आगे जाता है। जुनूनिज्म कहता है कि अर्थ केवल खोजा नहीं जाता, बल्कि गढ़ा जाता है और वह गढ़ाव जुनून के हथौड़े और आत्मा की भट्टी में होता है। फ्रैंकल कहता है कि 'मनुष्य किसी भी 'क्यों' को सह सकता है यदि उसके पास कोई 'क्यों' हो,' जुनूनिज्म कहता है 'अगर 'जुनून' हो, तो वह क्यों भी स्वयं रच लेता है।' जुनूनिज्म कोई तात्कालिक व्यवस्था नहीं, बल्कि आत्मिक आग

का वैश्विक दर्शन है। इसमें विचार की परछाई नहीं, चेतना की लपट है। जहाँ अन्य दर्शन जीवन को समझते हैं, वहाँ जुनूनिज्म उसे पुनः गढ़ता है।

मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य :

जुनूनिज्म व्यक्ति की चेतनात्मक ऊर्जा को सक्रिय करता है। यह आत्मबल, लक्ष्य, और प्रतिबद्धता को आत्म मूल्यांकन से जोड़कर 'Intrinsic Motivation' को जीवन के केंद्र में रखता है। यह दर्शन युवा मन की उस बेचैनी को अर्थ देता है जिसे पारंपरिक दर्शन अक्सर अस्वीकार करते हैं। लोग आत्महत्या क्यों करते हैं? क्योंकि उनका अस्तित्व अर्थहीन लगता है। लेकिन जो व्यक्ति जुनून से भरा होता है, वह भूखा रहकर, संघर्ष करके भी जीवित रहता है– क्योंकि उसे 'क्यों जीना है' का उत्तर पता है। डॉ. विक्टर फ्रैंकल ने कहा 'जिसके पास जीने का कारण है, वह लगभग किसी भी तरह का जीवन सहन कर सकता है'।

निष्कर्ष (Conclusion) :

निष्कर्षतय 'जुनूनिज्म' एक ऐसा मौलिक दार्शनिक सिद्धांत है, जिसकी कल्पना केवल भाषायी नवाचार के रूप में नहीं, बल्कि एक गहरी आत्म–संवेदना, संघर्षशील अनुभव और सृजनात्मक चेतना के फलस्वरूप की गई है। इस शोध के माध्यम से यह सिद्ध किया गया है कि 'जुनूनिज्म' कोई पारंपरिक पुनरावृत्ति नहीं, अपितु वर्तमान मानव–चेतना की गहराइयों से उपजा एक ऐसा दर्शन है, जो विचार, भावना और कर्म को एक समग्र तत्त्व में पिरोता है। यह दर्शन उन परिस्थितियों से जन्म लेता है जहाँ व्यक्ति थक चुका होता है– मानसिक, सामाजिक, और आध्यात्मिक स्तरों पर परंतु उसकी आंतरिक चेतना अब भी संघर्षरत रहती है। 'जुनूनिज्म' उसी चेतना का नाम है, जो थकान को साधन बनाकर एक नए निर्माण की प्रक्रिया को जन्म देती है।

शोध के निष्कर्ष स्वरूप 'जुनूनिज्म' में वह सामर्थ्य है, जो समकालीन दर्शन की ठहरावग्रस्तता को तोड़कर एक नया विमर्श रच सकता है। यह दर्शन शिक्षाशास्त्र, साहित्य, मनोविज्ञान, राजनीति, और आत्म–विकास जैसे विविध क्षेत्रों में उपयोगी और प्रासंगिक बन सकता है।

अब्राहम मासलो कहते है कि प्रत्येक मनुष्य में कुछ बनने की आन्तरिक प्रेरणा होती है– और बाकी सभी जरूरतें पूरी हो जाती है, तब यह स्व–विकास की तीव्र इच्छा सामने आती है।

संदर्भ :–

1. अंसारी, एम०एम०. 'जुनूनिज्म : एक वैश्विक दार्शनिक सिद्धांत,' (अप्रकाशित ग्रन्थ, 2023)
2. वही।
3. प्लैट्स, जॉन टी. उर्दू, शास्त्रीय हिंदी और अंग्रेजी का शब्दकोश। ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1884।
4. शुक्ल, सुरेश चंद्र. दार्शनिक शब्दकोश, ENTRY "वाद / वादिता" (नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2012),
5. मार्क्स, कार्ल, और फ्रेडरिक एंगेल्स। द कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो। लंदन : 1848।
6. बेंथम, जेरमी। एन इंट्रोडक्शन टू द प्रिंसिपल्स ऑफ मॉरल्स एंड लेजिस्लेशन। 1789।
7. अंसारी, एम० एम०। जुनूनिज्म : एक वैश्विक दार्शनिक सिद्धांत। अप्रकाशित ग्रंथ, 2024।
8. कून, थॉमस एस। द स्ट्रक्चर ऑफ साइंटिफिक रिवॉल्यूशन्स। शिकागो : यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस,

1962।
9. अंसारी, एम०एम०. 'जुनूनिज्म : एक वैश्विक दार्शनिक सिद्धांत,' (अप्रकाशित ग्रन्थ, 2023)
10. वही।
11. सार्त्र, ज्यां–पॉल। बीइंग एंड नथिंगनेस। न्यूयॉर्क : फिलॉसॉफिकल लाइब्रेरी, 1956।
12. अंसारी, एम०एम०. 'जुनूनिज्म : एक वैश्विक दार्शनिक सिद्धांत,' (अप्रकाशित ग्रन्थ, 2023)
13. बेंथम, जेरमी। एन इंट्रोडक्शन टू द प्रिंसिपल्स ऑफ मॉरल्स एंड लेजिस्लेशन। 1789।
14. नीत्शे, फ्रेडरिक। थस स्पोक जरथुस्त्र। केम्निट्ज : एर्न्स्ट श्माइट्जनर, 1883।
15. कीर्केगार्द, सोरेन। द सिकनेस अन्टू डेथ। अनुवाद : हावर्ड वी. हॉन्ग और एडना एच. हॉन्ग। प्रिंसटन : प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1980।
16. भगवद्गीता। अध्याय 2 और 8।
17. जेनो ऑफ सिटियम। स्टोइकवाद। लगभग 300 ईसा पूर्व।
18. प्लेटो। द रिपब्लिक। अनुवाद : डेसमंड ली। लंदन : पेंगुइन बुक्स, 2007।
19. विक्टर ई. फ्रैंकल, मैन्स सर्च फॉर मीनिंग (बोस्टन : बीकन प्रेस, 1946)।
20. विक्टर ई. फ्रैंकल, मैन्स सर्च फॉर मीनिंग, अनुवाद : इल्से लैश (बोस्टन : बीकन प्रेस, 2006), 104।
21. मैस्लो, अब्राहम हैरॉल्ड। 'ए थ्योरी ऑफ ह्यूमन मोटिवेशन।' साइकोलॉजिकल रिव्यू, 1943।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 177-185

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

FOOD AND NUTRITION SECURITY IN JHARKHAND : A SOCIO –ECONOMIC PERSPECTIVE DURING THE COVID-19 PANDEMIC

RAJESH KUMAR

Research Scholar, University Dept. of Economics

Sido Kanhu Murmu University, Dumka.

Email-rajeshkr63000@gmail.com

ABSTRACT

The COVID-19 pandemic severely disrupted food systems and livelihoods, disproportionately affecting vulnerable populations in Jharkhand. This study examines food and nutrition security in the state during the pandemic, focusing on socio-economic disparities between tribal and non-tribal populations. Using a descriptive research design and secondary data from government reports, surveys, and scholarly publications, the paper analyses food grains management, procurement, distribution, and nutrition interventions such as the Public Distribution System (PDS) and POSHAN Abhiyaan. Findings indicate that state interventions, including enhanced rations, Dal-Bhat Kendras, and targeted schemes for vulnerable groups, mitigated immediate food insecurity. However, persistent inequalities, particularly among tribal populations, resulted in higher prevalence of stunting and malnutrition. Recommendations include strengthening decentralized procurement, expanding nutritional programmes for marginalized groups, and addressing structural barriers to equitable food access.

KEYWORDS :- Food Security, Nutrition Security, Jharkhand, COVID-19 pandemic, Public Distribution System

INTRODUCTION

Ensuring food and nutrition security remains one of the most critical challenges for Jharkhand, a state characterized by significant socio-economic diversity and persistent inequality. Despite improvements in agricultural productivity and the implementation of government schemes such as the Public Distribution System and POSHAN Abhiyaan, Jharkhand continues to grapple with high rates of poverty, malnutrition, and stunting—issues that are particularly acute among its rural and tribal populations. The COVID-19 pandemic has further magnified these

vulnerabilities by disrupting livelihoods, restricting mobility, and placing unprecedented pressure on food systems and public welfare programs. Against this backdrop, a thorough assessment of food and nutrition security is not only fundamental to safeguarding human rights but also vital for promoting sustainable economic growth and social equity in the state. This paper examines the status, challenges, and policy responses related to food and nutrition security in Jharkhand, with a focus on the socio-economic disparities exposed and deepened by the pandemic period. By exploring both supply-side interventions and the lived realities of marginalized communities, the study aims to highlight pathways toward a more inclusive and resilient food security framework for Jharkhand.

OBJECTIVES

The main objectives are to assess food and nutrition security in Jharkhand, evaluate government schemes' effectiveness, understand socio-economic disparities, especially between tribal and non-tribal groups and suggest ways to improve overall food and nutrition outcomes in the state.

METHODOLOGY

The paper is grounded in a descriptive research design, utilizing secondary data derived from scholarly journals, government surveys, and official reports including the Jharkhand Economic Survey.

Food Grains Management

The Jharkhand State Food and Civil Supplies Corporation (JSFCSC) plays a vital role in managing food grains within the state. It lifts food grains from the Food Corporation of India (FCI) depots and supplies them to the Public Distribution System (PDS) and Fair Price Shops for distribution among beneficiaries. The actual procurement of food grains in Jharkhand is carried out by the FCI, state agencies, and certain private entities through two mechanisms: the Centralized Procurement System (CPS) and the Decentralized Procurement System (DCP).

Under the Centralized Procurement System, procurement is undertaken either directly by the FCI or by state government agencies that purchase food grains and then hand them over to the FCI. These stocks are stored and issued against the allocations made by the Government of India (GOI), either within the same state or moved to other states in case of surplus. The FCI reimburses the cost of food grains procured by state agencies based on cost sheets issued by the GOI once the stocks are delivered.

The Decentralized Procurement Scheme was introduced in 1997–98 to strengthen procurement efficiency, promote local procurement, and improve the Public Distribution System. This system

ensures that farmers receive the benefits of Minimum Support Price (MSP), reduces transportation costs, and facilitates the procurement of food grains that align with local dietary preferences. In Jharkhand, the decentralized procurement process is applied particularly to rice in six districts of the state.

Production and Procurement of Foodgrains

Jharkhand is a leading rice-growing state, where rice dominates the foodgrains basket. The state's rice production has shown an upward trend, increasing from 27.5 lakh metric tonnes (LMT) in 2020–21 to about 29.3 LMT in 2021–22. Wheat, though comparatively less significant, has also improved over time, rising from around 2.9 LMT in 2015–16 to more than 5 LMT by 2020–21.

Procurement activities are carried out by the Food Corporation of India (FCI) along with state agencies. To encourage farmers, the state government not only ensures the Minimum Support Price (MSP) but also provides a bonus. In the Kharif Marketing Season (KMS) 2020–21, about 6.3 LMT of paddy was procured, which rose to 7.5 LMT in 2021–22, reflecting the strengthening of institutional procurement. Once procured, paddy is sent to millers, where nearly 67 percent is converted into rice.

For storage, the state maintains around 47 godowns, including both state-owned and hired facilities, supplemented by the Central and State Warehousing Corporations and private agencies. This procurement and storage mechanism plays a vital role in maintaining regular supply and ensuring the smooth functioning of the Public Distribution System (PDS), thereby contributing to food security in Jharkhand.

Distribution of Food Grains

In Jharkhand, rice, wheat, and salt constitute the staple items regularly supplied through the public distribution system. During the COVID-19 lockdown, however, the government extended the basket by including pulses such as dal and chana. Additionally, extra allocations of rice and wheat were provided under the Pradhan Mantri Garib Kalyan Anna Yojana (PMGKAY).

Between April 2020 and 11 January 2021, the state distributed approximately 1.09 crore kilograms of rice, 14.65 crore kilograms of wheat, 4.67 crore kilograms of salt, and 59 lakh kilograms of sugar through its routine schemes. In parallel, under the special COVID-19 relief measures, from May 2020 to November 2020, around 83.90 crore kilograms of rice, 6.40 crore kilograms of wheat, 3.50 crore kilograms of chana, and 1.43 crore kilograms of dal were distributed across Jharkhand.

Food Distribution During the COVID-19 Lockdown

Ensuring food and nutrition security is not only fundamental to human rights but also vital for sustaining economic growth. The financial year 2020–21 was marked by the severe health crisis of COVID-19, which confined people to their homes, restricted livelihood opportunities, and

deepened food insecurity. In this context, the Government of Jharkhand undertook several initiatives to safeguard its citizens from hunger and malnutrition.

(a) Distribution of Contingent Food Packets

To meet immediate food needs, specially prepared packets containing 2 kg of chura (flattened rice), 500 g of gur (jaggery), and 500 g of chana (gram), valued at ₹110 per packet, were distributed. The initiative aimed to cover 5,000 beneficiaries in Ranchi and 2,000 in each of the other 23 districts. In total, 49,155 packets were delivered to the needy.

(b) Functioning of Dal Bhat Kendras

Different categories of Dal Bhat centres were established to provide free meals to vulnerable groups:

Vishesh Dal Bhat Kendras: 498 centres sanctioned, each serving around 200 people daily at no cost.

Vishisht Dal Bhat Kendras: 361 centres sanctioned on a similar model to address food shortages during the pandemic.

Atirikta Dal Bhat Kendras: 382 centres operated at the police station (thana) level after lockdown to provide meals to 200 people per day.

Pravasi Mazdoor Dal Bhat Kendras: 94 centres were set up along national and state highways to assist migrant workers returning home.

(c) Antyodaya Anna Yojana (AAY) and Priority Household (PHH) Scheme

Households covered under AAY and PHH received enhanced food supplies during the crisis. In April 2020, AAY families were allotted 70 kg of foodgrains, while PHH beneficiaries received 10 kg of foodgrains per person. Additional rations for May were distributed in advance to reduce food insecurity.

(d) Pradhan Mantri Garib Kalyan Anna Yojana (PMGKAY) Under this national initiative, beneficiaries falling under the National Food Security Act, 2013, were entitled to 5 kg of rice per person per month free of cost. This support was extended until November 2020.

(e) Food Support for Non-NFSA Families

To cover households excluded from the NFSA framework, the state decided to provide 10 kg of rice per family for April and May 2020. The distribution targeted those who had applied for ration cards through the ERCMS portal.

Status of Ongoing Programmes and Schemes

(a) National Food Security Act (NFSA), 2013

The National Food Security Act was implemented in Jharkhand in October 2015, with the aim of ensuring access to adequate food at affordable prices. The Act covered two major categories of beneficiaries – the Priority Household (PHH) scheme and the Antyodaya Anna Yojana (AAY). At the time of implementation, approximately 26.4 million beneficiaries were enrolled under the Act. To meet this requirement, around 144,000 metric tonnes of food grains were lifted each month for distribution. Under PHH, every eligible individual received 5 kilograms of rice or wheat per month at the highly subsidized price of ₹1 per kilogram. Similarly, AAY households were provided 35 kilograms of food grains per family per month at the same subsidized rate.

(b) Annapurna Yojana

The Annapurna Yojana aimed to meet the food security needs of vulnerable elderly persons. Under this scheme, each eligible beneficiary—individuals aged over 60 who were entitled to but not availing of the Indira Gandhi National Old Age Pension Scheme—was provided 10 kilograms of rice per month free of cost. In Jharkhand, 54,939 beneficiaries were supported through this programme. Its implementation depended on the allocation of food grains by the Central Government.

(c) Mukhyamantri Daal-Bhat Yojana

This scheme was launched to provide subsidized cooked meals to poor and marginalized sections of society. Through 377 operational Daal-Bhat Kendras across Jharkhand, beneficiaries were able to access a full meal at the nominal cost of ₹5 per plate. Additionally, 11 "Night Daal-Bhat Kendras" were functional to extend the facility during night hours. A pilot version of the Mukhyamantri Canteen Yojana was also initiated in Ranchi and Jamshedpur with improved service quality and infrastructure.

(d) National Food Security Grievance Redressal Mechanism : A structured grievance redressal system was established to ensure transparency, accountability, and efficiency in the implementation of NFSA. The system included call centres, helplines, District Grievance Redressal Officers (DGROs), and the State Food Commission. Additionally, the Public Grievance Management System (PGMS) was used to monitor and supervise departmental schemes, thereby strengthening oversight at the district level.

(e) PVTG Dakiya Scheme

Launched in April 2017, the PVTG Dakiya Scheme aimed to deliver food grains directly to the doorsteps of Particularly Vulnerable Tribal Groups (PVTGs). Each PVTG household was provided

35 kilograms of food grains per month free of cost. At that time, 73,618 PVTG families across Jharkhand were covered under the scheme, highlighting the government's effort to ensure food security among the most marginalized tribal populations.

(f) Distribution of Salt

As an additional nutritional support measure, every PHH and AAY household was provided 1 kilogram of refined iodized salt per month at the subsidized price of ₹1 per kilogram. Approximately 5.7 million families benefited from this initiative. In response to the challenges posed by the COVID-19 pandemic, an extra 1-kilogram packet of salt was distributed to each family during April and May.

Nutrition Security

Nutrition plays a pivotal role in fostering economic development by contributing to the creation of a healthier, stronger, and more productive workforce. Beyond its economic significance, it also represents a fundamental human right, particularly vital for vulnerable groups such as children, adolescent girls, and women. Adequate nutrition forms the basis of human development, as it reduces vulnerability to infections, lowers morbidity and disability, decreases mortality risks, and enhances lifelong learning abilities along with adult productivity. Globally, nutrition is recognized as a critical entry point for advancing human development, alleviating poverty, and promoting sustainable economic growth, offering substantial social and economic returns.

Specific Activities under Child and Maternal Healthcare in POSHAN Abhiyaan (2019–20 and 2020–21)

During the years 2019–20 and 2020–21, several initiatives were undertaken in Jharkhand under the POSHAN Abhiyaan with the objective of improving maternal and child health outcomes.

As part of the routine immunization programme, children aged 0–1 year were vaccinated against ten major life-threatening diseases. Between April 2020 and September 2021, approximately 3,42,539 children benefitted from this intervention.

In addition, under the Jharkhand Mukhyamantri Shishu Suraksha Poshan Maah (JMSSPM), children aged 9 months to 5 years were provided Vitamin A supplementation in biannual rounds. In the November–December 2019 round, nearly 33,36,330 children received Vitamin A doses to strengthen immunity and prevent deficiencies.

Furthermore, to address diarrhoeal diseases among children under five, the state implemented the Intensified Diarrhoea Control Fortnight (IDCF). Under this initiative, Oral Rehydration Solution (ORS) packets and Zinc tablets were distributed through 15-day campaigns conducted

during the pre-monsoon and monsoon seasons. In 2019–20, around 32,66,125 children received these preventive health measures aimed at reducing mortality due to diarrhoea.

Nutritional Divide between Tribal and Non-Tribal Populations in Jharkhand

Stunting is widely recognized as a cumulative indicator of long-term nutritional deprivation that begins as early as conception and continues through early childhood. Unlike wasting—which reflects short-term nutritional status or the impact of infectious diseases—stunting is a chronic outcome, as height does not undergo rapid change in the short run (Deaton & Drèze, 2008). Although short stature or leanness alone is not inherently problematic, substantial evidence suggests that persistent deprivation during early life can lead to both stunting and wasting in children. While genetic variation influences individual differences in body size, height, and weight, these factors are far less significant at the population level. Therefore, when a large proportion of a population exhibits stunting or underweight status, it indicates widespread nutritional deprivation rather than genetic differences.

The assessment of children's nutritional well-being is usually conducted through anthropometric measures based on international reference standards. These standards are derived from the physical characteristics of children who are adequately nourished. Thresholds for stunting, wasting, or underweight status are typically defined as two standard deviations below the median of the reference distribution. Height-for-age is calculated using z-scores, which express the deviation of a child's height from the average height of healthy children, standardized by the variation within that population. A z-score of zero reflects parity with the reference group, while negative values indicate shorter-than-average growth. Children with a height-for-age z-score below -2 are classified as stunted, and the prevalence of such cases in a population is referred to as the stunting rate.

Data from the National Family Health Survey (NFHS-4) highlight the gravity of stunting in Jharkhand, where the overall prevalence stands at 42.46%. Disparities are evident across settlement types: urban areas report relatively lower stunting at 16.23%, while rural areas record an alarmingly high prevalence of 83.77%. These figures reflect broader socio-economic inequalities and the persistent discrimination between tribal and non-tribal groups in the state.

An age-wise analysis of child growth patterns further underscores the divide. When comparing mean height-for-age across different ages, a substantial and consistent gap emerges between tribal and non-tribal children. The disparity is visible from birth, suggesting that tribal children are at heightened risk of stunting from the earliest stages of life. Although the gap narrows slightly around the age of one, it widens again by age three and remains significantly high after age four, stabilizing thereafter.

These findings clearly indicate that tribal children in Jharkhand face disproportionately higher levels of stunting compared to their non-tribal counterparts. The persistence of this nutritional divide reflects structural inequalities in access to healthcare, food security, and socio-economic opportunities, which continue to place tribal populations at a severe disadvantage.

FINDINGS AND RECOMMENDINGS

During the COVID-19 pandemic, Jharkhand's food security measures, including increased procurement of rice, PDS distribution, PMGKAY, Dal-Bhat Kendras, and contingent food packets, helped mitigate immediate hunger. Nutrition programmes like POSHAN Abhiyaan improved child immunization, Vitamin A supplementation, and diarrhoeal disease prevention. However, tribal populations, especially in rural areas, continued to face higher stunting rates, highlighting persistent nutritional inequalities. To address these challenges, it is recommended to strengthen local procurement and PDS efficiency, expand targeted nutrition interventions for vulnerable groups, integrate food security with maternal and child health services, enhance monitoring and accountability, and promote community awareness on nutrition and dietary diversity.

CONCLUSION

The COVID-19 pandemic exposed vulnerabilities in food and nutrition security in Jharkhand, particularly among tribal and marginalized populations. While state interventions such as enhanced PDS distribution, PMGKAY, Dal-Bhat Kendras, and nutrition programmes under POSHAN Abhiyaan alleviated immediate hunger and improved child health outcomes, structural inequalities continue to limit equitable access to food and essential nutrition. Persistent high rates of stunting among tribal children underscore the need for targeted, inclusive, and sustained interventions. Strengthening local procurement, integrating nutrition with maternal and child healthcare, and promoting awareness on dietary diversity are essential steps toward achieving long-term food and nutrition security in the state. Overall, a coordinated approach combining policy support, effective programme implementation, and community engagement is crucial to build resilience and reduce nutritional disparities in Jharkhand.

REFERENCES

Haritha, L. (2024). Food security: Socio-economic and legal perspectives impact of COVID-19 [PhD thesis, Dr. B. R. Ambedkar College of Law, Andhra University, Visakhapatnam].

Akhtar, S. (2023). An economic analysis of kitchen gardening on improving household food and nutrition security in rural Jharkhand [PhD thesis, Department of Agricultural Economics, Palli Siksha Bhavana (Institute of Agriculture), Visva-Bharati, Sriniketan, Birbhum].

Sharma, K. (2013). Changing profile of poverty and food security: A case study of Jharkhand [MPhil dissertation, Centre for the Study of Social Systems, School of Social Sciences, Jawaharlal Nehru University, New Delhi].

Saha, C. (2019). Improving food and nutrition security by public-private partnership in rural households [PhD thesis, Department of Food and Nutrition, Faculty of Family and Community Science, The Maharaja Sayajirao University of Baroda, Vadodara].

Sardar, S. (2024). Improving food and nutrition security in West Bengal: Examining the case of public-private partnership [PhD thesis, Department of Economics, Jadavpur University, Kolkata].

Bhattacharya, P. (2019). Food security in India: Analysis and policy prescriptions [PhD thesis, Department of Economics, Jadavpur University].

Suryakumar, P. V. S. (2022). Food and nutritional security in India [Report]. Department of Economic Analysis and Research, National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD).

Government of Jharkhand. (2018). Jharkhand economic survey 2017–18. Government of Jharkhand.

Government of Jharkhand. (2019). Jharkhand economic survey 2018–19. Government of Jharkhand.

Government of Jharkhand. (2020). Jharkhand economic survey 2019–20. Government of Jharkhand.

Government of Jharkhand. (2021). Jharkhand economic survey 2020–21. Government of Jharkhand.

Government of Jharkhand. (2022). Jharkhand economic survey 2021–22. Government of Jharkhand.

Government of Jharkhand. (2023). Jharkhand economic survey 2022–23. Government of Jharkhand.

Government of Jharkhand. (2024). Jharkhand economic survey 2023–24. Government of Jharkhand.

Government of India. (2020). Economic survey 2019–20. Government of India.

Government of India. (2021). Economic survey 2020–21. Government of India.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 186-192

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Pathways to Inclusive Green Prosperity : Sustainable Development of India

Dr. Satyawan Jatain

Associate Professor, GPGCW Rohtak, Haryana.

Abstract :

India's pursuit of sustainable development embodies a complex interplay between rapid economic growth, social equity, and environmental stewardship. As the world's most populous nation and a rising economic power, India faces a dual imperative: to continue expanding its economy and alleviating poverty while remaining within planetary boundaries. This article examines India's sustainable development trajectory through a multidimensional lens, integrating economic, social, environmental, and governance dimensions. Drawing on official data from international and national agencies, including the World Bank, International Monetary Fund (IMF), United Nations Development Programme (UNDP), NITI Aayog, and the Ministry of New and Renewable Energy (MNRE), the analysis situates India's progress within the global discourse on the Sustainable Development Goals (SDGs). The literature review surveys major debates in sustainability and development policy, highlighting India's unique challenges of inequality, energy transition, and governance. The discussion addresses sectoral themes: economic growth and employment, poverty and human development, energy transition and climate vulnerability, institutional frameworks, and sustainable financing. Evidence suggests that India has made significant progress in reducing poverty, expanding renewable energy, and improving SDG performance, yet faces persistent gaps in human development, environmental health, and institutional capacity. The article concludes with policy implications, emphasizing integrated planning, equitable transitions, and the scaling of green finance. By aligning national strategies with sustainability imperatives, India has the potential to chart a model of inclusive green prosperity with global relevance.

Introduction :

The sustainable development of India represents one of the defining challenges of the twenty-first century. With a population exceeding 1.45 billion, India is tasked with ensuring economic

advancement, social equity, and environmental resilience simultaneously (World Bank, 2024). While the nation has achieved robust growth rates in recent decades, lifting millions out of poverty, this progress has been accompanied by widening inequalities, environmental degradation, and heightened vulnerability to climate change. In an era where the Sustainable Development Goals (SDGs) serve as a global framework for inclusive and resilient progress, India's pathway is of particular significance not only for its citizens but also for global sustainability outcomes.

India's development trajectory is marked by contrasts. On one hand, it is the world's fifth-largest economy by nominal GDP and a hub of technological innovation (IMF, 2024). On the other, it continues to grapple with basic challenges of access to healthcare, education, and clean water, alongside urban congestion, air pollution, and agrarian distress (UNDP, 2024). The structural dualism of the economy, with a large informal sector and underemployment in agriculture, compounds these challenges. Simultaneously, India is highly exposed to climate risks, from heatwaves and floods to monsoon variability, which directly threaten livelihoods and infrastructure (IEA, 2023).

The Indian state has undertaken ambitious commitments and reforms aimed at reconciling growth with sustainability. These include the National Action Plan on Climate Change (NAPCC), India's nationally determined contributions (NDCs) under the Paris Agreement, the expansion of renewable energy capacity to over 120 gigawatts (GW) by 2025 (MNRE, 2025), and the annual publication of the SDG India Index by NITI Aayog. Such initiatives reflect recognition at the highest levels of governance that sustainability must be central to policy formulation. Yet, significant gaps remain between ambition and implementation, with uneven progress across states, sectors, and SDG dimensions.

The academic and policy literature on sustainable development provides a variety of frameworks for assessing India's prospects. Development economics emphasizes the role of structural transformation, productivity growth, and poverty alleviation, while sustainability studies highlight ecological limits, social equity, and governance reform. This article synthesizes these strands by situating India's development within a sustainability policy framework.

The article is structured as follows. The literature review surveys debates on sustainability, development, and India's performance. The main analysis discusses economic, social, environmental, governance, and financing dimensions of India's sustainable development, supported by official data. The conclusion synthesizes findings into policy implications, proposing pathways for India to achieve inclusive green prosperity.

Literature Review :

The concept of sustainable development has evolved significantly since the publication of the

Brundtland Report in 1987, which defined it as "development that meets the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs." In the Indian context, sustainability discourse intersects with longstanding challenges of poverty alleviation, inequality, and resource dependence.

Early development economics literature emphasized industrialization, capital accumulation, and structural transformation as the engines of long-term growth (Lewis, 1954). For India, the post-independence development model initially relied heavily on planned industrialization and agricultural modernization, leading to successes such as the Green Revolution but also persistent disparities (Panagariya, 2008). By the 1990s, economic liberalization shifted policy focus toward market-led growth, integration into global markets, and service sector expansion (Ahluwalia, 2002). While these reforms accelerated GDP growth and poverty reduction, they also widened inequality and intensified environmental pressures.

Global sustainability frameworks gained prominence with the adoption of the Millennium Development Goals (MDGs) in 2000, followed by the SDGs in 2015. India has been an active participant in these agendas, integrating them into national and subnational planning processes. NITI Aayog's SDG India Index provides a domestic measurement of progress across goals, reflecting improvements in areas such as poverty reduction, clean energy, and health, but also highlighting persistent gaps in gender equality, quality education, and climate action (NITI Aayog, 2023).

The environmental economics literature emphasizes the "environmental Kuznets curve" hypothesis, which suggests that environmental degradation may initially worsen with economic growth before improving as income levels rise and societies demand stronger environmental protections (Grossman & Krueger, 1995). In India, however, evidence suggests that local air and water pollution remain severe, even as per-capita income has grown, indicating structural and governance barriers to achieving environmental improvements (World Bank, 2021).

Climate change studies further underscore India's vulnerability as a tropical, agrarian, and densely populated nation. The Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC, 2022) identifies South Asia as highly exposed to climate-induced disasters, with implications for agriculture, health, and migration. Scholars emphasize the need for climate-smart agriculture, resilient infrastructure, and integrated water governance to mitigate risks (Aggarwal et al., 2019).

In terms of energy, India has been recognized for its rapid expansion of renewable capacity, driven by competitive auctions and falling solar costs (IEA, 2023). Yet, fossil fuels, particularly coal, continue to dominate the energy mix, raising questions about the feasibility of achieving net-zero by 2070 (CSE, 2022). The literature highlights both opportunities and challenges in financing the

transition, with blended finance and international climate funds seen as critical (Bhattacharya et al., 2020).

Social development literature emphasizes the centrality of human capital. India's Human Development Index (HDI) has improved in recent decades but remains in the "medium" category, reflecting gaps in education and healthcare (UNDP, 2024). Gender disparities, caste-based inequalities, and rural-urban divides persist, constraining the inclusiveness of development.

Finally, governance literature underscores the importance of institutional capacity, cooperative federalism, and local-level implementation. India's federal structure creates opportunities for state-led innovation but also risks fragmentation and uneven outcomes (Rao & Singh, 2005). Transparent regulatory frameworks, efficient land-use policies, and robust statistical systems are seen as prerequisites for effective sustainability governance.

In sum, the literature portrays India's sustainable development as a balancing act between growth, equity, and environmental limits. The consensus is that India's progress is real but uneven, requiring integrated policy approaches that address structural, social, and ecological dimensions simultaneously.

Economic Dimensions: Growth, Structure, and Employment :

India's economy has exhibited resilience and dynamism, with GDP growth averaging above 6% in recent years, positioning it among the fastest-growing major economies (IMF, 2024). This growth has expanded fiscal space and increased domestic savings, both crucial for sustainable investment. Yet, structural challenges persist. Agriculture employs nearly 45% of the workforce but contributes less than 18% of GDP, reflecting low productivity and underemployment (World Bank, 2024). The informal sector remains dominant, limiting tax revenues and social protection coverage.

Sustainable growth requires shifting labour into higher-productivity sectors, particularly manufacturing and green services. Renewable energy, electric mobility, and circular economy industries represent emerging growth poles. Vocational training and skill development aligned with these sectors are critical to harness India's demographic dividend. Without such alignment, demographic pressures could manifest as rising unemployment and social discontent.

Social Dimensions: Poverty, Health, and Human Development :

India has made significant strides in poverty reduction, with multidimensional poverty declining sharply over the past two decades (NITI Aayog, 2023). However, vulnerability persists: climate shocks, health crises, and inflationary pressures can push households back into poverty. Human development indicators highlight persistent deficits. India's HDI stood at 0.644 in 2023, placing it in the medium development category (UNDP, 2024). Maternal mortality, child stunting, and gender disparities remain high compared to peer economies.

Universal access to healthcare, quality education, and nutrition must be central to sustainable development. Investments in primary healthcare, digital education platforms, and integrated nutrition programs will enhance resilience and productivity. Importantly, social protection schemes such as the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) can be leveraged for climate-resilient work, such as watershed management and afforestation.

Environmental Dimensions: Energy Transition and Climate Resilience :

India is the world's third-largest emitter of CO?, though its per-capita emissions remain well below the global average (IEA, 2023). Total emissions rose in 2023 due to increased coal consumption during heatwaves and industrial expansion. At the same time, India has emerged as a leader in renewable energy, with solar capacity surpassing 120 GW and wind capacity exceeding 45 GW by mid-2025 (MNRE, 2025). The government aims to achieve 500 GW of non-fossil fuel capacity by 2030.

Transition challenges remain formidable. Coal continues to supply over 55% of electricity generation, and balancing grid stability with rising renewable shares requires large investments in storage, transmission, and demand management. Air pollution, particularly PM2.5 in urban areas, contributes to significant health costs. Water scarcity and land degradation further threaten long-term sustainability.

Adaptation is as critical as mitigation. Climate-smart agriculture, resilient urban planning, and coastal protection are vital investments. Integrating adaptation into public works and urban infrastructure projects will reduce vulnerability while creating employment.

Governance and Institutional Dimensions :

India's federal structure places states at the center of implementation. The SDG India Index reveals wide variation: Kerala, Tamil Nadu, and Himachal Pradesh rank high on SDG performance, while states like Bihar and Jharkhand lag behind (NITI Aayog, 2023). This unevenness underscores the importance of cooperative federalism, where fiscal transfers and policy frameworks align incentives across levels of government.

Institutional reforms are needed in land management, regulatory approvals, and environmental enforcement. Clear land titling, transparent procurement, and predictable environmental clearances will lower barriers for green investments. Data systems must be strengthened, with real-time monitoring and participatory accountability mechanisms to ensure transparency and course correction.

Financing Sustainable Development :

India's sustainable development goals will require massive financing. Estimates suggest that India needs $170–200 billion annually in climate-related investments to achieve its targets (World Bank, 2021). Domestic resources will remain the primary source, but international finance,

concessional loans, and climate funds are essential.

Green bonds and blended finance mechanisms are expanding, but risks of high transaction costs and limited project pipelines persist. Phasing out fossil fuel subsidies while expanding incentives for renewables and sustainable agriculture can reallocate fiscal resources. Participation in carbon markets, once fully operational, could provide additional financing streams.

Conclusion and Policy Implications :

India's pathway to sustainable development is both promising and challenging. Progress is evident: poverty reduction has accelerated, renewable energy capacity has expanded rapidly, and institutional frameworks such as the SDG India Index have been institutionalized. Yet, gaps in human development, environmental resilience, and institutional capacity remain substantial.

The analysis highlights several key policy implications :

- **Integrated Economic and Social Policy**: Economic growth must be accompanied by investments in health, education, and social protection. Skill development aligned with green sectors will enable India to leverage its demographic dividend.
- **Accelerated Energy Transition**: Scaling renewable energy to 500 GW by 2030 requires complementary investments in grid infrastructure, storage, and demand-side management. A just transition for coal-dependent regions and workers must be prioritized.
- **Climate-Resilient Agriculture and Urbanization**: Agricultural reforms should emphasize water efficiency, diversification, and resilience to climate variability. Urban policy must prioritize mass transit, energy-efficient housing, and waste management.
- **Governance and Cooperative Federalism**: Strengthening state-level capacity and aligning fiscal transfers with sustainability outcomes are essential. Local governments must be empowered with resources and authority for implementation.
- **Financing Innovation**: Expanding green finance through blended instruments, carbon markets, and subsidy reforms is crucial. Transparent frameworks will attract long-term private investment.

India's development model has global implications. As one of the largest economies and most populous nations, India's choices will significantly shape global sustainability outcomes. If India successfully aligns growth with social inclusion and environmental resilience, it can offer a replicable model for other emerging economies. Conversely, failure to achieve sustainable development will have consequences beyond its borders, from climate change to global inequality.

In conclusion, India's sustainable development requires a multidimensional strategy: one that balances growth with inclusion, and ambition with pragmatism. The window of opportunity is open, supported by economic momentum and technological innovation. Achieving inclusive green prosperity

will demand sustained political will, institutional reform, and global cooperation.

References :

1. Ahluwalia, M. S. (2002). *Economic reforms in India since 1991: Has gradualism worked?* Journal of Economic Perspectives, 16(3), 67–88.
2. Aggarwal, P. K., Jarvis, A., Campbell, B. M., Zougmoré, R. B., Khatri-Chhetri, A., Vermeulen, S. J., ... & Sebastian, L. S. (2019). *The climate-smart village approach: Framework of an integrative strategy for scaling up adaptation options in agriculture.* Ecology and Society, 23(1), 14.
3. Bhattacharya, A., Meltzer, J. P., Oppenheim, J., Qureshi, Z., & Stern, N. (2020). *Financing climate action and sustainable development: The role of international climate finance and public policy.* Brookings Institution.
4. CSE. (2022). *State of India's Environment 2022.* Centre for Science and Environment.
5. Grossman, G. M., & Krueger, A. B. (1995). *Economic growth and the environment.* Quarterly Journal of Economics, 110(2), 353–377.
6. International Energy Agency (IEA). (2023). *CO? emissions in 2023.* IEA.
7. International Monetary Fund (IMF). (2024). *World Economic Outlook: Country data – India.* IMF.
8. Lewis, W. A. (1954). *Economic development with unlimited supplies of labour.* Manchester School, 22(2), 139–191.
9. Ministry of New and Renewable Energy (MNRE). (2025). *Physical achievements: Renewable energy statistics.* Government of India.
10. NITI Aayog. (2023). *SDG India Index & Dashboard 2023–24.* Government of India.
11. Panagariya, A. (2008). *India: The emerging giant.* Oxford University Press.
12. Rao, M. G., & Singh, N. (2005). *The political economy of federalism in India.* Oxford University Press.
13. United Nations Development Programme (UNDP). (2024). *Human Development Report 2024.* UNDP.
14. World Bank. (2021). *Navigating the storm: Climate change and poverty in South Asia.* World Bank.
15. World Bank. (2024). *World Development Indicators: India.* World Bank.

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 193-195

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आधुनिक जीवन–शैली में प्राकृतिक चिकित्सा की प्रासंगिकता का अध्ययन

पूजा नागपाल, शोधकर्त्री
डॉ. बी.के. चौधरी, शोध निर्देशक, एसोसिएट प्रोफेसर,
शारीरिक शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

प्रस्तुत शोधकार्य में आधुनिक जीवन शैली में प्राकृतिक चिकित्सा की प्रासंगिकता का अध्ययन किया गया है। इस शोधकार्य का प्रमुख उद्देश्य वर्तमान जीवन प्रणाली में प्राकृतिक चिकित्सा की महत्ता एवं उपयोगिता का अध्ययन करना है। निष्कर्ष के रूप में शोधकर्त्री द्वारा पाया गया कि आधुनिक जीवनशैली में मानव जीवन तनाव तथा अनेक प्रकार बीमारियों से जूझ रहा है, जिनका ईलाज प्राकृतिक चिकित्सा के माध्यम से स्थाई और सुखद होता है।

Key Word :- आधुनिक जीवन–शैली, प्राकृतिक चिकित्सा।

प्रस्तावना :–

प्राकृतिक चिकित्सा की प्रथा लगभग प्रकृति जितनी ही लम्बी रही है। यह चिकित्सा विज्ञान आज उपयोग में आने वाली किसी भी अन्य चिकित्सा प्रणाली की तुलना में लगभग लम्बा रहा है। वैकल्पिक रूप से कोई इसे अन्य सभी चिकित्सा प्रणालियों की 'माँ' के रूप में संदर्भित कर सकता है। इसका वर्णन पौराणिक पुस्तकों के साथ–साथ वेदों में भी पाया गया है; इसलिए यह तकनीक वैदिक और पुराण काल में उपयोगी था।

प्राकृतिक चिकित्सा संसार में प्रचलित सभी चिकित्सा प्रणालियों से पुरानी है। प्राचीन ग्रंथों में जल चिकित्सा व उपवास चिकित्सा का उल्लेख मिलता है। पौराणिक–काल में उपवास को लोग अचूक चिकित्सा पद्धति माना करते थे।

भारतीय परम्पराएँ अत्यधिक वैज्ञानिक एवं प्रामाणिक हैं; जहाँ पर ऋतु बदलने के साथ उपवास, पूजन होता रहा है। इनका विधान अनादि काल से चला आ रहा है। ऋतु परिवर्तन के साथ हमारा खान–पान, हमारे रहन–सहन, आचार, व्यवहार सभी कुछ प्रभावित होता है। इसीलिए प्रकृति के साथ रहना और चलना सदा श्रेयस्कर रहा है। प्रकृति के विपपीत चलकर हम केवल अवनति को प्राप्त कर सकते हैं। प्रकृति सर्व शक्तिमान है और सर्वव्यापी है। वह अक्षय ऊर्जा का स्त्रोत है जिससे संपूर्ण पृथ्वीवासियों को ऊर्जा, अनाज तथा जीवनदायी शक्ति प्राप्त होती हैं। साँसे, पंचतत्त्वों से बना ये शरीर प्रकृति की ही देन है। इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा में प्रकृति को ही सर्वोपरि माना जाता है। जिस प्रकार कोरोना काल के लॉकडाउन में प्रकृति को पुनरुद्धार के लिए

कुछ समय मिला जिससे कि वह पुनः अपने शुद्ध रूप में आ गई। इस बात से यह सिद्ध होता है कि प्रकृति को भी विराम, रीक्रिएशन की आवश्यकता है। जिस प्रकार हम 24 घंटे में से 6–8 घंटे सो कर अपने आप को आराम देते हैं, ऐसे प्रकृति को भी आराम की आवश्यकता होती है। ताकि वहभी हमें पुनः अपने संसाधनों को प्रदान कर सके।

प्राकृतिक चिकित्सा एक सहज जीवन–पद्धत्ति है। आज स्वास्थ्य के सम्बंध में सर्वत्र एक नयी जागरूकता दिखलायी पड़ रही है। प्रातः भ्रमण से लेकर जगह–जगह व्यायाम और प्राणायाम करते हुए लोग दिखाई पड़ रहे हैं। मगर अभी भी बहुत से लोग 'स्वस्थ' होने का अर्थ केवल शारीरिक तंदुरुस्ती को शारीरिक आरोग्यता ही समझते हैं। यह स्वस्थ होने की आंशिक परिभाषा है।

वास्तव में स्वास्थ्य का तात्पर्य शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक और आत्मिक स्वस्थता से है। इसमें से किसी के भी अस्वस्थ्य होने पर स्वस्थ नहीं कहला सकते। इसलिए पूर्ण स्वस्थ्य होने की निशानी शारीरिक स्वस्थता, मानसिक स्वस्थता, बौद्धिक स्वस्थता, नैतिक स्वस्थता और आत्मिक स्वस्थता से है।

शोध अध्ययन का महत्व :–

भारत में प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति का जन्म हुआ। इसकी उपयोगिता की महत्ता भी भारत में अति प्राचीन समय से चली आ रही है। जिन–जिन स्वास्थ्य सम्बंधी प्राकृतिक क्रियाओं का हम प्रयोग कर रहे हैं वे सभी उपचार की पद्धतियाँ पूर्वावस्था में प्राचीन भारत में विद्यमान थीं। भारत में ही रोग निवारण के लिए इस पद्धति का प्रयोग नहीं किया वरन् अन्य कई देशों में भी इस पद्धति का प्रयोग आज किया जा रहा है। प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति भारत की ही देन है; परंतु कुछ कारणों के प्रभावानुसार यह पद्धति भारत में लुप्त हो गई। इसके बाद इसके पुनः निर्माण का श्रेय विदेशों (पाश्चात्य देशों) को ही है।

18वीं शताब्दी के मध्य से कुछ लोगों के प्रयास के फलस्वरूप प्राकृतिक चिकित्सा का प्रारम्भ तथा विकास फिर शुरू होने लगा। जिसकी वजह से एक बार दुबारा हम इस चिकित्सा को जानने लगे। इस पद्धति के पुनरुत्थान में जिन महान और प्रभावशाली व्यक्तियों का योगदान है वह पहले से ही रोगों के उपचार के लिए औषधियों का प्रयोग करते थे। परंतु औषधियों के प्रयोग के बाद भी रोगों पर सफलता न पा सकने तथा उसके प्रतिकूल प्रभावों को जानने के बाद और स्वयं पर भी औषधि चिकित्सा की प्रणाली के कटुफल चखने के बाद प्राकृतिक चिकित्सा की को अपनाया। जिससे स्वस्थ जीवन जीने लगे। इन्होंने इस पद्धति के चमत्कारों से प्रभावित होने के कारण इस पद्धति के प्रचार–प्रसार और विकास में लग कर प्राकृतिक चिकित्सा को नया जन्म दिया।

समस्या कथन :–

आधुनिक जीवन–शैली में प्राकृतिक चिकित्सा की प्रासंगिकता का अध्ययन।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :–

1. योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में युवाओं के भविष्य की सम्भावनाएँ देखना।
2. योग प्रबंधन एवं प्राकृतिक चिकित्सा के वर्तमान स्वरूप का अध्ययन करना।
3. योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा का अंतः:सम्बन्ध और विशेषताओं का अध्ययन करना।

निष्कर्ष :–

आज हमारी चिकित्सा प्रणाली बेहद विकसित और कुशल है। बड़ी से बड़ी बीमारियों का दुनिया भर में इलाज संभव होता है। लेकिन कई बार नई चिकित्सा पद्धति के कुछ साइड इफेक्ट भी देखने को मिल जाते हैं। कभी–कभी तो यह साइड इफेक्ट जान लेवा भी साबित हो जाते हैं। ऐसे में सवाल उठता है कि आखिर चिकित्सा की कौन–सी पद्धति सबसे कुशल और कम साइड इफेक्ट से युक्त है? इसका जवाब है – प्राकृतिक चिकित्सा। प्राकृतिक चिकित्सा रोगों से लड़ने की कुछ बेहद एवं प्राचीन पद्धतियों में से एक है। इसमें औषधियों का अधिक प्रयोग किए बिना उपचार किया जाता है। प्रकृति के पाँचों मूल तत्त्तों का पालन करते हुए यह मनुष्य को रोगों से लड़ने के काबिल बनाती है। वर्तमान में भारत सरकार इस पद्धति का इस्तेमाल करने पर काफी जोर दे रही है। आयुष मंत्रालय ने देश में कई जगह आयुष सेंटर और प्राकृतिक चिकित्सा के केंद्र खोले हैं। इस चिकित्सा प्रणाली में रोगों के इलाज के लिए पंच तत्त्वों के साथ सही खान–पान और स्वस्थ जीवन–शैली का प्रयोग किया जाता है। इस चिकित्सा प्रणाली की चर्चा ऋग्वेद, अथर्ववेद आदि में भी मिलती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. पतंजलि का व्याकरण दर्शन, डॉ. लक्ष्मीनारायण उपाध्याय 'विद्यावारिधि'।
2. योग, स्वामी विष्णु देवानंद, शिवनन्दा योग वेदांत सेंटर, कनाडा, 2009, पृ. 23–232
2. चौधरी, सुभद्रा, शांरगदेवकृत संगीत रत्नाकर 'सरस्वती' व्याख्या और अनुवाद सहित, प्रथम खण्ड प्रकाशक – राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संसकरण–2000
3. भारतीय योग परम्परा के विविध आयाम, राजकुमारी पाण्डेय, राधा पब्लिकेशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2008, पृ., 38 एवं 86, 33
3. 'यमन' अशोक कुमार, संगीत रत्नावली, प्रकाशक – अभिषेक पब्लिकेशन्स चण्डीगढ़, नई दिल्ली, संस्करण प्रथम 2015
4. पातंजल योग दर्शन, व्याख्याकार, सतीश आर्य, वेद विश्वायतन, पश्चिम पुरी, नई दिल्ली, पृ. 25, 39, 28
5. मिश्र. डॉ. ब्रजवल्लभ, भरत और उनका नाट्यशास्त्र, प्रकाशक – संगीत नाटक अकादमी एवं कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, संस्करण – द्वितीय 2012
6. पराजपे, डॉ. शरदचन्द्र श्रीधर, 'संगीत बोध' प्रकाशक – मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, संस्करण प्रथम 1972

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 196-198

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कहानियों में तृतीय लिंग

Krishna Priya G
शोध छात्रा, सरकारी वनिता कॉलेज, केरल विश्वविद्यालय, तिरुवनंतपुरम।

तृतीय लिंग या तीसरा लिंग एक ऐसी अवधाराणा है जिसमें व्यक्तियों को वर्गीकृत किया जाता है। इस वर्गीकरण से इनको समाज से तिरस्कृत रहना पडता है। अर्थात तृतीय लिंगीय समूह तथाकथित सभ्य समाज में सबसे तिरस्कृत व हाशिए पर जी रहे हैं। मनुष्य होते हुए भी उनको अपना मानवाधिकार नहीं मिलते हैं। अपने अधिकारों केलिए इनको अकेला लडना पड़ता है। अपने लिए नए अधिकारों की स्थापना करना पड़ता है। सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक परिस्थितियों से ये हमेशा दूर रहता है।

कहता है कि साहित्य जिन्दगी का दस्तावेज है। समकालीन सन्दर्भों के अनुसार अपना क्षेत्र को विस्तृत करने में साहित्य बडा सक्षम रहे। समसामायिक विषयों साहित्य के पन्ने को और ताजा बना दिया। हिन्दी साहित्य, विमर्शों पर अधिक जोर दे रहा है। साहित्य में अब विमर्शों का युग चल रहा है। स्त्री विमर्श, बाल विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, तृतीय लिंगीय विमर्श आदि। समकालीन सन्दर्भ में तृतीय लिंगीय विमर्श पर बहुत चर्चा हो रही है। थर्ड जेंडर विमर्श, ट्रान्सजेंडर विमर्श, किन्नर विमर्श आदि नामों में भी यह विमर्श जाने जाते हैं। तृतीय प्रकृति के लोगों को समाज में सम्मान प्राप्त करने केलिए व अन्य लोगों की तरह साधारण जीवन बिताने का हक देने केलिए साहित्यकारों ने मोर्चा खडा की। हिन्दी कथा साहित्य इस श्रेणी में आगे हैं। भारतीय साहित्य में हिन्दी साहित्य ने ही तृतीय लिंगों पर ज्यादा चर्चा की है। आज के सन्दर्भ में समाज व साहित्य में तृतीय लिंग पर चर्चा अधिक हो रही है। तृतीय लिंग अब विमर्श का रूप धारण कर लिया है। तृतीय लिंगी विमर्श पर हिन्दी साहित्य में बहुत सारे उपुन्यास व कहानियाँ निकल रहे हैं।

तृतीय लिंगों से संबंधित उपन्यासों बहुत ख्याती प्राप्त है। उदाहरणार्थ नीरजा माधव कृत 'यमदीप', प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली', महेन्द्र भीष्म का 'किन्नर कथा', निर्मल भुराडिया कृत 'गुलाम मंडी', चित्रा मुद्गल कृत 'पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा' आदि। तृतीय लिंग को विषय बनाकर बहुत कहानियाँ भी निकली है। 'हम भी इन्सान हैं', 'थर्ड जेण्डर चर्चित कहानियाँ', 'कथा और किन्नर', आदि थर्ड जेण्डर पर आधारित कहानी संकलनें है। इसके अलावा अनुसंधान एवं वाड़मय पत्रिकाएँ तृतीय लिंग पर कई अंक निकाला है।

इस लघु प्रबन्ध में चुनी हुई पाँच कहानियों के सन्दर्भ में चित्रित तृतीय लिंगीय जीवन का लघु अध्ययन किया गया है।

कमल कुमार की 'कुकूज नेस्ट' कहानी छिबरा नामक हिजडा प्रजातियों के जीवन पर आधारित है। जबरदस्ती से बनाये गये हिजडों की कहानी दर्दनाक है। इस कहानी में कहानीकार ने बलात् लिंग काटकर

हिजडा बनाने की प्रक्रिया का विस्तार से चित्रण किया है। बुचरा देवी की पूजा केलिए भी लिंग काटने की प्रथा का उल्लेख कहानी में है। यहाँ अंधभक्ति या अंधविश्वास की भावना मजबूत है। विवेच्य कहानी के द्वारा कहानीकार ने ट्रांसजेंडेरों के प्रति परिवार, समाज और देश से अपनी नकारात्मक रवैया बदलने का आह्वान किया है।

सूरज बडत्या कृत 'कबीरन' ट्रांसजेंडरों की सामाजिक दुर्दशा का चित्रण करते हुए लिखी गयी कहानी है। इसका मुख्य पात्र कबीरन और सुमेध भाई–बहन है। कबीरन ट्रांसजेंडेर होने की वजह से बचपन में माँ–बाप ने उसे त्याग किया था। सुमेध और कबीरन की मुलाकात ट्रेन में होती है। कबीरन का सच समझने के बाद सुमेध उसे घर वापस लाना चाहता था, लेकिन वह तैयार नहीं होती। वह भाई से समाज की मानसिकता बदलने का प्रयास करने का आह्वान करते हुए कहती है, "नहीं भैया मेरी वापस लौटना तो न होगा पर मैं तुमसे कुछ माँगती हूँ, अगर तुम चाहते हो कि कभी भी कोई कबीरन घर से बेदखल न हो तो समाज की मानसिकता का प्रयास करो। हम भी इन्सान है, साँसें है सपने है।" परिवार से विस्थापित हुए कबीरन को समाज से भी दुर्व्यवहार झेलना पडता है। माँ–बाप, भाई सब होते हुए भी कबीरन को अकेला रहना पडता है। 'कबीरन' कहानी परिवार से विस्थापित एक मनुष्य की भरसक जिन्दगी चित्रित करता है।

डॉ. लवलेश दत्त की कहानी 'नवाब' चरित्र प्रधान कहानी है। कहानी का प्रमुख पात्र 'नवाब' नामक एक हिजडा है, एक ऐसा हिजडा जो विशेष अवसरों पर ही हिजडों के पारम्परिक रूप धारण करता है। बच्चा पैदा करने में असमर्थ हिजडों के मन में उभरनेवाले वात्सल्य का भी चित्रण नवाब के द्वारा किया गया है। पारिवारिक सुख से वंचित व्यक्ति एक बच्ची को गोद लेकर मातृत्व का सुख भोगता है। बच्ची को पालने के लिए अपने पारम्परिक पोशे को त्यागकर कडी मेहनत करके बच्ची को पालता है। कहानी के अंत में सामाजिक के परवाह किए बिना जया कबीरन को अपनी माँ और पिता दोनों के रूप में स्वीकारती है। इस कहानी में नवाब को मानवीय गुणों से युक्त साधारण मानव के रूप में चित्रित किया गया है। कहानीकार ने मानवता को सही मायने में चित्रित करने का प्रयास किया गया है।

'मन मरीचिका' डॉ. विमलेश शर्मा की कहानी है। यह होर्मोनल डिस्बैलन्स (Hormonal Disbalance) से ट्रान्सजेन्डर बने व्यक्ति की व्यथा कथा है। यह ट्रान्सजेन्डर की लिंग परिवर्तन की व्यथा कथा है। इस कहानी का प्रमुख पात्र मानव कई खोजों के बाद विज्ञान के सहारे मानसिक झुकाव के अनुसार लिंग परिवर्तन करता है। यह पुरुष की देह में फँसी महिला की व्यथा कथा है। उसकी पीड़ा अकथनीय है। उसकी मित्र सुलोचना उसे मानव से मनु बनाती है। यह कहानी प्रेम एवं समर्पण भावना की भी कहानी है। सुलोचना मानव से प्रेम करती है। सब जानते हुए भी वह अपनी प्रेमी केलिए अपने प्रेम की कुरबान देती है। यह कहानी समाज में सकारात्मक सोच और परिवर्तन को प्रोत्साहित करती है। एक व्यक्ति को अपनी इच्छा के अनुसार जीने के हक का बोध कहानीकार इस कहानी के द्वारा दिया है। सुलोचना के माध्यम से बदल रहे सामाजिक मानसिकता का चित्रण किया गया है।

कैस जौनपुरी की कहानी है 'एक किन्नर की लव स्टॉरी, प्रेम और बेईमानी की कहानी है। ट्रांसजेंडेर रानो की प्रेम कहानी इसमें प्रतिपादित है। स्त्री व पुरुष के समान तृतीय लिंग के मन में भी प्रेम भावना होती है। रानो के सौन्दर्य में मुग्ध होकर राजू उसमें प्रेम का षडयन्त्र रचता है। सुन्दर रानो को प्रेम के पाश में बाँधकर राजू

शारीरिक रूप से उसका शोषण करती है। रानो उन्हे पैसा देती थी। कहानीकार के शब्दों में, "उसने राजू को खुश रखने की भरपूर कोशिश करती थी। राजू एक ऑटो ट्राइवर था, मगर रानो ने उस पर इतने पैसे खर्च किये कि खुद राजू ही भूल गया कि वो एक ऑटो ट्राइवर है।" राजू के झूठे प्रेम पर रानो मुग्ध हो गया। लालच में आकर राजू रानो की पीछ में चाकू मारकर उनकी हत्या करके सारे पैसा लेकर गायब हो जाता है। रानो के प्रेम ने उसे धोखा दिया। सभी रिश्ते–नाते से वंचित रानो को अपनी प्रेम से भी दूर रहना पडती है। इतना दूर जहाँ से वह वापस नहीं आ सकता। तृतीय लिंगीय लोग हमेशा धोखा का शिकार होना पडता है, यह कहानी इसका दस्तावेज है।

इस लघु लेख के लिए मैं ने यहाँ पाँच कहानियाँ ली है। ये सारी कहानियाँ तृतीय लिंगी विमर्श पर आधारित है। इसके द्वारा मैंने इन कहानियों में चित्रित तृतीय लिंगी जीवन को उकेरने का प्रयास किया है। विचार विश्लेषण करने के बाद यह समझ में आता है कि इनकी जिन्दगी इतना भरसक बनने का कारण इनके परिवार ही है। जननांग के असमर्थता के कारण परिवार इन्हें दूर रखता है। परिवारवालों ने तृतीय लिंगीय लोगों को अपने परिवार का हिस्सा बनाने के लिए हिचकते हैं। अगर परिवार इनके साथ दिए तो जिन्दगी इतनी मुश्किल नहीं पडती। सूरज बडत्या कृत 'कबीरन' कहानी में इसे विस्तार से चित्रित किया गया है। परिवार से हटाए गए तृतीय लिंगीय लोगों को सामाजिक व्यवस्था व परिस्थितियों से भी दूर रहना पडता है। शिक्षा व स्वास्थ्य इनकी मुख्य समस्या है। शिक्षा की कमी के कारण इन्हें काम के क्षेत्र से भी दूर रहना पडता है। काम न मिलने के कारण पैसा कमाने केलिए इनका ध्यान वेश्यावृत्ति पर जाता है। अज्ञता से कई आपत्तियाँ इनको झलनी पडती है। असुरक्षित लैंगिक संबंध इन्हें लैंगिक रोग का शिकार बनाता है। प्रेम के नाम पर इन्हें धोखा भी लोग देता है। कैस जौनपुरी की 'एक किन्नर की लव स्टॉरी' में भी प्रेम के नाम पर धोखे का शकार बने रानो की कहानी कही गयी है। रानो के अंधा प्रेम ने उन्हें मरा देता है। आर्थिक पराधीनता ने इनकी जीवन को दुस्सह नाती है। लैंगिक व अलैंगिक रूप से भी लोग इन्हें धोखा देते हैं। अपने हक प्राप्त करने केलिए इन्हें बहुत लडना पडता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि यह कहानियाँ विभिन्न सन्दर्भों में घटित होती है। लेकिन सन्दर्भ चाहे विभिन्न होने पर भी पीड़ा व संघर्ष तो एक समान है। इन संघर्षों के साथ लड़ते–लड़ते आज तृतीय लिंग कामियाबी की ओर बढ़ रहा है। अपने अस्तित्व के मोहर वह हर क्षेत्र में लगा रहा है। उन्हें भी आगे आना जरूरी है। क्योंकि वह भी माँस व रक्तवाले इन्सान है, उन्हें भी साधारण जिन्दगी जीने की इच्छाएँ होती है। बस उन्हें हमारी तरफ से एक मुस्कान की और अपनेपन का भावना की जरूरत है। यह कह सकता है कि तृतीय लिंगी जीवन को चित्रित करने में एक हद तक ये कहानियाँ सफल हुई है।

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. थर्ड जेन्डर कथा आलोचना : डॉ. एम. फिरोज खान।
2. किन्नर विमर्श साहित्य के आइने में थर्ड जेंडर : विजेन्द्र प्रताप सिंह।
3. हम भी इन्सान हैं – डॉ. एम. फिरोज खान।
4. किन्नर विशेषांक – बोहल शोध मंजूषा : सम्पादक डॉ. नरेश सिहाग।

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 199-202

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

शिक्षा, महिला सशक्तिकरण और राजाराममोहन राय

डॉ. राजेंद्र शर्मा

सहायक आचार्य, श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर (राज.)

'यत्रनार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला क्रियाः।।'

अर्थात् जहां नारी का आदर होता है, वहां देवता रमण करते हैं।जहां उनका का आदर नहीं होता, वहां सब काम निष्फल होते हैं।

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में नारी का स्थान आदरणीय और पूज्य है। देवी दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती के रूप में महिलाएँ सदियों से शक्तिधन सम्पदा व ज्ञान की अधिष्ठात्री मानी गई है। सभ्यता एवं संस्कृति तथा समाज विकास क्रम में हर एक क्षेत्र में महिलाओं का योगदान पुरूषों के समान ही रहा है।

वर्तमान में महिला होने के कारण ही सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, नागरिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में उनके साथ विभेद एवं असमानता पूर्ण व्यवहार होता आ रहा है। अपने उत्तरदायित्व निर्वाह के क्रम में स्त्रोत, साधन, सूचना और कार्य स्वतन्त्रता में भी महिलाओं के ऊपर बंदीशे लगाई गई। फलस्वरूप आज सबसे बड़ा गरीब, अशिक्षित समुदाय महिलाओं का ही है।

महिला सशक्तिकरण –

सशक्तिकरण का अर्थ महिलाओं के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास, समुदाय अन्तःक्रिया में भागीदारी, महिलाएं स्वयं फैसला ले आदि। महिला शक्ति के समर्थकों के अनुसार निर्णय प्रक्रिया में महिला की पहुँच होना मात्र, सशक्तिकरण नहीं है, बल्कि ये तो ऐसी वृहत् प्रक्रिया है, जिसमें महिलाओं की आन्तरिक क्षमता में वृद्धि कर सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से सशक्त बनाना है। देश के प्रथम उपराष्ट्रपति व शिक्षा शास्त्री डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था कि शिक्षित महिला के बिना शिक्षित पुरूष हो ही नहीं सकता। महिला सशक्तिकरण से ही परिवार, समाज तथा राष्ट्र के विकास में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित किया जा सकता है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार में साक्षरता से ही महिलाओं और कमजोर वर्गो समर्थ बनाया जा सकता है।

महिला सशक्तिकरण के निम्न पक्ष है :–

1. महिलाओं को आर्थिक अवसर प्रदान करना।
2. सामूहिक कार्यों एवं सकारात्मक सोच के माध्यम से महिलाओं की शक्ति बढ़ाना।
3. समाज में व्याप्त कुरीतियों के प्रति महिलाओं में चेतना का विकास करना।

4. महिलाओं के आत्मविश्वास को मजबूत बनाना।

महिला सशक्तिकरण की सबसे उपयुक्त कसौटी वह होगी जिसमें महिलाएं अपने मूल्य, मान्यता अनुकूल स्वयं नीति निर्माण, उसकी व्याख्या एवं कार्यान्वयन करने, करवाने में सफल हो सके।

राजाराममोहन राय :–

शिक्षा से ही राष्ट्र और समाज का निर्माण सम्भव है। भारत में वैदिक काल से ही स्त्रियों के लिए शिक्षा का व्यापक प्रचार था। मुगल काल में भी अनेक महिला विदुषियों का उल्लेख मिलता है। पुनर्जागरण के दौर में भारत में स्त्री शिक्षा को नए सिरे से महत्त्व मिलने लगा है। स्त्री शिक्षा के पुरोधा राजा राम मोहन राय का जन्म 22 मई 1772 को राधानगर बंगाल में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ उनके पिता जी का नाम रमाकांत और माता का नाम तरिणीदेवी था।

राजा राम मोहन राय की प्रारंभिक शिक्षा फारसी और अरबी भाषाओं में पटना में हुई, जहाँ उन्होंने कुरान, सूफी रहस्यवादी कवियों के काम तथा प्लेटो और अरस्तू के कार्यों के अरबी अनुवाद का अध्ययन किया था। उन्होंने ईसाई धर्म और इस्लाम का भी अध्ययन किया। बनारस में उन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया और वेद तथा उपनिषद पढ़े। वर्ष 1803 से 1814 तक उन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी के लिये वुडफोर्ड और डिग्बी के अंतर्गत निजी दीवान के रूप में काम किया। वर्ष 1814 में उन्होंने नौकरी से इस्तीफा दे दिया और अपने जीवन को धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक सुधारों के प्रति समर्पित करने के लिये कलकत्ता चले गए। राजा राम मोहन राय को दिल्ली के मुगल सम्राट अकबर की पेंशन से संबंधित शिकायतों हेतु इंग्लैंड गए तभी अकबर द्वारा उन्हें 'राजा' की उपाधि दी गई। अपने संबोधन में 'टैगोर ने राम मोहन राय कोश् भारत में आधुनिक युग के उद्घाटनकर्ता के रूप में भारतीय इतिहास का एक चमकदार सितारा कहा।

तत्कालीन भारतीय समाज में महिलाओं से सम्बंधित अनेक सामाजिक कुरीतियाँ विद्यमान थीं, जैसे– जाति व्यवस्था, मूर्ति पूजा, बलिप्रथा, भेदभाव, छुआछूत, बहुविवाह, अंधविश्वास, सती प्रथा, बाल–विवाह, शिशु–हत्या, विधवाओं की दयनीय दशा तथा निम्न–स्तरीय नारी शिक्षा आदि।

सुधारवादी संघों की स्थापना –

राजा राम मोहन राय ने तर्कवाद और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर जोर दिया। उन्होंने वैचारिक आन्दोलन चलाये जाने के साथ–साथ व्यावहारिक स्तर पर भी कई प्रयास किये। उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन के साधन के रूप में सुधारवादी धार्मिक संघों की कल्पना की। 1814 में उन्होंने आत्मीय सभा, 1821 में कलकत्ता यूनिटेरियन एसोसिएशन और एकेश्वरवादी ब्रह्म समाज की स्थापना की। 1828 में ब्रह्म सभा या ब्रह्म समाज की स्थापना की थी।

सती–प्रथा उन्मूलन –

धार्मिक परिशीलन करते हुए राजा राम मोहन राय कहा कि ईश्वर ही एकमात्र सत्य है और यह ईश्वर रूपी सत्य सभी धर्मों का मत है। अतः इसी विचारधारा के प्रचार–प्रसार के लिए ब्रह्म समाज की स्थापना करके किया। राजा राम मोहन राय ने भारतीय जनमत में परिवर्तन लाने के लिए अंग्रेजी शिक्षा को उपयुक्त एवं आवश्यक बताया। राजा राम मोहन राय ने ही भारत में पहली बार सामाजिक धार्मिक सुधार आन्दोलन की शुरुआत हुई। इसके जरिए राजा राम मोहन राय ने सती प्रथा जैसे कुरीतियों को पहचाना और उनकी विरोध किया। राय ने

कहा था कि सती प्रथा का वेदों में कोई स्थान नहीं है। उन्होंने घूम–घूम कर लोगों को उसके खिलाफ जागरूक किया। उन्होंने लोगों की सोच में बदलाव लाने का अथक प्रयास किया। उनके व्यक्तित्व को महत्त्व देने के लिये उनके सहयोगियों ने सती होने की अमानुशिक प्रथा को कानून से रोकने का आंदोलन प्रारम्भ किया। नवंबर 1830 में वे सती प्रथा संबंधी अधिनियम पर प्रतिबंध लगाने से उत्पन्न संभावित अशांति का प्रतिकार करने के उद्देश्य से इंग्लैंड चले गए। उनके लगातार प्रयास का ही यह परिणाम था कि लॉर्ड बैंटिक ने 4 दिसम्बर, 1829 ई. को अधिनियम–17 पारित कर सती–प्रथा को गैर–कानूनी घोषित कर दिया।नवंबर 1830 में वे सती प्रथा संबंधी अधिनियम पर प्रतिबंध लगाने से उत्पन्न संभावित अशांति का प्रतिकार करने के उद्देश्य से इंग्लैंड चले गए।

सती उन्मूलन कानून के एक साल बाद भी राजा राममोहन ने एक याचिका पर 300 हस्ताक्षर करवाकर गवर्नर जनरल विलियम बेंटिंक के पास जमा किया था। इसमें उन्होंने प्राचीन धर्मग्रन्थों से उद्धरणों के आधार पर दावा किया था कि कहीं भी सती का समर्थन नहीं किया गया है।

स्त्री अधिकारों के समर्थक –

राजा राम मोहन रायने स्त्रियों को सम्पत्ति में उत्तराधिकारी बनाने की भी वकालत की तथा इसका समर्थन किया। उन्होंने महिलाओं के अधिकारों के लिए अभियान चलाकर महिलाओं में चेतना का प्रसार किया। उन्होंने जोर देकर कहा कि समाज तब तक प्रगति नहीं कर सकता जब तक महिलाओं को अमानवीय उत्पीड़न से मुक्त नही किया जाएगा।

विधवा के पुनर्विवाह का समर्थन –

राजा राम मोहन राय के व्यक्तित्व दृष्टिकोण एवं विचार पर गहन दृष्टि डालने से यह स्पष्ट होता है कि उनके विचारों पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव था। राजा राम मोहन राय ने विधवाओं के पुनर्विवाह का भी समर्थन किया था तथा समाज को इसके लिए जाग्रत किया।

सामाजिक कुरीतियों का विरोध –

राजा राम मोहन राय ने जाति व्यवस्था, मूर्ति पूजा, बलिप्रथा, भेदभाव, छुआछूत, बहुविवाह, अंधविश्वास एवं सती प्रथा का विरोध किया तथा राजा राम मोहन राय ने नारी समाज के उद्धार के लिये अनेक प्रयास किये। नशीले पदार्थों के इस्तेमाल के खिलाफ अभियान चलाया। महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों पर ध्यान दिया और उनके सशक्तिकरण पर बहुत ज्यादा बल दिया।

शिक्षा एवं महिला उत्थान के पक्षधर –

राजा राम मोहन राय यूरोप के प्रगतिशील एवं आधुनिक विचारों से प्रभावित थे। राजा राम मोहन राय ने वेदांत को नया अर्थ दिया। राजा राम मोहन राय पश्चिमी वैज्ञानिक शिक्षा में भारतीयों को अंग्रेजी में शिक्षित करने के लिए कई स्कूल शुरू किए। उनका मानना था कि अंग्रेजी भाषा की शिक्षा पारंपरिक भारतीय शिक्षा प्रणाली से बेहतर है। राजा राम मोहन राय ने महिलाओं की दशा में सुधार लाने के लिए सबसे पहले संगठित प्रयास किया तथा स्त्री–शिक्षा का समर्थन किया। उन्होंने अंग्रेजी, विज्ञान, पश्चिमी चिकित्सा एवं प्रौद्योगिकी के अध्ययन पर बल दिया। उन्होंने 1822 में अंग्रेजी शिक्षा पर आधारित स्कूल की स्थापना की।वर्ष 1825 में उन्होंने वेदांत कॉलेज की स्थापना की जहाँ भारतीय शिक्षण और पश्चिमी सामाजिक और भौतिक विज्ञान दोनों पाठ्यक्रमों को पढ़ाया

जाता था।

राजा राम मोहन राय सभी संस्कृतियों में समन्वय में विश्वास रखते थे। वे धर्मसहिष्णु थे। अपने जीवन के अंतिम दिनों में समाज के सामने नया उदाहरण रखते हुये इंग्लैंड गये जहां इन्होंने भारत का प्रतिनिधित्व किया और भारत में सुधार करने की अनुशंसाओं से युक्त एक प्रतिवेदन किया। 27 सितंबर, 1833 में इंग्लैंड के ब्रिस्टल नगर में राजा राम मोहन राय की मृत्यु हो गयी।

यह सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक और शैक्षिक क्षेत्रों में उनके योगदान के कारण है कि राजा राम मोहन राय को 'आधुनिक भारत के पिता' और भारतीय पुनर्जागरण के पिता के रूप में जाना जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. झा, ममता (2019) : 'समाज सुधारक राजा राम मोहन राय', प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. गोयल, संजय (2015) : 'राजा राम मोहन राय', प्रभात पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. सिंह, एम.के. (2008) : 'राजा राम मोहन राय' डिस्कवरी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
4. विवेक मोहन (2016) : 'राजा राम मोहन राय', राजा पॉकेट बुक्स नई दिल्ली।
5. श्रीवास्तव, प्रेम प्रकाश (2003) : 'भारत के महान समाज सुधारक',प्रज्ञा पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
6. अरुण नवले (2019) :' भारतीय क्रांतिकारक एवं समाज सुधारक', साकेत पब्लिकेशन, औरंगाबाद।
7. https://byjus.com/ias-hindi/raja-ram-mohan-roy-indian-social-reformer-in-
8. https://www.drishtiias.com/hindi/paper4/raja-ram-mohan-roy
9. https://jivani.org/Biography/

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 203-212

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पंचायतीराज व्यवस्था में महिला जनप्रतिनिधियों का प्रभाव : एक सामाजिक विश्लेषण

पूनम सुरेखा गोपाल, शोधार्थी (समाजशास्त्र)
शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यायल, दुर्ग (छ.ग.)
डॉ. अश्विनी महाजन, शोध निर्देशक (प्राचार्य)
डॉ. खूबचंद बघेल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यायल, भिलाई–3, जिला–दुर्ग (छ.ग.)

सारांश :–

इस शोध पत्र पंचायती राज व्यवस्था में महिला जनप्रतिनिधियों के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसमें महिला जनप्रतिनिधियों की पंचायती राज संस्थाओं में एक जनप्रतिनिधि के रूप में भूमिका एवं कार्यप्रणाली के प्रति अभिरूचि एवं महत्व तथा जानकारी होने संबंधी तथ्यों को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों पर आधारित है। प्राथमिक समंकों का संकलन साक्षात्कार अनुसूची की सहायता से संकलित किया गया है, साथ ही अवलोकन विधि की सहायता से वस्तुस्थिति को अनुभवात्मक तथ्यों के रूप में संकलित कर पक्षपात रहित वास्तविक रूप शोध कार्य में प्रयोग किया गया है। द्वितीयक तथ्यों के संकलन हेतु जिला सांख्यिकी कार्यालय, दुर्ग, पंचायती राज व्यवस्था से संबंधित तथ्यों के संकलन हेतु जिला पंचायत कार्यालय, छत्तीसगढ़ पंचायती राज विभाग के अधिकारिक वेबसाइट व इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्रियों का प्रयोग किया गया है। उत्तरदाताओं के चयन हेतु दैव निदर्शन के लॉटरी पद्धति के तहत दुर्ग जिले के तीनों विकासखण्डों (धमधा, पाटन व दुर्ग) के पंचायती निकायों में वर्ष 2019–20 में निर्वाचित 2762 महिला जनप्रतिनिधियों की संख्या का 15% आनुपातिक आधार पर कुल 417 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। उत्तरदाताओं के रूप में ग्राम पंचायत के सरपंच व वार्डपंच, जनपद व जिला पंचायत सदस्यों को सम्मिलित किया गया है। प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से यह तथ्य सामने आया कि पंचायती राज संस्थाओं में महिला जनप्रतिनिधियों के कार्य, शक्ति व अधिकार के संदर्भ में सरपंच पति की भूमिका व प्रभाव पर प्रकाश डाला गया है। चुनाव के समय प्रत्याशी बनने से लेकर चुनावी कार्यकाल पूर्ण होने तक महिला जनप्रतिनिधि के पति की भूमिका स्वयं को जनप्रतिनिधि के रूप में देखते हैं तथा महिला जनप्रतिनिधि नाममात्र के रूप में रहकर परछाई (Shadow) रूप में कार्य कर रहे हैं। महिला जनप्रतिनिधि कठपुतली बनकर रह गई है, पर्दे के सामने तो वे स्वयं भागदौड़ करती है, लेकिन पर्दे के पीछे पूरा नियंत्रण किसी और का रहता है।

शब्द कुंजी – पंचायतीराज व्यवस्था, महिला जनप्रतिनिधि, सरपंच पति, स्थानीय निकाय, ग्राम पंचायत।

प्रस्तावना :–

भारत एक लोकतांत्रिक देश है जहाँ देश के प्रत्येक नागरिक को चुनाव लड़कर जनप्रतिनिधि बनने का अवसर प्रदान करता है। महिला जनप्रतिनिधियों को राजनीतिक अवसर प्रदान करने व उनके राजनीतिक नेतृत्व व भूमिका सुनिश्चित करने के संवैधानिक प्रावधान करते हुए वर्ष 1993 में सर्व प्रथम पंचायती राज संस्थाओं (स्थानीय निकायों में) 73वां संविधान संशोधन करते हुए अनुच्छेद–243 में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत या एक तिहाई सीटों को आरक्षित किया गया है। इसी के तहत् भारत सरकार द्वारा वर्ष 2023 में 106वां संविधान संशोधन अधिनियन, 2023 नारी शक्ति वंदन अधिनियम पारित किया गया है। यह आगामी लोकसभा, राज्य विधानसभा के चुनावों में महिलाओं के लिए एक–तिहाई सीटे आरक्षित किया जाएगा, हालांकि अभी तक यह विधेयक कानून का रूप नहीं लिया है। वर्ष 1993 में पंचायती राज अधिनियम लागू होने से ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को एक–तिहाई सीटे आरक्षण के रूप में प्राप्त हुई, जिसमें सभी वर्ग (अनुसूचित जाति व जनजाति) की महिलाओं को अपने स्थानीय निकायों में नेतृत्व करने का अवसर मिला है; परिणाम पूर्व की अपेक्षा महिलाओं के पास निर्णय लेने व महिला शक्ति को बल मिल सके। ग्राम पंचायत में ग्राम प्रधान यदि कोई महिला है तो वे अपने परिवार की भांति निर्णय लेने का प्रयास करती है ताकि कोई भी क्षेत्र छुट न जाये व सबका भला हो सके। वर्ष 2024 तक देश में 25 लाख ग्राम पंचायतों में या पंचायती निकायों में 32 लाख प्रतिनिधि निर्वाचित हुआ हैं, जिनमें 14 लाख (45.15 प्रतिशत) से अधिक महिला जनप्रतिनिधि है। सभी पंचायती निकायों में महिला नेतृत्व में वृद्धि होने से हमारे 'परंपरावादी व पुरूष प्रधान' समाज में महिलाओं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण आया है। इससे महिलाओं के सशक्तिकरण में प्रत्यक्ष भूमिका निभा रही है। यही कारण है कि अब पारिवारिक, सामाजिक एवं संस्थागत् स्तर पर महिलाओं की कार्यक्षमता के प्रति सकारात्मक बल मिला है।

तालिका क्रमाँक – 1.1

भारत के राज्यों से पंचायतों में निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की स्थिति

क्र.	राज्य	प्रतिशत	क्र.	राज्य	प्रतिशत	क्र.	राज्य	प्रतिशत
1.	आंध्र प्रदेश	50.0	10.	जम्मू–कश्मीर	33.18	19.	राजस्थान	51.39
2.	अरूणाचल प्रदेश	38.98	11.	झारखण्ड	51.57	20.	सिक्किम	50.30
3.	असम	54.60	12.	कर्नाटक	50.05	21.	तमिलनाडू	52.98
4.	बिहार	52.20	13.	केरल	52.41	22.	तेलंगाना	50.34
5.	छत्तीसगढ़	54.78	14.	मध्यप्रदेश	49.99	23.	त्रिपुरा	45.23
6.	गोवा	36.72	15.	म्हाराश्ट्र	53.47	24.	उत्तर प्रदेश	33.34
7.	गुजरात	49.96	16.	मणिपुर	50.69	25.	उत्तराखण्ड	56.01
8.	हरियाणा	42.12	17.	ओडिशा	52.68	26.	पश्चिम बंगाल	51.42
9.	हिमाचल प्रदेश	50.12	18.	पंजाब	41.79	–	–	–

उपर्युक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि सम्पूर्ण देश के स्थानीय निकायों में राजनैतिक व सामाजिक स्थिति बेहतर हुई है। यहीं से महिलाओं को राजनीतिक/सामाजिक क्षेत्र में राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर अनेक क्षेत्रों में प्रतिनिधित्व करने का अवसर मिल रहा है।

पंचायती राज व्यवस्था में प्रमुख राज्यों में हुए शोधकार्य का विश्लेषण :-

केन्द्रीय सरकार द्वारा पचायतीराज मंत्रालय द्वारा 2008 में निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों को लेकर एक अध्ययन कराया गया, जिसमें उत्तर प्रदेश, बिहार और असम जैसे राज्यों में महिला प्रधान पंचायत से संबंधित गतिविधियों मे विशेष रूचि न रखते थे, बल्कि वे अपने घर की कामकाज या पारिवारिक कार्यों में ही लगी रहती है। वहीं इस अध्ययन में यह भी स्पष्ट हुआ कि "अरूणाचल प्रदेश और केरल जैसे कुछ राज्यों में महिला प्रधान अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन गंभीरता से करती है। इसके अतिरिक्त केरल राज्य में देखा गया कि वहाँ निर्वाचित महिला प्रतिनिधि पंचायत संबंधित गतिविधियों में अपनी पूरी भागीदारी निभाती है। एक अन्य अध्ययन के अनुसार पश्चिम बंगाल, सिक्किम, त्रिपुरा और केरल जैसे राज्यों में परिवार के सदस्य और सामुदायिक समूह तथा स्वयं सहायता समूह, क्लब और महिला पंचायत महिलाओं को चुनाव मे हिस्सा लेने के लिए प्रोत्साहित करती है। इन राज्यों में स्थानीय स्तर पर या गाँवों में पंचायतों के सकारात्मक व्यवहार एवं महिला प्राथमिकता एवं महिला समानता को स्वीकार करते हुए महिलाओं को ससम्मान अवसर प्रदान करते है। इन राज्यों में पंचायत के स्तर पर राजनीति दल भी सक्रिय रहती है। तथा गाँव में लोगों की राजनीतिक इच्छाएँ भी है। ग्राम पंचायतों में महिला प्रतिनिधियों की भूमिका को लेकर वर्ष 2004 में हरियाणा में भी इसी तरह का शोंध कार्य किया गया है। ''हरियाणा में महिला सरपंचों सभी ग्राम पंचायत की प्रमुख को पर्दा प्रथा, शिक्षा की कमी, अपनी जिम्मेदारी को निभाने में झिझक, पंचायत प्रणाली के बारे में जागरूकता की कमी और घर से बाहर निकलने में कई प्रकार की चुनौतियों एवं पाबंदियों जैसी प्रमुख समस्याओं का सामना करना पड़ता है। हालांकि हरियाणा में महिलाओं को राजनीति में आने के लिए प्रोत्साहित करने के और महिलाओं को लोगों के बीच पंहुच कर उनसे जुड़ी परेशानियां के जानने समझने का अवसर दिये गए जिसका सकारात्मक प्रभाव रहा एवं महिलाएँ स्थानीय निकायों में निर्वाचित हो कर आ रही हैं जब कोई महिला सदस्य ग्राम पंचायत समिति में होती है, गाँव की अन्य महिलाओं को महिला नेता के सामने अपनी समस्या रखने में सहज होती है ऐसा होने से महिलाओं की सामाजिक स्थिति सशक्त होती हैं। गाँव की अन्य महिलाओं को राजनीति में आगे बढ़ाने के कई सकारात्मक परिणाम देखे गए है।''

ग्राम पंचायतों में महिला प्रतिनिधित्व के सामने एक प्रमुख चुनौती रही है, उन्हें अपने इच्छानुसार कार्य करने के लिए स्वतंत्र नहीं है। अर्थात् आरक्षित सीटों से जीतने वाली महिलाएँ ''रबर स्टाम्प'' बनकर रह जाती है। आरक्षित सीटों से जीतने वाली महिला प्रतिनिधियों की स्थिति का आंकलन करने के लिए वर्ष 2008 में पंजाब की तीन ग्राम पंचायतों में एक सर्वेक्षण किया गया है। इसमें 75 प्रतिशत निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों ने स्पष्ट किया कि वे सिर्फ नाम की प्रतिनिधि है, जबकि पूरा कार्य तो उनके पति पुरूष रिश्तेदार करते हैं। हाल के दिनों में किए गए इसी प्रकार के अनेक अध्ययनों में भी यह निष्कर्ष सामने आई है। इन शोध कार्यों के अनुसार कई राज्यों में अभी भी महिलाओं को प्रॉक्सी के रूप में रखा जाता है और महिलाओं के लिए स्वतंत्र रूप से पंचायत से जुडी गतिविधियों से निपटने के लिए चुनौतियाँ विद्यमान है। हालांकि कई अध्ययन ऐसे भी है जो यह बताते है कि समय के साथ–साथ ग्राम पंचायत से संबंधित कार्यो में महिला प्रतिनिधियों की हिस्सेदारी में विशेष रूप से वृद्धि पायी गई है। देश के कई अन्य राज्यों में भी महिला प्रतिनिधियों में समाज में गहराई तक फैली पुरूष प्रधान सोच के विरूद्ध संघर्ष किया है, इतना ही नहीं इन महिला नेताओं से स्वयं सहायता समूह जैसी पहलों के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के भी प्रयास किए है। राजस्थान जैसे राज्य, में

तो कई ऐसे उदाहरण भी देखने को भी देखने को मिले है, जहाँ बहुत पढ़ी लिखी और उच्च पदों पर नौकरी करेन वाली महिलाओं ने अपने गाँवों के विकास के लिए पंचायत का चुनाव लड़ने का फैसला किया है। राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों को पर्याप्त धनराशि आबंटित नही किए जाने के कारण से भी जतीनी स्तर पर लिंग समावेशी विकास अर्थात् महिलाओं का विकास प्रभावित हुआ है। इस स्थिति को ठीक करने के लिए केरल और कर्नाटक जैसे कुछ राज्यों ने फंड आबंटन के तरीके में बदलाव कर महिलाओं के विकास में आने वाली रूकावटों को दूर करने की कोशिश की है, इसके लिए इन राज्यों ने पंचायतों के लिए लिंग आधारित बजट की शुरूआत किया है।

अध्ययन का उद्देश्य :-

1. महिला जनप्रतिनिधियों की पारिवारिक एवं शैक्षणिक स्थिति ज्ञात करना।
2. महिला जनप्रतिनिधियों की साामाजिक–आर्थिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
3. पंचायतों की कार्यप्रणाली में महिला जनप्रतिनिधियों की भूमिका व नेतृत्व का अध्ययन करना।

अध्ययन विषय का समाजशास्त्रीय महत्व :-

प्रस्तुत शोध कार्य "छत्तीसगढ़ राज्य के पंचायतों के निर्णयों में महिला जनप्रतिनिधियों की भूमिका के संदर्भ में विशेषकर स्थानीय निकायों एवं पंचायती संस्थाओं द्वारा पंचायतों एवं निकायों में विचारों की महत्ता से है, जिससे पंचायतों/निकायों में इसके निर्णयों के प्रभाव से विकास कार्यो में भूमिका को स्पष्ट किये जा सकते है।

छत्तीसगढ़ राज्य में महिला जनप्रतिनिधियों द्वारा विकास कार्यों में हिस्सेदारी से महिला सशक्तिकरण द्वारा महिला की सामाजिक आर्थिक के साथ–साथ राजनैतिक स्थिति को सुदृढ़ किये जा सके। महिला जनप्रतिनिधि की पंचायतों के निर्णयों में भूमिका की स्थिति निम्न है तथा केवल पंचायतों में एक तिहाई आरक्षण के कारण होने से केवल खानापूर्ति के समान है अर्थात् ये जनप्रतिनिधि बैठकों या निर्णयों में केवल शामिल होती है या अपना विचार रखने से पूर्व अपने पति या पुरूष रिश्तेदार के कहने के अनुसार करती है। ऐसे में महिला जनप्रतिनिधियों की पति या रिश्तेदार अपने मर्जी से इन्हें एक कटपुतली के अनुसार नचाता है। जिससे महिला प्रतिनिधि अपनी स्थानीय समस्याओं को नहीं उठा पाते जिससे विकास कार्य नगण्य या भून्य होती है तथा इनकी विचार दब जाता है।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन :-

तिवारी, कंचन (2020) ने ''महिला राजनीतिक और पंचायती राज : एक राजनीतिक अध्ययन (जनपद फारूखाबाद, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में)'' में इन्होंने फर्रूखाबद जनपद की महिलाओं द्वारा पंचायतों के प्रतिनिधित्व का अध्ययन किया है और निष्कर्ष में यह पाया गया, कि अधिकांशतः महिला उम्मीदवार (जिससे पंचायती राज से सम्बन्धित) के अन्तर्गत अनुसूचित वर्ग की महिला पंचायत पदाधिकारियों को (मुख्य रूप से शासकीय कर्मचारियों, अधिकारियों और ग्राम पंचायत की सवर्ण जाति के लोगों का) सहयोग नहीं मिल रहा है।

खान, मोहम्मद जावेद (2022) ने ''राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका'' का अध्ययन किया और अपने अध्ययन के निष्कर्ष में पाया कि महिलाओं के सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए शुरू किए गए आन्दोलन में आमूल चूल परिवर्तन आया है। जब महिलाएँ राजनीतिक क्षेत्र में शामिल होती है, तो सकारात्मक पहलू यह कि वे न केवल अपने जीवन में सुधार लाने में सक्षम है, बल्कि अपने परिवारों और समुदायों के कल्याण

को बढ़ावा देने में भी सक्षम है।

आशा (2023) ''भारतीय महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण एक अवधारणात्मक और विश्लेषणात्मक अध्ययन'' अपने शोध अध्ययन के निष्कर्ष में पाया कि राजनीति व्यवस्था सदियों से पितृसत्तात्मक विचारधारा के अधीन कार्य करती आ रही है और इस पर पूर्णतः पुरूषों का नियंत्रण रहा है। जिसके कारण महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था से दूर रहते आई है। यही कारण है कि महिलाएँ न केवल रानीतिक क्षेत्र में बल्कि सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक क्षेत्र में पुरूशों के कम है।

शोध पद्धति :–

किसी भी शोध कार्य को चरणबद्ध तरीके से एक वैज्ञानिक रूपरेखा बनाकर किये जाने से शोध कार्यों में अधिक विश्वसनीयता होती है। प्रस्तुत शोध में भी शोध कार्य को पूर्ण करने के लिए उन्हीं चरणबद्ध विधियों का अनुपालन किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया है। उत्तरदाताओं के चयन हेतु दैव निदर्शन के लॉटरी पद्धति के तहत दुर्ग जिले के तीनों विकास खण्डों (धमधा, पाटन व दुर्ग) के पंचायती निकायों में वर्ष 2019–20 में निर्वाचित 2762 महिला जन प्रतिनिधियों की संख्या का 15 प्रतिशत आनुपातिक आधार पर कुल 417 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। उत्तरदाताओं के रूप में ग्राम पंचायत के सरपंच व वार्ड पंच, जनपद व जिला पंचायत सदस्यों को सम्मिलित कर समंकों का संकलन किया गया है। समंकों के संकलन पश्चात् प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीबद्ध कर विभिन्न सांख्यिकी विधियों की सहायता से प्राप्त परिणामों के आधार पर विश्लेषण कर निष्कर्षों तक पहुंचने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण :–

उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति :

किसी भी समाज का संपूर्ण विकास (सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनैतिक) के लिए अति आवश्यक है, जिस समाज की महिला–पुरूष शिक्षित होते हैं, वहां समाज विकास की नई कहानी लिखना शुरू कर देता है। प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र के महिला जनप्रतिनिधियों की शैक्षणिक योग्यताओं को ज्ञात किया गया है।

तालिका क्रमाँक–01

उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति

क्र.	शैक्षणिक स्तर	संख्या	प्रतिशत
1.	साक्षर	26	6.2
2.	प्राथमिक	87	20.9
3.	माध्यमिक	81	19.4
4.	हाई स्कूल (10 वीं)	95	22.8
5.	हायर सेकेण्डरी (12वीं)	34	8.2
6.	स्नातक	58	13.9
7.	स्नातकोत्तर	36	8.6
योग		417	100

तालिका से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 22.8 प्रतिशत उत्तरदाता हाई स्कूल अर्थात् कक्षा 10वीं व 20.9 प्रतिशत उत्तरदाता प्राथमिक व 19.4 प्रतिशत उत्तरदाता माध्यमिक स्तर, 8.2 प्रतिशत उत्तरदाता हायर सैकेण्डरी, 13.9 प्रतिशत उत्तरदाता स्नातक व 8.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने विभिन्न विषयों में स्नातकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त किये हैं। अध्ययन क्षेत्र में मात्र साक्षर उत्तरदाता 6.2 प्रतिशत है। उपरोक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वर्तमान समय में जनप्रतिनिधि महिलाओं की शैक्षणिक विद्यालयीन स्तर (08वीं, 10वीं, 12वीं) तक सर्वाधिक है तथा जो नयी महिला राजनीतिक में प्रवेश कर रहें है, उनकी शैक्षणिक योग्यता स्नातक/स्नातकोत्तर तक भी परिलक्षित हो रही है। वहीं कई महिला जनप्रतिधि तकनीकी शिक्षा भी लिया है। यहीं कारण है कि ये महिला जनप्रतिनिधि स्थानीय समस्याओं को बेहतर ढंग से दूर करने का प्रयास कर रहे है।

महिलाओं वर्ग में स्वयं से पंचायत प्रतिनिधि बनने की इच्छा :-

अब समय आ गया है कि ग्रामीण स्तर में महिलाएँ भी ग्राम पंचायत में अपनी नेतृत्व क्षमता को प्रदर्शित करें, इसके लिए महिलाएँ धीरे–धीरे स्थानीय स्तर पर ग्राम पंचायतों में आ रही है। हाँलाकि पंचायत प्रतिनिधि बनने के लिए अधिकांशतः परिवार/पति/किसी कहने या किसी से प्रेरित होकर पंचायत चुनाव लड़ती है। उक्त तथ्यों के संदर्भ में अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं की सहायता से ज्ञात किया गया है।

तालिका क्रमाँक–02

महिला वर्ग में स्वयं से पंचायत प्रतिनिधि बनने की इच्छा

क्र.	अभिमत	संख्या	प्रतिशत
1.	पूर्ण सहमत	51	12.2
2.	सहमत	68	16.3
3.	तटस्थ	26	6.2
4.	असहमत	183	43.9
5.	पूर्ण असहमत	89	21.3
योग		417	100

तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 43.9 प्रतिशत उत्तरदाता इस विचार से असहमत एवं 21.3 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्ण असहमत हैं और बताया कि ग्रामीण क्षेत्र के महिला वर्ग में स्वयं से पंचायत प्रतिनिधि बनने की इच्छा नहीं होती है, जबकि 12.2 प्रतिशत उक्त विचार से पूर्ण सहमत एवं 16.3 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत हैं, वहीं 6.2 प्रतिशत उत्तरदाता उक्त विचार से तटस्थ है। उपरोक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि ग्रामीण महिलाओं में शैक्षणिक योग्यता में वृद्धि होने तथा कई मामलों में जागरूकता बढ़ने से महिला सशक्तिकरण में वृद्धि अवश्य हुआ है। पंचायती राज संस्थाओं में सर्वाधिक महिलाएँ स्वयं होकर ग्राम पंचायत का सदस्य बनना नहीं चाह रही है जो महिलाएँ ग्राम पंचायत के निर्वाचित होकर आ रही है उनमे आधी से अधिक महिलाएँ अपने घर/परिवार या पति अथवा किसी के कहने पर ही ग्रामीण नेतृत्व करने को तैयार हो रहे हैं।

पंचायती निकायों में महिला आरक्षण के कारण महिला नेतृत्व की संख्या में वृद्धि होना :-

इसमें कोई संदेह नहीं है कि पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण होने से पंचायती स्तर पर इनकी नेतृत्व क्षमता में वृद्धि हुई है तथा इसका सकारात्मक प्रभाव अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा स्त्रोत बनते हुए सभी महिलाओं को जागरूक करने का कार्य किया है। अब महिलाओं को भी लगने लगा है कि इस पुरूष प्रधान समाज में महिलाएँ अपने अस्तित्व की लड़ाई को जीत रही है। इस प्रकार पंचायतीय निकायों में महिला आरक्षण होने से ये वर्ग ग्रामीण स्तर पर (ग्राम पंचायत, जनपद पंचायत एवं जिला पंचायत) अपनी नेतृत्व क्षमता का बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं।

तालिका क्रमाँक-03

पंचायती निकायों में महिला आरक्षण से नेतृत्व की संख्या में वृद्धि

क्र.	अभिमत	संख्या	प्रतिशत
1.	पूर्ण सहमत	96	23.0
2.	सहमत	160	38.4
3.	तटस्थ	58	13.9
4.	असहमत	76	18.2
5.	पूर्ण असहमत	27	6.5
योग		417	100

तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 38.4 उत्तरदाता इस विचार से सहमत एवं 23.0 प्रतिशत उत्तरदाता उक्त विचार से पूर्ण सहमत हैं कि पंचायती निकायों में महिला आरक्षण से महिला नेतृत्व की संख्या में वृद्धि हुई है, जबकि 18.2 प्रतिशत उत्तरदाता उक्त विचार से असहमत एवं 6.5 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्ण असहमत हैं, वहीं 13.9 प्रतिशत उत्तरदाता उक्त विचार से तटस्थ है। उपरोक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि पंचायती राज अधिनियम के तहत् महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत/50 प्रतिशत आरक्षण के प्रावधान होने से महिला सशक्तिकरण को बल मिला तथा महिला वर्ग में एक सकारात्मक ऊर्जा का संचार हो रही है। यही कारण है कि आज ग्रामीण स्तर पर महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, सशक्तिकरण को बल मिल रहा है।

महिला जनप्रतिनिधि को अपने (कार्यकर्ता) पर सकारात्मक प्रभाव बनाये रखना पूर्ण चुनौतीपूर्ण होना :-

राजनीति में कार्यकर्ता की महत्वपूर्ण योगदान होता है। कार्यकर्ता ही अपने नेता या जनप्रतिनिधि के कार्यों एवं कार्य विवरण को आम जनता तक पहुंचाता है। किसी भी जनप्रतिनिधि के लिए अपने कार्यकर्ताओं की आवश्यकताओं, समाग्रियों, उनकी सहायता करना तथा अन्य संसाधन पहुंचाना होता है, ताकि ये कार्यकर्ता बेहतर कार्य करते हुए, अपने नेता के प्रति आम जनता में विश्वास पैदा करें। ऐसे में एक कार्यकर्ता के लिए विभिन्न परिस्थितियों में कार्य करना मुश्किल हो सकता है, वहीं एक जनप्रतिनिधि के लिये अपने कार्यकर्ता पर हमेशा सकारात्मक प्रभाव बनाये रखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य हो सकता है। प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र में पंचायती राजसंस्थाओं में महिला जनप्रतिनिधियों के लिए उनके कार्यकर्ता पर सकारात्मक प्रभाव होने संबंधी तथ्यों को ज्ञात किया गया है।

तालिका क्रमाँक–04

महिला जनप्रतिनिधियों का कार्यकर्ताओं पर सकारात्मक प्रभाव बनाये रखना चुनौतीपूर्ण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	पूर्ण सहमत	129	30.9
2.	सहमत	171	41.0
3.	तटस्थ	38	9.1
4.	असहमत	47	11.3
5.	पूर्ण असहमत	32	7.7
योग		417	100

तालिका से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित महिला जनप्रतिनिधि उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 41.0 प्रतिशत उत्तरदाता इस विचार से सहमत एवं 30.9 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्ण सहमत है कि महिला जनप्रतिनिधियों को कार्यकर्ताओं पर सकारात्मक प्रभाव बनाये रखना या स्वयं के प्रति सकारात्मक छवि बनाये रखना बहुत ही चुनौतीपूर्ण होता है, जबकि 9.1 प्रतिशत उत्तरदाता उक्त विचार से असहमत एवं 7.7 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्ण असहमत है, वहीं 11.3 प्रतिशत उत्तरदाता उक्त विचार से तटस्थ है। उपरोक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि राजनैतिक स्तर पर नेता या जनप्रतिनिधियों को अपने कार्यकर्ताओं का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है, उनके आवश्यकताओं व संसाधनों को पूरा करना पड़ता है, वहीं महिला जनप्रतिनिधि के लिए अपने कार्यकर्ताओं के साथ सकारात्मक प्रभाव डालना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

समस्याएँ :–

अध्ययन क्षेत्र की महिला जन प्रतिनिधियों की निम्न शैक्षणिक योग्यता का होना, बातचीत करने व आत्मविश्वास की कमी होना, पुरूष प्रधान समाज में महिलाओं के प्रति पुरूषों द्वारा निम्न दृष्टिकोण रखना, महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक व राजनीतिक पृष्ठभूमि का कमजोर होना, राजनीतिक अभिरूचि का अभाव तथा महिला सशक्तिकरण का निम्न प्रभाव तथा महिलाओं की आत्म–निर्भरता न होना इत्यादि प्रमुख समस्या एवं चुनौतियाँ हैं।

सुझाव :–

पंचायत स्तर पर पूर्व की अपेक्षा महिलाओं की भूमिका में वृद्धि अवश्य हुई है, लेकिन अनेक प्रकार से सामाजिक–आर्थिक व राजनीतिक समस्याएँ अब भी विद्यमान है, जिन्हें दूर किए बिना स्थानीय निकायों में महिलाओं की वास्तविक नेतृत्व क्षमता का आंकलन वांछनीय नहीं होगा क्योंकि इन समस्याओं के कारण महिलाओं की नेतृत्व क्षमता प्रभावित होती है, जिन्हें दूर करने की आवश्यकता है। उक्त समस्याओ के समाधान हेतु सर्वप्रथम केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा जमीनी स्तर पर कारगर योजनाबद्ध तरीके से महिलाओं में नेतृत्व क्षमता विकसित करने हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए, इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों से न केवल महिलाओं के आत्मविश्वास में वृद्धि होगी, बल्कि वे स्वयं आपने आसपास के महिलाओं और बालिकाओं को अपने अधिकारों के प्रति सजग करेंगी जिसका दूरगामी परिणाम भारतीय राजनीति में देखने को मिलेगा, परिणामस्वरूप महिलाएँ स्वयं

होकर राजनीति का हिस्सा बनेंगी और समाज व राष्ट्र का नेतृत्व करेंगी।

निष्कर्ष :-

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की सामाजिक–राजनैतिक स्थिति में सुधार हो रहा है, हालांकि ये महिलाएँ राजनैतिक निर्णय अपने परिवार के सदस्य या पति को पूछ कर ही निर्णय लेती है। पूर्व की अपेक्षा महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति में सुधार होने से उनके सामाजिक–राजनैतिक व अन्य सभी क्षेत्रों में सुधार हुआ है, परिणामस्वरूप पंचायत स्तर पर बेहतर विकास कार्यों को गति मिली है। वहीं आज भी ग्रामीण अंचल की ज्यादातर महिलाओं में आत्मविश्वास व निर्णय क्षमता का अभाव, पारिवारिक समस्याओं की अधिकता के कारण प्रत्यक्ष रूप से राजनैतिक दायित्वों को पूर्ण करने में अक्षमता का अनुभव कर रही हैं।

सन्दर्भ सूची :-

1. Presstrust of India, Dec. 1, 2021.
2. Malhotra, Sarika, Ground Report Is Reservation for women in Anthayaty Working at The Grassroot Level-I, Busines today. August 26, 2014.
3. Mukerji, A."social Route of Local Politics: women contestants in the panchayort Electiong of Uttar pradesh Indian Journal of Gender Stuelip, Vol.-28, No.-1, 2015, Pp113-126 & 221.
4. Jiby J. Kattakayam, "50% women Reservation in Kerala Local Body Polls and the Diminution of a Male Bastion", The Times of India, December 2, 2020.
5. Sanchita Hazra, "Women participation in Sonchayat Ryy in West Bengal: An Appraisal Economic Affairs, Vol.-62, No.-02 , 2017,Pp. 347.
6. Kudubasree, Training, Young Kerala Women Script History, Daiji world, Sep. 24, 2023.
7. Prasad, B. D. and Haranath, S. "Participation of women and Dalits in Gram Panchayat" Journal of Rural Development, Vol.-23, No.-3, 2004, Pp. 297-318.
8. Singh, D.P. "Impact of 73rd Amendment Act on women's Leadership in the Punjab" International Journal of Rural Studies Vol.-15, No.-10, 2008, Pp.1-8.
9. Sikdar, Shubhomay "In Madhya Pradesh Panchayats Husbands of Elected women taking oath" The Hindu, August 8, 2022.
10. Dave, H. "Husbands make most of Gujarat's 50% Reservation for women in Local Bodies" Hindustan Times, February 3, 2017.
11. Pareena G. Lawrence and Kavita Chakravarty "Life Histories of Women Panchayat Sarpanches from Haryana, India: From the merging to the Center", Cambridge scholars, Publishing, 2017.
12. Dabas, Maninder "8 women Sarpanch who Are Leading by Examples and Turning The Turning the fortunes of Indian Villages" India Times, August 22, 2023.

13. Nisha Velappan Nair and John S. Moolakkattu, "Gender Responsive Budgeting: The Case of a Rural Local Body in Kerala," sage open, Vol.-8, No.-01, January; 2018.
14. B. Aravind Bumar, "women Need Greater say in Panchayats" The Hindu, June 24, 2022.
15. तिवारी, कंचन ''महिला राजनीतिक और पंचायती राज (राजनीतिक अध्ययन जनपद फरूखाबाद, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में)'' अप्रकाशित शोध ग्रंथ, छत्रपति साहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश, 2020.
16. खान, मोहम्मद जावेद ''राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका'' इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन मॉर्डन मैनेजमेंट, अप्लाइड साइंस एण्ड सोशल साइंस, अंक–04, भाग–02, संख्या–02, अप्रैल–जून; 2022, पृ. 184–190.
17. आशा ''भारतीय महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण एक अवधारणात्मक और विश्लेषणात्मक अध्ययन'' अपनी माटी, अंक–47, अप्रैल–जून; 2023 https://www.apnimaati.com/2023/07/blog-post_15.html

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 213-218

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत में सीमांतीकरण के विभिन्न आयाम

डॉ. देवेन्द्र प्रसाद राम

एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, राजनीतिशास्त्र

हरिसिंह महाविद्यालय, हवेली खड़गपुर, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर (बिहार)

सार–संक्षेप :

विश्व में सर्वाधिक विविधता पूर्ण समाज वाला भारत एक गतिशील लोकतंत्र वाला देश है। भारत में सीमांतीकरण की स्थिति एक गंभीर समस्या के रूप में दिखाई देता है। आज हम देखते हैं कि भारत में भाषा, धर्म, क्षेत्र, संस्कृति, लिंग, आर्थिक असमानता आदि के आधार पर विभाजन पाया जाता है, जिसके आधार पर सीमांतीकरण का जन्म हुआ। बहुसंख्यक हिन्दुओं में ही करीब 6,000 जातियाँ हैं, जिनमें से 3,500 ओबीसी में आती है, जाति का दायरा अनुसूचित जाति/जनताति, इस्लाम, ईसाई और अन्य पंथों–मजहबों में भी फैला हुआ है भारत में कई भाषाऐं और बोलियां प्रचलित है, भारत विश्व के अधिकांश धर्मों का उद्‌गम स्थल है तो इस्लाम एवं पारसी जैसे कई पंथों–मजहबों का आश्रय दाता भी रहा है। अब प्रश्न उठता है कि सीमांत वर्ग के लोग भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य और सम्मान से क्यों वंचित हैं? क्या जनता को इन सिमांत वर्ग की आंतरिक गतिविधियों से अवगत रहने का अधिकार नहीं है? हमारे समाज में कुछ जातियों को उच्च स्थान दिया जाता है तथा कुछ को निम्न समझा जाता है, क्यों? इन जातियों हेतु समाज में उनके लिए कुछ नियमों को लगाकर उनका सीमान्तीकरण कर दिया जाता है। समाज के ये वर्ग विभिन्न सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं।[1]

भारतीय संविधान में भी इनकी उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम दिए गए हैं। समीन्तीकरण के माध्यम से समाज में कुछ वर्गों के लिए स्वतंत्र एवं पृथक नियम बनाए गए हैं। ऐसे कई महत्वपूर्ण प्रश्न हैं ? जिन पर प्रकाश डालना अत्यंत आवश्यक प्रतित होता है, क्योंकि हम जानते हैं कि देश की नीतियों के निर्माण एवं उनके कार्यान्वयन में इनका सीधा हस्तक्षेप होता है, भारत में सीमांतीकरण के विभिन्न आयाम के संदर्भ में परीक्षण करने का एक प्रयास किया गया है।

सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि :

सीमांतीकरण की प्रक्रिया का सम्बन्ध सीमान्त व्यक्ति (Mariginal Man) की अवधारणा से है। रॉबर्ट ई. पार्क ने समाजशास्त्र में सबसे पहले सीमान्त व्यक्ति की अवधारणा को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया है। मार्क्स ने श्रमिकों में अलगाव तथा उत्पादन की प्रक्रिया में उनके शोषण के आधार पर उन्हें ''सीमान्त व्यक्ति'' के नाम से सम्बोधित किया। रॉबर्ट पार्क के अनुसार ''जो व्यक्ति दुविधा में उलझे होने के कारण अपने बारे में स्वंय कोई

निर्णय लेने में असमर्थ होता है, उसे हम सीमान्त व्यक्ति कहते हैं।'' सीमांतीकरण शोषण, उत्पीड़न और तिरस्कार से पैदा होने वाली एक ऐसी दशा है, जिसमें कोई समुदाय सामाजिक, संस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक रूप से इस तरह पिछड़ जाता है कि वह हाशिये (Margin) पर आ जाता है।[2] तिरस्कार और उपेक्षा की प्रक्रिया से किसी समुदाय में अलगाव की जो दशा पैदा होती है, उसी को हम सीमांतीकरण कहते हैं। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो अनेक दशाओं के प्रभाव से समाज में अपने आप धीरे–धीरे विकसित होती है। एक तरह से यह परिवर्तन और विकास के नकारात्मक अथवा हानिकारक पक्ष से सम्बन्धित है। इसका अर्थ है कि जब सरकार द्वारा समाज के सभी दुर्बल वर्गों के विकास के प्रयत्न करने के बाद भी नीतियों के दोषपूर्ण होने या स्वंय दुर्बल समूहों के कमजोर होने के कारण एक बड़ा समूह या समुदाय देश और समाज की मुख्य धारा से अलग–थलग पड़ने लगता है। तब इस दशा को हम सीमांतीकरण कहत हैं। समाज में ऐसी दशाएं पैदा हो जाती है, जिसमें कुछ समूह सत्ता और शक्ति से जुड़कर सभी तरह के लाभ पाने लगते हैं, जबकि सीमान्त समूह अपनी झुग्गी–झोपड़ी में बैठकर विकास को देखते तो हैं, लेकिन स्वंय उसके भागीदार नहीं बन पातें।

सीमांतीकरण के प्रमुख स्तर (Main stages of Marginalisation) :

समाज का देश में सीमांतीकरण का विभाजन विभिन्न स्तरों पर किया जाता है। यहाँ हम प्रमुख स्तरों का उल्लेख कर रहे हैं जो व्यक्ति, जाति, भाषा, क्षेत्र, लिंग सीमाओं आदि के आधार पर कर दिया जाता है।

समाज में विभिन्न जाति वर्ग पाए जाते हैं, जिनमें रहने वाले व्यक्तियों एवं उनकी जाति का सीमांतीकरण कर दिया जाता है, समाज में सीमान्त वर्ग होते हैं जो समाज द्वारा सदैव उपेक्षित रहते हैं, जाति स्तर पर इनका तीन वर्गों में विभाजन किया गया है –

1. अनुसूचित जाति 2. अनुसूचित जन जाति 3. पिछड़ा वर्ग

इन जातियों को समाज में निन्म स्थान प्राप्त होता है। इनके अधिकारों को सीमित करके उन्हें उपेक्षित कर दिया जाता है।

समाज को विभिन्न समूहों में विभाजित करने का जाति–प्रथा ही एक मात्र साधन नहीं हैं। आधुनिक युग में ही नहीं, आदिकाल से ही ऐसे अनेक साधन हैं जिनके आधार पर समाज को विभाजित किया जाता था, जैसे– शिक्षा, पेशा, आय, आयु आदि।

आर्थिक सीमांतीकरण में लोगों को आर्थिक अवसरों से वंचित किया जाता है, जिससे सामाजिक स्थिति और जीवन स्तर कम हो जाता है– उदाहरण गरीबों को शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य सुविधाओं तक पहुँचाने से वंचित किया जाता है।

राजनीतिक सीमांतीकरण में लोगों राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने से वंचित किया जाता है, उदाहरण कुछ समुदाय को मतदान के अधिकार से वंचित किा जाता है। उनकी अवाज सुनी नहीं जाती है और उन्हें निर्णय लेने में शामिल नहीं किया जाता है।

क्षेत्र के आधार पर पर सीमांतीकरण एक ऐसी स्थिति है, जहाँ एक विशष्ट भौगोलिक क्षेत्र या समुदाय को मुख्यधारा के सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक जीवन में शामिल होने से वंचित कर दिया जाता है। यह अवसर संसाधनों की कमी, असमानता और सामाजिक बहिष्कार के कारण होता है। उदाहरण– ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी

क्षेत्र, पर्वतीय क्षेत्र, रेगिस्तानी क्षेत्र, दूरस्थ क्षेत्र इत्यादि।

हमारा देश एक बहुभाषी राष्ट्र है, प्रत्येक राज्य में अलग–अलग भाषा, अलग बोलियाँ प्रचलित है, जिनके आधार पर समाज में उनका सीमांतीकरण हो जाता है, क्योंकि प्रत्येक राज्य एवं समाज अपनी भाषा को महत्व देता है। मुख्यतः हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी है, परन्तु फिर भी यहाँ गुजराती, मराठी, कन्नड, तेलगू, अंग्रेजी, बंग्ला आदि भाषा के आधार पर इनके राज्यों का सीमांतीकरण हुआ है।

हमारा समाज लैंगिक स्तर पर स्त्री एवं पुरूष में विभाजित है, दोनों को समान अधिकार प्राप्त है, परन्तु इनके कार्यों एवं योग्ताओं का सीमांतीकरण हो गया है। आज हमारा समाज स्त्रियों के कुछ कार्यों को स्वीकृति नहीं देती है, कुछ समाज ऐसे हैं जहाँ स्त्रियाँ को उचित शिक्षा तक की व्यवस्था नहीं की जाती, उन्हें समाज में पुरूषों के बराबर अधिकार से वंचित कर दिया जाता है। इस प्रकार लैंगिक स्तर पर सीमांतीकरण दृष्टिगोचर होता है।[3]

हमारे भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार के वर्ग पाए जाते हैं जैसे– मजदूर वर्ग, कृषक वर्ग, औद्योगिक वर्ग, पूंजीपति वर्ग, कर्मचारी वर्ग, आदि इन सभी वर्गों का समाज में क्रमशः इनके कार्यों एवं स्थिति के आधार पर सीमांतीकरण हो जाता है।

अतः उपरोक्त सभी स्तरों पर हम देख सकते हैं कि समाज में सीमांतीकरण भाषा, जाति, व्यक्ति, क्षेत्र, लिंग आदि के आधार पर पाया जाता है।

सीमांतीकरण के कारण (Causes of Marginalisation) :

असमानता एवं सीमांतीकरण के कई कारण हैं, इन कारणों में समाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक कारणों को मुख्य स्थान दिया जाता है, जिसमें गरीबी, जाति और लिंग अधारित भेदभाव धर्म और भाषा शामिल है, ये कारक कुछ समूहों को संसाधनों और अवसरों से वंचित करते हैं। इन कारणों का संक्षिप्त वर्णन अग्रलिखित है :–

1. **सामाजिक कारण :–** भारतीय समाज प्राचीन काल से ही विभिन्न जातियों उपजातियों एवं वर्गों में विभाजित है। प्राचीन भारतीय समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र में विभाजित था। शूद्र को अछूत कहा जाता था। उस समय उन्हें बस्ती से बाहर निवास करना पड़ता था। समाज के उपर के तीन वर्गों को समाज में उच्च स्थान प्राप्त था तथा शिक्षा एवं विभिन्न प्रकार के धार्मिक संस्कारों एवं मंदिरों में प्रवेश इत्यादि का अधिकार प्राप्त था। निम्न वर्ग को यह अधिकार प्रदान नहीं किए गए थे। इसी कारण सीमांतीकरण का जन्म हुआ। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत सरकार ने सामाजिक असमानता एवं सीमांतीकरण को समाप्त करने के लिए विभिन्न नीतियों का निर्माण किया गया तथा सवैधानिक प्रावधान किए गए।

2. **आर्थिक कारण :–** असमानता सीमांतीकरण का दूसरा महत्वपूर्ण कारण आर्थिक कारण है। समाज अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यकों एवं महिलाओं के अर्थ (पैसा) की अत्यधिक समस्या रहती है। स्वतंत्रता के पश्चात् इन्हें यद्यपि समान अधिकार प्रदान किए गए परन्तु गरीबी के कारण इन्हें उचित पोषण, शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी बुनियादी सुविधाऐं भी नहीं मिल पाती है। अनुसूचित जाति/जनजाति, अल्पसंख्यक एवं महिलाओं को आरक्षण तो प्रदान किया गया है, परन्तु इन लोगों के उत्थान के लिए बनाई गई अधिकांश नीतियाँ

या तो केवल कागजों में है या फिर भ्रष्ट्राचार की भेंट चढ़ गई है। किसी भी कार्य, उद्योग–धन्धे, कल–कारखाने एवं व्यवसाय के लिए सर्वप्रथम धन की आवश्यकता होती है, परन्तु गरीब वर्ग के पास स्वंय व्यवसाय के लिए धन नहीं होता है। बैंक ऋण (कर्ज) देने से पूर्व किसी न किसी प्रकार की सम्पत्ति को गिरवी रखकर ही धन उपलब्ध कराता है। निम्न वर्ग के लोग सेठ–साहूकारों से उच्च ब्याज पर कर्ज लेते हैं, तथा एक बार पुनः गरीबी के दुष्चक्र में फंस जाते हैं।

3. **राजनीतिक कारण :–** समाज के कमजोर एवं निम्न वर्गों को प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक पूर्ण रूप से सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक अधिकार प्रदान नहीं किए गये ऐसी स्थिति में समाज की मुख्य धारा से पिछड़ गये जिसके कारण सीमांतीकरण उत्पन्न लिया। स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान के द्वारा प्रत्येक वर्ग को समान अधिकार प्रदान किए गए। इनके लिए एक आयोग की स्थापना किया गया जो अनुसूचित जाति/जनजाति पर होने वाले अत्याचार की जाँच करता है। तथा सरकार को अपनी रिपोर्ट सौंपता है।

4. **धर्म और भाषा :–** धर्म और भाषा भी सीमांतीकरण का एक आधार है, क्योंकि कुछ धर्मों और भाषाओं के लोग शिक्षा रोजगार और राजनीतिक भागीदारी तक पहुँच से वंचित रह जाते हैं।

5. **शिक्षा की कमी :–** शिक्षा की कमी भी सीमांतीकरण के कारणों में से एक है, क्योंकि इससे लोगों का आर्थिक और सामाजिक विकास के अवसरों से वंचित किया जाता है।

6. **सांस्कृतिक कारण :–** एक संस्कृति के लोगों को दूसरी संस्कृति में शामिल होने के लिए संघर्ष करना पड़ सकता है, जो सीमांतीकरण का कारण बन सकता है। जहाँ किसी समूह को उनकी संस्कृति भाषा और पहचान को दबाने या मिटाने का प्रयास किया जाता है।

7. **असुरक्षित और उपेक्षित समूह :–** सीमांतीकरण के कारण समान में कुछ ऐसे समूह हैं, जिन्हें असुरक्षित और हाशिये पर स्थित समुदाय में शामिल किया जाता है, जैसे मैला ढ़ोने वाले, कूड़ा उठाने वाले, झुग्गी में रहने वाले और सफाई कर्मचारी आदि।[5]

उपरोक्त सभी कारणों के कारण भारत में सीमांतीकरण की समस्या बनी हुई है, जो एक जटिल सामाजिक और आर्थिक समस्या है। इन कारणों से समाज के लोग का समान अवसरों से वंचित कर दिए जाते हैं। जिससे गरीबी, शिक्षा में कमी, स्वास्थ्य समस्याएं और हिंसा का जन्म होता है।

सीमांतीकरण का प्रभाव :–

सीमांतीकरण का एक प्रमुख प्रभाव सामाजिक, आर्थिक, (भेदभाव, निर्धनता, बेराजगारी) विकास में कमी है। इससे प्रभाव से व्यक्ति या समूह को उन्हें संसाधनों, अवसरों और सुविधाओं तक पहुँचने में कठिनाई होती है। इसके प्रभाव से समाज में अलग–थलग महसूस करते हैं और मुख्य धारा से बाहर हो जाते हैं। सीमांतीकरण के प्रभाव के कारण लोग गरीबी में फंस जाते हैं लोगों को नौकरी पाने में कठिनाई होती है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति और भी खराब हो जाती है, सीमांतीकरण लोग अक्सर कम उत्पादक होते हैं, क्योंकि उन्हें उचित शिक्षा, प्रशिक्षण और अवसरों का अभाव होता है। उनके साथ अक्सर भेदभाव किया जाता है, जिनसे नौकरी, आवास और अन्य अवसरों में कठिनाई होती है। सीमांतीकरण लोगों के पास अक्सर राजनीतिक शक्ति का अभाव भी होते हैं, जिससे वे अपने अधिकारों की रक्षा करने में असमर्थ होते हैं। इसके प्रभाव के कारण कभी–कभी हिंसा

और संघर्ष भी होते हैं। ये लोग अपने अधिकारों और न्याय के लिए संघर्ष करते हैं। सीमांतीकरण के प्रभाव दलित, महिलाऐं, गरीब लोग, अनुसूचित जाति/जनजाति, अल्पसंख्यक समुदाय आदि पर प्रभाव पड़ता है। इन्हें सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक भागीदारी से वंचित किया जाता है, जिससे उनके जीवन स्तर और अवसरों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।[6]

सीमांतीकरण को दूर करने का उपाय :-

सीमांतीकरण को दूर करने के लिए हमें अन्यायपूर्ण और भेदभाव तरीकों को दूर करना होगा, लोगों को समान अवसर और भागीदारी प्रदान करनी होगी, इसके लिए हमें नीतिगत सुधारों, सामाजिक जागरूकता और समुदायों के बीच सहयोग की आवश्यकता है। लोगों को शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल विकास के माध्यम से सशक्त बनाना, स्वास्थ्य सेवा और अन्य सुविधाओं तक पहुँच प्रदान करना, लोगों को सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रिया में शामिल करना होगा। (इस प्रकार सीमांतीकरण एक जटिल समस्या है, जिसका समाधान करने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है।)[7]

शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए शिक्षण प्रशिक्षण स्कूल के बुनियादी ढ़ाचे में सुधार और पाठ्यक्रम विकास पर ध्यान देना होगा। सभी बच्चों को शिक्षा तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए विशेष रूप से लड़कियों और गरीब बच्चों के लिए छात्रवृत्ति और अन्य सहायता कार्यक्रम प्रदान करना चाहिए। सीमांतीकरण क्षेत्रों में सड़कों, पुलों और सर्वाजनिक परिवहन जैसे बुनियादी ढ़ांचे में सुधार कर विकास को बढ़ाना होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में बेहतर बुनियादी ढ़ांचे के विकास से लोगों को रोजगार क्षेत्रों में सुधार और आधुनिक तकनीक का उपयोग करने से ग्रामीण लोगों को आजीविका में सुधार होगा। दलित और पिछड़ी जातियों को सशक्त बनाने के लिए विशेष कार्यक्रम और नीतियाँ लागू करनी चाहिए।

इस प्रकार सीमांतीकरण एक जटिल समस्या है, जिसका समाधान करने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढ़ांचे, आर्थिक विकास और सामाजिक समानता पर ध्यान केंद्रित करना होगा।

निष्कर्ष :-

अतः उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि सीमांतीकरण एक जटिल समस्या है। सभी स्तरों पर हम देख सकते हैं कि समाज में सीमांतीकरण भाषा, जाति, व्यक्ति, धर्म, लिंग, गरीबी, क्षेत्र आदि आधार पर पाया जाता है। सीमांतीकरण की चुनौतियों को समझना और उनके समाधान की दिशा में कार्य करना भारतीय लोगतंत्र की गुणवत्ता को और अधिक सशक्त बनाने में सहायक होगा। भारत संयुक्त राष्ट्र का एक सक्रिय सदस्य है जो सीमांतीकरण को कम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र के साथ मिलकर गरीबी, शिक्षा, स्वास्थ्य और मानवधिकारों के मुद्दों पर काम करता है।

संदर्भ-सूचि :-

1. डॉ0 शान्ति प्रकाश सिंह, अन्नु कुमारी, भारत में राजनीतिक प्रक्रिया, ठाकुर पब्लिकेशन प्रा0 लि0, पटना, पृष्ठ नं0– 120 से 123 तक।

2. संपादकीय दैनिक जागरण 19 अप्रैल 2025, ए. सूर्यप्रकाश का लेख, आदर्श भारत के निर्माण की आधारशिला, पृष्ठ नं0– 10
3. प्रभात खबर, 24.11.2024, सुरभि, लोकतंत्र की मजबूत प्रस्तुति : विवेकानंद सिंह।
4. Youtube.edrksainiEducation classes
5. Wikipedia https//en wikipedia.org
6. facebook.sociology in india
7. Wikipedia https//en wikipedia.org
8. एम0 के0 नवाज ''बंगला एण्ड इन्टरनेशनल लॉ, आई. जे. आई. एल. वाल्यूम'' (1971) पृष्ठ नं0– 251, 261

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 219-222

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

उपनिषदों में वर्णित नैतिक मूल्य

पुष्पेन्द्र कुमार तोमर, शोधार्थी,
प्रोफेसर डॉ. कुमरपाल
संस्कृत विभाग, राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, आगरा।

भारतीय संस्कृति का मूलाधार 'वेद' हैं और उपनिषद् वेदों का अंतिम तथा सर्वश्रेष्ठ भाग हैं। वे न केवल वेदों का अंत (अर्थात् वेदान्त) हैं, बल्कि ज्ञान की चरम परिणति भी हैं। उपनिषदों में मानव जीवन के परम लक्ष्य – आत्मा और ब्रह्म की एकता (अद्वैत) का उद्घाटन किया गया है।

किन्तु यह केवल आध्यात्मिक अनुभूति तक सीमित नहीं हैश उपनिषदों का दृष्टिकोण व्यावहारिक और नैतिक दोनों है। वे यह बताते हैं कि सत्य की प्राप्ति केवल ध्यान और ज्ञान से नहीं, बल्कि नैतिक आचरण से संभव है।

उपनिषदों में वर्णित मूल्य न केवल व्यक्तिगत मुक्ति (मोक्ष) के मार्गदर्शक हैं, बल्कि समाज में समरसता, न्याय और शांति स्थापित करने के भी साधन हैं। इसीलिए उपनिषदों को "शाश्वत नैतिक ग्रंथ" कहा गया है, जिनकी प्रासंगिकता युगों–युगों तक बनी रहेगी।

इस शोध का उद्देश्य उपनिषदों में निहित नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना और उनकी आधुनिक संदर्भ में उपयोगिता को प्रतिपादित करना है। विशेषतः –

1. उपनिषदों में प्रतिपादित प्रमुख नैतिक मूल्यों की पहचान करना।
2. नैतिक मूल्यों के आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक आयामों का विवेचन करना।
3. व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में इन मूल्यों के योगदान का निरूपण करना।
4. आधुनिक युग में उपनिषदों की नैतिक शिक्षाओं की प्रासंगिकता का विश्लेषण करना।

उपनिषदों में नैतिक मूल्यों का विवेचन :

(क) सत्य :

मुण्डकोपनिषद् (3.1.6) में कहा गया है –

"सत्यमेव जयते नानृतम्।"

अर्थात् असत्य पर अंततः सत्य की ही विजय होती है।

छान्दोग्योपनिषद् (6.16.3) में भी कहा गया है –

"सत्यं हि परमं तपः" – सत्य ही परम तप है।

सत्य को केवल नैतिकता का उपदेश नहीं, बल्कि आध्यात्मिक साधना माना गया है। सत्य वह माध्यम

है, जो आत्मा को ब्रह्म से जोड़ता है। यही आदर्श भारत के राष्ट्रीय प्रतीक वाक्य "सत्यमेव जयते" में निहित है।

(ख) अहिंसा और करूणा :

ईशावास्योपनिषद् (1) में उद्घोष है –

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।"

जब यह अनुभूति हो जाती है कि सारा जगत् ईश्वर से आच्छादित है, तब किसी भी जीव पर हिंसा करना ईश्वर पर हिंसा करने के समान हो जाता है।

इस प्रकार उपनिषदों में अहिंसा केवल बाह्य कर्म नहीं, बल्कि आत्मबोध की परिणति है। यही शिक्षा आगे चलकर जैन और बौद्ध धर्म के अहिंसा सिद्धांतों का दार्शनिक आधार बनी।

(ग) आत्मसंयम :

बृहदारण्यकोपनिषद् (5.2.3) में प्रजापति ने देव, मनुष्य और असुरों को तीन शिक्षाएँ दीं–

"दम, दत्त, दयाध्वम्" – संयम रखो, दान दो, और दया करो।

ये तीनों ही नैतिकता की त्रयी हैं।

आत्मसंयम से व्यक्ति अपनी इच्छाओं और वासनाओं पर नियंत्रण प्राप्त करता है। यह संयम ही उसे बाह्य भोगों से ऊपर उठाकर आत्म–साक्षात्कार की दिशा में अग्रसर करता है।

(घ) श्रद्धा और विश्वास :

कठोपनिषद् (1.1.20) में कहा गया है–

"श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्" – श्रद्धा के बिना ज्ञान की प्राप्ति असंभव है।

श्रद्धा गुरु के प्रति, ज्ञान के प्रति और स्वयं के भीतर निहित आत्मा के प्रति होती है।

उपनिषदों की गुरु–शिष्य परंपरा का मूल तत्व यही श्रद्धा है। यह श्रद्धा ही ज्ञान को व्यवहार में परिणत करती है।

(ङ) समत्व और सहिष्णुता :

बृहदारण्यकोपनिषद् (4.5.15) में कहा गया –

"आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः" – आत्मा सभी के लिए सुलभ है, वह किसी जाति या वर्ग विशेष की संपत्ति नहीं।

भगवद्गीता (5.18) जो उपनिषदों का सार है, कहती है–

"विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चौव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।।"

अर्थात् ज्ञानी व्यक्ति सभी में एक ही आत्मा का दर्शन करता है।

यह दृष्टिकोण सामाजिक समानता, सहिष्णुता और सार्वभौमिक भ्रातृत्व की भावना का मूल है।

(च) त्याग और अपरिग्रह :

ईशावास्योपनिषद् (1) में कहा गया –

"तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।"

त्याग की भावना से ही भोग करोय लोभ मत करो।

यह शिक्षा आज के उपभोक्तावादी समाज के लिए अत्यंत आवश्यक है। त्याग का अर्थ यहाँ पलायन नहीं, बल्कि संतुलन है – जीवन के प्रति संयमित दृष्टिकोण रखना।

उपनिषदों के अन्य नैतिक मूल्य :

1. **क्षमा** – आत्मबल की सर्वोच्च अभिव्यक्ति।
2. **सत्यनिष्ठा** – जीवन में पारदर्शिता और ईमानदारी का आधार।
3. **सेवा भावना** – आत्मकल्याण के साथ परोपकार की भावना।
4. **अभय** – निडर होकर धर्म के मार्ग पर चलना।
5. **संतोष** – भौतिक आसक्ति से मुक्ति।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उपनिषदों के नैतिक मूल्यों की प्रासंगिकता :

1. **सत्य** – आज राजनीति, न्यायपालिका और मीडिया में सत्य का आदर्श नैतिक आधार प्रदान करता है।
2. **अहिंसा** – वैश्विक संघर्ष, आतंकवाद और जलवायु युद्ध के युग में अहिंसा ही शांति का आधार है।
3. **आत्मसंयम** – उपभोक्तावाद, नशाखोरी और डिजिटल व्यसनों से ग्रस्त समाज में संयम का मूल्य अत्यंत प्रासंगिक है।
4. **श्रद्धा** – शिक्षा में अनुशासन, गुरु के प्रति विश्वास और परंपरा के प्रति आदर के लिए आवश्यक।
5. **समानता और सहिष्णुता** – विविधता और बहुलता वाले समाज में सामाजिक सौहार्द का आधार।
6. **त्याग और अपरिग्रह** – पर्यावरणीय संकट, जलवायु परिवर्तन और संसाधन–शोषण से बचने का उपाय।

इस प्रकार उपनिषदों की नैतिक दृष्टि केवल मोक्ष या व्यक्तिगत मुक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि सर्वभूतहिताय और विश्वकल्याण की दिशा में अग्रसर है।

उपनिषदों में प्रतिपादित नैतिक मूल्य मानवता की शाश्वत धरोहर हैं।

वे बताते हैं कि ज्ञान वही सार्थक है जो आचरण में उतर सके।

सत्य, अहिंसा, दया, श्रद्धा, आत्मसंयम और त्याग जैसे आदर्श आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने सहस्रों वर्ष पूर्व थे।

वर्तमान वैश्विक संदर्भ में जब भौतिकता, स्वार्थ और हिंसा चरम पर हैं, तब उपनिषदों की नैतिक दृष्टि मानवता को दिशा देने वाली प्रकाश किरण है।

अतः उपनिषदों को केवल दार्शनिक ग्रंथ न मानकर, नैतिक जीवन का संविधान समझना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

संदर्भ सूची :–

1. उपनिषद् संहिता – सम्पा. स्वामी मधवानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता।
2. बृहदारण्यकोपनिषद् – भाष्य सहित, आचार्य शंकर, गीता प्रेस, गोरखपुर।
3. ईशावास्योपनिषद्, कठोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद् – टीका सहित, स्वामी प्रभवानन्द।
4. राधाकृष्णन, एस. – The Principal Upanishads, HarperCollins, Delhi, 1994.
5. हिर्ण्यप्रभा, डॉ. – उपनिषदों का नैतिक दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

6. शर्मा, सी.डी. – भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
7. दासगुप्त, एस.एन. – A History of Indian Philosophy, Cambridge University Press, 1922.
8. गांधी, मोहनदास करमचन्द. – My Religion (Based on Upanishadic Truths), Navajivan Press, Ahmedabad.
9. राधाकृष्णन, एस. – Indian Philosophy, Vol. I- II, Oxford University Press, 1931.
10. देवनाथ, डॉ. विजयकुमार. – उपनिषदों का नीतिदर्शन, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी।
11. टी.एम.पी. महादेवन. – Upanishads : An Anthology, Bharatiya Vidya Bhavan, Mumbai.
12. स्वामी विवेकानन्द. – Jnana Yoga, Advaita Ashrama, Kolkata.
13. कपिल, कृष्ण. – The Moral Philosophy of the Upanishads, Delhi University Press, 1972.
14. अरविन्द, श्री. – The Life Divine, Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry.
15. R. Puligandla. – Fundamentals of Indian Philosophy, Abingdon Press, 1970.

मोबाइल नं 9359001798
ईमेल– pushpendrasify22@rediffmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 8.642

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Sept. 2025 Page No. : 223-227

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आधुनिक समाज के सन्दर्भ में मानवाधिकार में शिक्षा की भूमिका

डॉ. सूर्यप्रकाश (सहायक आचार्य) शिक्षा संकाय,
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय (झाँसी)
डॉ. पुनीत श्रीवास्तव (सहायक आचार्य) शिक्षा संकाय,
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय (झाँसी)

मानव–अधिकार वे अधिकार है जो हमारी प्रकृति या स्वभाव में निहित है। मानव अधिकार और मूलभूत स्वतंत्रताएँ हमें अपने योग्यता के अनुसार पूर्ण रूप से विकसित होने के लिए अवसर प्रदान करती है। इसके द्वारा मानवीय गुणों, प्रतिभाओं तथा चेतना का सदुपयोग किया जाता है। मानव–अधिकार मानव के मर्यादा (Dignity) को सुरक्षा प्रदान करती है एवं नैतिकता को प्रोत्साहित करती है। मानव अधिकार केवल नैतिकता को नहीं उत्पन्न करती बल्कि मानव को अच्छे ढ़ग से जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक मूलभूत स्वतंत्रता को प्रदान करती है। जिससे एक समतामूलक तथा मानवमूलक समाज की स्थापना की जा सके।

शिक्षा मानव विकास का मूल साधन है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति, समाज और राश्ट्र का विकास होता है। शिक्षा के महत्व एवं आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ अपने दस्तावेज 'यूनिवर्सल डिक्लेयरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स 1948' में शिक्षा को सार्वभौमिक मानव अधिकार के रूप में उल्लिखित करता है और अनिवार्य और निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने पर बल देता है। दस्तावेज प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में भी योग्यतानुसार समान अवसर उपलब्ध कराने की स्पष्ट धारणा रखता है।

अपने अधिकारों के बारे में जानना–यह हर इंसान का मूल भूत अधिकार है। हममें से प्रत्येक व्यक्ति को यह जानने का पूर्ण अधिकार है कि उसके लिए भारतीय संविधान में क्या प्रावधान है? उसे किस तरह का जीवन जीना चाहिए।

भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार के वर्ग पाए जाते हैं। यहाँ पर स्त्रियों, बालकों, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के साथ–साथ अन्य पिछड़े वर्ग भी पाए जाते हैं। भारतीय संविधान में प्रत्येक प्रकार के मनुष्यों के लिए विभिन्न प्रकार के अधिकार प्रदान किए गए हैं। इन्हीं अधिकारों को 'मानवाधिकार' की संज्ञा प्रदान की गई हैं। जिस शिक्षा में मानवाधिकारों के बारे में बताया जाता है, उसे 'मानवाधिकार शिक्षा' कहा जाता है।

'मानवाधिकार शिक्षा' से तात्पर्य एक ऐसी शिक्षा से है जो मानवों में बिना किसी भेदभाव के लोकतंत्र की

भावना, भ्रातृत्व एवं समानता की बात करती है। इस शिक्षा में ऐसे कार्यक्रमों एवं क्रियाकलापों को बढ़ावा दिया जाता है जो कि समाज के विभिन्न वर्गों जैसे कि महिलाएँ, बच्चे, युवा, दलित वर्ग, अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग आदि को एक ही समय में आगे ले जाएँ। ये सभी वर्ग अपने–अपने अधिकारों के बारे में जाने ताकि कोई सबल वर्ग उनका शोषण एवं दमन न कर सकें।

जैसा कि

Council of Europe's Human Rights Educational youth Programmes ने परिभाषित किया है– ***"Educational programmes and activities that focus promoting equality in human dignity in conjunction with programmes such as those promoting inter cultural learning participation and empowerment of minorities."***

जिस प्रकार से प्राचीन समय में 'राम–राज्य' स्थापित था–जिसमें कि कोई भी व्यक्ति अमीर–गरीब नहीं था, सभी आपस में एकता के भाव से मिल–जुलकर रहते थे। उनमें कहीं कोई वैमनस्यता नहीं थी। ठीक उसी प्रकार से मानवाधिकार शिक्षा भी एक ऐसे संसार की कल्पना करती है जो मानवों में बिना किसी भेद–भाव के लोकतंत्र, गणतंत्र तथा न्याय एवं बंधुत्व की भावना को बढ़ावा दें।

मानवाधिकार शिक्षा का उद्देश्य :

मानव अधिकार न्याय के प्रत्यय से सम्बन्धित है। 'न्याय' का अर्थ होता है–'सभी के साथ निष्पक्षतापूर्ण व्यवहार करना।'

Universal Declaration of Human-rights की प्रस्तावना में कहा भी गया है–

"Every individual and every organ of society shall strive by teaching and education to promote respect for these rights and freedoms."

सभी मनुष्यों को इस समाज में शान्ति, समरसता तथा एकता के साथ रहने का पूर्ण अधिकार है। प्रत्येक मनुष्य को यह भी अधिकार दिया गया है कि वे अपने आपको समाज का एक प्रतिनिधि माने तथा उसी के अनुसार कार्य करें।

मानवाधिकार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य लोगों को स्वाभिमान के साथ जीना सिखाना है। यह अमीरों एवं गरीबों में बिना किसी भेद–भाव के विकास की बात करती है। इसका उद्देश्य मानवाधिकारों की संस्कृति के विकास से है।

प्रमुख उद्देश्य :–

- मानवाधिकारों के सम्मान को मजबूत करना तथा व्यक्ति को व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्रदान करना अर्थात् यहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान के साथ जीवन जीने का पूर्ण अधिकार है।
- मानवीय प्रतिष्ठा/आत्मसम्मान को मूल्य देना तथा दूसरों की स्वतंत्रता की भावना को महत्व देना।
- दूसरों के अधिकारों का भी सम्मान करना।
- स्त्रियों तथा पुरूषों मे बिना किसी भेदभाव के न्यायिक एकरूपता की बात करना।

- राष्ट्रीय, धार्मिक, भाषायी तथा समुदायों के आधार पर व्यक्तियों के मध्य कोई विभेद न करना।
- उचित नागरिकता का विकास करना।
- लोकतंत्र, विकास, सामाजिक न्याय, सामुदायिक एकरूपता एवं मित्रता की भावना का विकास करना।
- मानवाधिकारों, अन्तर्राष्ट्रीय–समझ, अहिंसा एवं सहन–शक्ति की क्षमता को विकसित करना।

इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि 'मानवाधिकार शिक्षा' का प्रमुख उद्देश्य लोगों में बिना किसी भेदभाव के लोकतंत्र, न्याय तथा भ्रातृत्व की भावना का विकास करना है।

यदि भारतीय समाज में इन उद्देश्यों को पूरा कर लिया जाए तो हम एक नवीन भारत की परिकल्पना कर सकते हैं जिसमें जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति एवं वेश भूषा इत्यादि के आधार पर कोई भेद भाव नहीं किया जायेगा। सभी यहाँ पर मिलजुल कर रहेंगे। सभी अहिंसा, न्याय, शान्ति एवं बंधुत्व की भावना को बढ़ावा देगें।

मानवाधिकार शिक्षा का उद्देश्य स्त्रियों, बालकों तथाा पुरूषों के मध्य बिना किसी भेद भाव के विकास एवं स्वाभिमान की भावना को बढ़ावा देना है।

विद्यालयी पाठ्यक्रम में मानवाधिकार शिक्षा कैसे प्रदान की जाए?

भारतीय समाज में प्राचीन समय से ही धर्म, आध्यात्म एवं योगा के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही साथ यहाँ पर बालकों में नैतिक मूल्यों के विकास पर अत्यधिक जोर दिया गया है।

वैदिक समय से लेकर आधुनिक समय तक समाज में गुरूओं के माध्यम से बालकों में नैतिक मूल्यों का विकास किया जाता था। उन्हें समाज में रहने के विभिन्न तरीके सिखाये जाते थे ताकि वे सभी एक उद्देश्यपूर्ण जीवन जी सके।

बालकों को मानवाधिकार शिक्षा देने का तात्पर्य उन्हें उनके अधिकारों से परिचित कराना है। उनमें शान्ति, लोकतंत्र, न्याय एवं बन्धुत्व की भावना को बढ़ावा देना है।

भारतीय समाज प्रारम्भिक समय से ही इसका पक्षधर रहा है। यहां विद्यालयी पाठ्यक्रम में भी नैतिक मूल्यों की महत्ता पर प्रकाश डाला जाता रहा है। इसके साथ ही साथ विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक एवं सामुदायिक कार्यक्रमों के माध्यम से भी ऐसी गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाता है।

मानवाधिकार शिक्षा एक वृहद प्रत्यय है, जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की गतिविधियाँ सम्मिलित हैं। परिवार, समाज, पड़ोसी, समुदाय, फिल्म, मीडिया, खेल–भूमि इत्यादि के साथ–साथ विभिन्न प्रकार की दूरस्थ संस्थाएं भी इसको प्रदान करने का प्रमुख माध्यम है।

विद्यालयों में खेल–प्रागंण में बातों–बातों में बच्चों को इस शिक्षा के बारे में बताया जा सकता है। विभिन्न प्रकार के नाटकों, खेलों, क्रियात्मक एवं संगीतात्मक गतिविधियों के माध्यम से भी इस दिशा को बढ़ावा दिया जाता है। इस प्रकार से इन गतिविधियों को विद्यालयी स्तर पर, कॉलेज तथा विश्वविद्यालयी स्तर पर करवाने से छात्रों में न केवल सामुदायिक एकता की भावना का विकास अपितु बंधुत्व, भातृत्व, समरसता, लोकतंत्र, न्याय की भावना को भी बल मिलता है।

मानवाधिकार शिक्षा का स्वरूप हमें विभिन्न स्तरों पर दिखाई पड़ता है, जैसे कि नैतिक शिक्षा के पाठ्यक्रम

में साहित्यिक गतिविधियों में।

किन्तु पाठ्यक्रम में इस विषय को सम्मिलित करना है तो इसे एक पृथक् विषय के रूप में मान्यता देनी होगी। मानवाधिकार शिक्षा एक वृहद प्रत्यय है, जिसमें कि मानव–अधिकारों से सम्बन्धित विविध विषयों का ज्ञान निहित है। यदि हम इसे एक अलग विषय के रूप में मान्यता देना चाहते हैं तो हमें अलग से प्रयास करने की जरूरत पड़ेगी।

उपसंहार :

'मानवाधिकार शिक्षा' एक ऐसा उपागम है, जिसमें बालकों को शिक्षा से सम्बन्धित मुद्दों के बारे में बताया जाता है। इसमें व्यक्तिगत एवं पर्यावरण शिक्षा, नागरिकता, विकास, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की शिक्षा, शान्ति एवं कानून से सम्बन्धित शिक्षा का ज्ञान प्रदान किया जाता है।

आधुनिक समाज के संदर्भ में, जहां भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, एकलवाद बढ़ता जा रहा है। ऐसे समय में मनुष्य को अपने अधिकारों के बारे में जाग्रत कराना–यही मानवाधिकार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है।

लोगों में अपने अधिकारों के बारे में जागरूकता बनें। उनमें लोकतंत्र, गणतंत्र, न्याय की भावना को बल मिले। मानवाधिकारों के संदर्भ में यह शिक्षा ओर भी उत्प्रेरित करती हैं। ठीक इसी प्रकार से आधुनिक समय में इसकी उपयोगिता बढ़ती जा रही है।

सन्दर्भ सूची :

1. मीना, कैलाशचन्द्र (मई, 2023) कुरूक्षेत्र, मासिक अंक –7। नई दिल्ली। प्रकाशन विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
2. जैन, आर0 सी0 (अक्टूबर, 2024) प्रतियोगिता दर्पण मासिक अंक 10। आगरा। उपकार प्रकाशन।
3. जैन, आर0 सी0 (नवम्बर, 2024) प्रतियोगिता दर्पण मासिक अंक–10। आगरा। उपकार प्रकाशन।
4. प्रसाद, नीता (सितम्बर 2019) योजना मासिक अंक–9 नई दिल्ली। प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
5. अग्रवाल, अनिल (जनवरी, 2022) मासिक अंक–1। इलाहाबाद। मंथन प्रकाशन।
6. भारत 2012 :सन्दर्भ। नई दिल्ली। प्रकाशन विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।
7. Agarwal, J.C. (2010), Theory and principles of education, vikas publishing House Pvt. Ltd., pp. 5-10.
8. Curle, A. (1969) Human Factor in community Development, Ithaca : Cornell university Press.
9. Egbezor, D.E. & Okanezi, B. (2008) Non-Formal Education as a tool to human resources Development : An Assessment, International Journal of Scientific Research in Education, Vol. 1 (1), pp. 26-40.
10. Kosemani, J.M. (Ed.), (1995) Comparative Education, Emergent National Systems, Port Harcourt, Abe Publishers.

11. N.S., Sreenivasulu, (2008), Human-rights many sides to a coin, Regal publications. pp. 22-25, 240-245
12. Okoh, J.D. (2003), Phislosophy of Education : The Basics, Port Harcourt : Pearl Publishers.
13. Sharma, Yogendra Kumar (Vol. 2), History and problems of Education, Kauishka Publishers Distributors, New Delhi-110002, pp. 216-218.

suryaprakasheducator@gmail.com
Mob.8707457353
svncomputer1@gmail.com
Mob.8737867410

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी रजि. के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395:7115